परिप्रेक्ष्य

शैक्षिक योजना और प्रशासन का सामाजिक-आर्थिक संदर्भ

वर्ष 18, अंक 3, दिसम्बर 2011

राष्ट्रीय शैक्षिक योजना एवं प्रशासन विश्वविद्यालय
17-बी, श्री अरविंद मार्ग, नई दिल्ली-110 016

500 प्रतियां

© राष्ट्रीय शैक्षिक योजना एवं प्रशासन विश्वविद्यालय, 2011
(भारत सरकार द्वारा विश्वविद्यालय अनुदान आयोग अधिनियम 1956 की धारा 3 के अंतर्गत घोषित)

इस पत्रिका का प्रकाशन प्रति वर्ष अप्रैल, अगस्त और दिसंबर माह में किया जाता है। इसकी प्रतियां चुनिंदा और इच्छुक व्यक्तियों तथा संस्थानों को नि:शुल्क भेजी जाती हैं। यह न्यूपा की वेबसाइट: www.nuepa.org पर नि:शुल्क उपलब्ध है। इसे प्राप्त करने के इच्छुक व्यक्ति और संस्थान निम्निलिखित पते पर आवेदन करें :

अकादमिक संपादक

परिप्रेक्ष्य

राष्ट्रीय शैक्षिक योजना एवं प्रशासन विश्वविद्यालय (न्यूपा)
17-बी, श्री अरविंद मार्ग, नई दिल्ली-110 016

राष्ट्रीय शैक्षिक योजना एवं प्रशासन विश्वविद्यालय (न्यूपा) के लिए कुलसचिव, न्यूपा द्वारा प्रकाशित तथा बच्चन सिंह, बी-275, अवन्तिका, रोहिणी सेक्टर 1, नई दिल्ली द्वारा लेजर टाइपसेट होकर मे. अनिल आफसेट एंड पैकेजिंग प्रा. लि., दिल्ली-110007 में न्यूपा के प्रकाशन विभाग द्वारा मुद्रित।

परिप्रेक्ष्य
वर्ष 18, अंक 3, दिसम्बर 2011

विषय सूची

आलेख

के. एन. पणिक्कर
शिक्षा, आधुनिकीकरण और विकास 1

वेटुकुरी पी. एस. राजू
मध्याह्न भोजन कार्यक्रम के कार्यान्वयन में महिलाओं की भागीदारी 17

कुमार संजीव
बिहार के महादलित बालकों की शिक्षा एवं उनका समावेशी विकास 35

प्रवीन देवगन और **रानी यादव**
स्नातक स्तर पर सतत् एवं वार्षिक मूल्यांकन पद्धति का प्रभाव 47

प्रशान्त अग्निहोत्री और **धीरज कुमार रस्तोगी**
ग्राम शिक्षा समितियों की भूमिका एवं उनका उत्तरदायित्व 65

शोध टिप्पणी / संवाद

राजमती वर्मा और **वीनू नागर**
समेकित बाल विकास परियोजना और बाल स्वास्थ्य 95

प्रतीक्षा वर्मा
उच्च प्राथमिक स्तर के पाठ्यक्रम में लैंगिक समानता संबंधी परिवर्तन 111

राकेश राय और **अनीता राय**
शिक्षक अध्यापकों के मूल्यों का तुलनात्मक अध्ययन : 119
लिंग, क्षेत्र और संवर्ग के संदर्भ में

चिंतक और चिंतन

सुमित्रा सिंह
शंकराचार्य का शिक्षा दर्शन 129

परिप्रेक्ष्य
वर्ष 18, अंक 3, दिसंबर 2011

शिक्षा, आधुनिकीकरण और विकास*

के. एन. पणिक्कर**

सारांश

स्वतंत्रता प्राप्ति के बाद की शिक्षा नीति में मौलाना अबुल कलाम आज़ाद के योगदान का महत्वपूर्ण स्थान है। आज़ाद ने एक ऐसी शिक्षा नीति की वकालत की थी जो उदार तथा मानवतावादी हो और राष्ट्र को प्रगति एवं समृद्धि के पथ पर ले जाए। यह मार्ग न तो उपनिवेशी आधुनिकता और न ही सामंती-पारंपरिक व्यवस्था के पुनर्रूत्थान की ओर जाता था। भारतीय नवजागरण और राष्ट्रवाद तथा भारतीय नवजागरण के अंतर्गत जागृत स्वतंत्रता संग्राम के विचारों से ओत-प्रोत, इस शिक्षा नीति का मुख्य उद्देश्य बौद्धिक नि-उपनिवेशीकरण की प्रक्रिया द्वारा भारतीय सभ्यता की अभूतपूर्व क्षमता को आज़ाद करना था। दुर्भाग्यवश विगत कुछ दशकों में इस अधूरे कार्य की जगह, सार्वजनिक हित के स्थान पर निजी लाभ को प्राथमिकता दी जा रही है और सांस्कृतिक तथा बौद्धिक साम्राज्यवाद को बढ़ावा दिया जा रहा है।

प्रस्तावना

देश को एक राष्ट्र बनाने में मौलाना अबुल कलाम आज़ाद का अद्‌भुत एवं उत्कृष्ट योगदान रहा है। उनमें से सर्वोतम योगदान यह है कि उन्होंने देश को एक उपनिवेशी राज्य से स्वतंत्र आधुनिक राष्ट्र बनाने में अग्रणी भूमिका अदा की। वे राष्ट्रीय आंदोलन के अग्रणी नेता थे, धर्मनिरपेक्षता के प्रबल समर्थक, उत्कृष्ट धर्मवेत्ता और शिक्षाविद् थे। इन क्षेत्रों में उनकी उपलब्धि उन्हें राष्ट्रीय महापुरुष का दर्जा हासिल करने के लिए पर्याप्त है।

---

*न्यूपा द्वारा दिनांक 10 नवंबर 2010 को नेहरू स्मारक संग्रहालय और पुस्तकालय में राष्ट्रीय शिक्षा दिवस के उपलक्ष्य में आयोजित मौलाना अबुल कलाम आज़ाद स्मारक व्याख्यान का संपादित संस्करण।

**अध्यक्ष, केरल ऐतिहासिक शोध परिषद, वाइलोप्पिली भवन, नालंदा, तिरुवनंतपुरम-695003
ई-मेल : knpannikar@gmail.com

परंतु उन्होंने इन सभी क्षेत्रों में अपनी अमिट छाप छोड़ी और ऐसे समय में विशिष्ट गुणवत्ता की मिसाल कायम की जब भारतीय सार्वजनिक जीवन के क्षेत्र में विलक्षण और विविध प्रतिभाशाली मनीषी भारतीय और विश्व समाज को अपने नवीनतम योगदान से रोशन कर रहे थे। उनके योगदान को याद करना अपने आपको एक ऐसे युग से गुजारना है जिसमें सेवा और बलिदान सार्वजनिक जीवन की गुणवत्ता थे।

आज़ाद ने इन तीन स्रोतों से अपने मौलिक मूल्य ग्रहण किए थे– साम्राज्यवाद विरोधी आंदोलन, राष्ट्रवाद और धर्मनिरपेक्षरता । तत्कालीन दो प्रमुख मानव विरोधी कुकृत्यों- फासीवाद और साम्राज्यवाद से निपटने के बारे में आज़ाद के 1940 में रामगढ़ के सम्मेलन में भारतीय राष्ट्रीय कांग्रेस के अध्यक्ष के रूप में दिए गए लम्बे और जोरदार संभाषण में उनके विचार बिल्कुल स्पष्ट रूप में उभर कर सामने आते हैं जिसमें सामान्यत: मानवता और विशेषकर भारत के प्रति उनके निहितार्थों को मजबूत ढंग से विश्लेषित किया गया है। उन्होंने अपने संभाषण में इस बात को जोरदार ढंग से उठाया कि साम्राज्यवाद मूलत: अन्याय और दमनकारी था और उनसे कोई उम्मीद रखना गैर मुनासिब होगा। भारतीयों की युद्ध में मदद के नतीजों के बारे में उनकी बेबाक राय थी कि इससे ब्रिटिश हकुमत की सोच में कोई बदलाव नहीं होगा । अपने विचार को स्पष्ट करते हुए उन्होंने कहा– ब्रिटिश मंत्रीमंडल के सदस्यों ने दुनिया को यकीन दिलाने का प्रयास किया है कि ब्रिटिश सरकार अपनी साम्राज्यवादी नीति को समाप्त कर चुकी है और अब वह दुनिया में शांति एवं न्याय स्थापित करना चाहती है। इस घोषणा का भारत से अधिक और कौन स्वीकार कर सकता था परंतु सच्चाई यह है कि इन घोषणाओं के बावजूद युद्ध से पहले ब्रिटिश साम्राज्य का शांति और न्याय के प्रति जो रवैया था, वह आज भी कायम है। उनके ऐसे दावों के सामने भारत की मांग एक कसौटी थी। इसके सामने उनके सब दावे प्रामाणिक रूप से झूठे और नकली साबित हुए। (पणिक्कर, 2009)

आज़ाद अपनी पीढ़ी के उन गिनती के नेताओं में थे जिन्होंने राजनीति के प्रति धार्मिक-पांथिक मनोवृत्ति को तोड़कर राष्ट्रीय दृष्टिकोण से बहुसंख्यक और अल्पसंख्यक के बीच के अंत: संबंधों को मानवीय मूल्यों के अंतर्गत प्रतिपादित किया। वे अपने विचारों से समझौता न करने वाले राष्ट्रवादी नेता थे जिनका विचार था कि मानव समाज में अल्पसख्यक स्वयं प्रकट नहीं होते बल्कि बनाए जाते हैं। अल्पसंख्यक का निर्माण तब होता है जब वे अपनी अल्पसंख्यक स्थिति को महसूस करने लगते हैं या जब बहुसंख्यक

समाज उनके साथ ऐसा व्यवहार करने लगता है। एक ऐसा समय था जब मुस्लिम समुदाय पर धार्मिक राजनीति का दबदबा था। परंतु आज़ाद ने धर्मनिरपेक्षता को एक ऐसी बुनियाद के रूप में प्रोत्साहित किया जिस पर मुसलमान अपनी राजनीतिक नियति बना सकते हैं। वे उप-महाद्वीपीय सांस्कृतिक एकता पर यकीन करते थे, इसलिए उन्होंने विभाजन का पुरजोर विरोध किया। अपनी विवादित पुस्तक-'इंडिया विन्स फ्रीडम में उन्होंने विभाजन पर अपना दु:ख व्यक्त करते हुए लिखा– विभाजन भारत के लिए एक त्रासदी थी और एक बात जो इसके पक्ष में कही जा सकती थी वह यह थी कि हमने विभाजन को रोकने के लिए बहुत हद तक कोशिश की लेकिन हम असफल रहे– हमें यह नहीं भूलना चाहिए कि राष्ट्र एक है और इसका सांस्कृतिक जीवन एक है और एक रहेगा। आज़ाद सामान्यत: धर्मशास्त्र और विशेषकर इस्लाम धर्म के प्रकांड विद्वान थे और व्यक्तिगत तथा सामाजिक जीवन में धर्म के महत्व और वास्तव में उसकी विभिन्न भूमिकाओं के प्रति वे बहुत सजग थे। वे धार्मिक ज्ञान को महत्वपूर्ण स्थान देते थे और इसलिए वे सर्व-धर्म शिक्षा के प्रबल समर्थक थे न कि धार्मिक शिक्षा के। निष्ठावान मुस्लिम होते हुए भी उन्होंने धर्म को राजनीति से दूर रखा और जीवनपर्यंत सतत और अडिग रूप से धर्मनिरपेक्ष राष्ट्रवाद के पक्ष में खड़े रहे और उसको बढ़ावा दिया। उनका यही दृष्टिकोण सच्चे मायने में देश को जनतांत्रिक बना सका।

स्वतंत्र भारत में शिक्षा मंत्री के रूप में आज़ाद के सम्मुख समग्र शिक्षा नीति के निर्माण और कार्यान्वयन की भारी चुनौती थी। उस दौरान सरकार मौजूदा आर्थिक स्थिति और विभाजन के बाद विस्थापितों के पुनर्वास की समस्याओं से जूझ रही थी। इन स्थितियों में यह स्वाभाविक था कि शिक्षा तथा अन्य ऐसे दूसरे क्षेत्रों की ओर अपेक्षाकृत कम ध्यान दिया गया। इसके बावजूद आज़ाद ने राष्ट्रीय शिक्षा प्रणाली के नवनिर्माण से जुड़ी कठिनाइयों को दूर करने के प्रयास किए । इस क्रम में उन्होंने विरासत में मिली उपनिवेशी शिक्षा प्रणाली की विषय वस्तु और सम्प्रेषण की भाषा (शिक्षा का माध्यम) को बदलने पर विशेष बल दिया। उन्होंने तत्कालीन प्रचलित शिक्षा प्रणाली को बहुत ही रोचक तरीके से परिभाषित किया– गैर भारतीय द्वारा स्थापित भारत विरोधी शिक्षा प्रणाली (आजाद 1959, पृ.1)। उन्होंने उपनिवेशी शिक्षा प्रणाली पर तर्क देकर मुख्य आरोप यह लगाया कि वर्तमान शिक्षा प्रणाली राष्ट्रीय प्रतिभा के विकास को आगे नहीं बढ़ा रही है। इस समीक्षा का महत्व केवल शिक्षा के उपनिवेशी चरित्र के प्रति इसकी

संवेदनशीलता तक सीमित नहीं था बल्कि इसका सर्वाधिक महत्व इस दृष्टि से भी था कि भारतीय बुद्धिजीवी 19वीं सदी से ही इससे अवगत थे। उपनिवेशवादी व्यवस्था द्वारा प्रतिनिधित्व करने वाली व्यवस्था में प्रासंगिक ज्ञान के महत्व को नज़रअंदाज किये बिना बौद्धिक नि-उपनिवेशवाद के लिये इसके निहितार्थ महत्व की बात थी। उन्होंने यह स्वीकार किया कि उपनिवेशी शिक्षा व्यवस्था ने विज्ञान एवं आधुनिक प्रौद्योगिकी की एक नई दुनिया का मार्ग प्रशस्त किया। इससे प्रगतिशील सोच, विचारधारा एवं भावना का विकास हुआ और भारतीय शिक्षा का स्तर बढ़कर विश्वस्तरीय हो गया। इससे राष्ट्रीयता की भावना की जागृति पैदा हुई और विश्व के सभी मामलों के प्रति आधुनिक तथा प्रगतिशील नज़रिया का विकास हुआ (आज़ाद 1959)। उन्होंने उपनिवेशी आधुनिकता और देसी पारंपरिक शिक्षा व्यवस्था के बीच एक अंतराल पाया और दोनों के बीच शिक्षा व्यवस्था का विकास करने का प्रयास किया। एक ऐसी वैकल्पिक व्यवस्था जो पश्चिम के उपनिवेशी विषयवस्तु और विचारधारा और पारंपरिक शिक्षा व्यवस्था के अवैज्ञानिक तथा अप्रासंगिक तत्वों को छोड़कर प्रगतिशील ज्ञान-विज्ञान से युक्त हो। यद्यपि इसका अभिप्राय यह नहीं था कि वह बौद्धिक संभावनाओं के प्रति आश्वस्त नहीं थे जो उपनिवेशी व्यवस्था से प्राप्त कर सकते हैं। आज़ाद ने जिस वैकल्पिक व्यवस्था की वकालत की थी वह शिक्षा व्यवस्था उदार एवं मानवतावादी शिक्षा व्यवस्था थी जो लोगों की सोच एवं समझ में बदलाव करती है और देश को प्रगति एवं समृद्धि के रास्ते पर ले जाती है। आज़ाद ने जिस शिक्षा व्यवस्था की वकालत की थी वह न तो उपनिवेशी आधुनिक शिक्षा को जारी रखने और न ही देसी पारंपरिक शिक्षा व्यवस्था के पुनर्रूत्थान की पक्षधर थी। आधुनिकता के एक अभिन्न हिस्से के रूप में शिक्षा के महत्व को स्वीकार करते हुए मौलाना आज़ाद ने जिस शिक्षा नीति को प्रतिपादित किया वह आधुनिक समाज की नींव स्थापित करने के लिए पूर्णत: सक्षम थी। वह उपनिवेशवादी शिक्षा के मंसूबों से बिलकुल अलग थी। वह एक ऐसी वैकल्पिक पद्धति थी जिसकी जड़ें नवजागरण और राष्ट्रवाद के अंतर्गत देखी जा सकती हैं जिसने सार्वभौमिक मूल्यों के संदर्भ में आधुनिकता को कल्पित करने के प्रयास किए। ऐसी पृष्ठभूमि में राष्ट्रीय पद्धति के निर्माण का कार्य अभी भी बहुत वृहद और चुनौतीपूर्ण बना हुआ है। इसका कारण संभवत: भारतीय मध्यम वर्ग का सांस्कृतिक और बौद्धिक सोच है जिसकी जड़ें उपनिवेशी आधुनिकता में देखी जा सकती हैं। वर्तमान में जो अभिजात उन्मुख शैक्षिक सुधार किया जा रहा है वह मध्यम वर्ग की अभिरुचियों और आंकाक्षाओं के अनुरूप है।

शिक्षा में वैकल्पिक आधुनिकता के लिए प्रयास

उपनिवेशी शासन द्वारा भारत के एक छोटे से वर्ग को उपनिवेशी हित साधक विषयों में शिक्षा देने के जो प्रयास शुरू किए गए उसका एकमात्र उद्देश्य भारतीय समाज में एक ऐसे वर्ग का निर्माण करना था जो उपनिवेशी संस्कृति और सोच से परिपूर्ण हो जाए और जो उपनिवेशी प्रशासनिक औज़ार के रूप में उपनिवेशी आधुनिकता का प्रसार भी करे। शिक्षा की इस नई प्रणाली ने उदार अभिजात मध्यम वर्ग को आकर्षित किया जो पारंपरिक सामंती व्यवस्था से अलग रूप में प्रकट हुई। इसकी पुष्टि राजा राममोहन राय द्वारा 1824 में लार्ड अम्हर्स्ट को भेजे गए पत्र में उनकी राय से होती है। इससे साफ जाहिर है कि इसके प्रभाव से मध्यम वर्ग की सोच और रुझान में क्या बदलाव हो रहा था। राजा राममोहन राय को यह नई शिक्षा प्रणाली पश्चिम की विज्ञान शिक्षा के साथ उदार और ज्ञान ज्योति से परिपूर्ण शिक्षा नज़र आई जो व्याकरणिक परिष्करणता और तत्वमीमांसीय विशिष्टता से युक्त भारतीय पारंपरिक व्यवस्था पर भारी थी। (राजा राममोहन राय 1906, पृ. 471–74) यद्यपि केवल विषयवस्तु निर्णायक घटक नहीं था। शिक्षा व्यवहार में खुलापन भी समान रूप से महत्वपूर्ण था। भारत का सामाजिक इतिहास एकलव्य के समय से 21वीं सदी तक धर्म तथा जाति के आधार पर भेदभाव के मिसालों से परिपूर्ण है। उपनिवेशी नई शिक्षा प्रणाली ऐसे प्रतिबंधों से ऊपर और मुक्त प्रणाली थी। सरकार द्वारा समर्थित और मिशनरियों द्वारा संचालित स्कूलों में जाति, नस्ल और धर्म के भेदभाव बिना प्रवेश मिल सकता था। इसके परिणाम स्वरूप उच्च जातियों के विरोध के बावजूद पारंपरिक रूप से बहिष्कृत समूहों ने इस शिक्षा का लाभ उठाया जिसके कारण समाज के कुछ वर्गों की सामाजिक गतिशीलता को बढ़ावा मिला और कुछ सीमा तक निम्न जातियों को भी सामाजिक गतिशीलता के अवसर मिले। अधिकांश भारतीय भाषाओं के आरंभिक उपन्यासों में इस सामाजिक बदलाव की प्रक्रिया को प्रत्यक्ष या अप्रत्यक्ष रूप से समाविष्ट किया गया। मिसाल के तौर पर 19वीं सदी के मलयाली उपन्यास, *सरस्वती विजयम* में पारंपरिक दमनकारी दशाओं और उपनिवेशी एजेंसियों द्वारा निम्न जातियों के लिए शिक्षा का द्वार खोलने तथा शिक्षा की मुक्तदायी शक्ति के बीच अंतर्द्वंद्व और विरोधाभास को मार्मिक ढंग से उजागर करता है।[2] इस उपन्यास के लेखक पाथेरी कुंहाम्बू निम्न जाति के थे। उन्होंने अपने उपन्यास में दलितों के लिए शिक्षा की नई दुनिया खोलने में मिशनरियों तथा सरकारी संस्थानों की भूमिकाओं पर प्रकाश डाला है। लेखक ने यह उजागर किया

[2] पाथेरी कुंहाम्बू, सरस्वती विजयम, प्र. सं. 1892, कन्नौर

है कि शिक्षा से जो स्थिति बनी है इससे भूमि नियंत्रण पर आधारित पारंपरिक शक्ति समीकरण कमजोर पड़ रहा है। कुंहाम्बू के चरित्रों की उपलब्धि और पराजय में बदलाव को जीवंत रूप में देखा जा सकता है। निम्न जाति के लिए वर्जित गाना गाने पर एक युवा दलित जिसका नाम मर्थन है, पर जान लेवा हमला किया जाता है और उसे मरने के लिए छोड़ दिया जाता है। एक मिशनरी की मदद से वह युवक शिक्षा ग्रहण करता है और ब्रिटिश सरकार में उसे नौकरी मिलती है और वह जज बन जाता है। दलित लड़के की हत्या का आरोपी भूस्वामी को उसके न्यायालय में उसके सामने पेश किया जाता है जहाँ वह अपनी पहचान साबित करते हुए उसे क्षमा कर देता है। उपनिवेशी नई शिक्षा प्रणाली से केवल मध्यम वर्ग का बुद्धिजीवी ही प्रभावित नहीं था बल्कि समय के साथ समाज के अन्य वर्ग भी इसकी ओर आकर्षित हो रहे थे। इसके परिणामस्वरूप समाज के वंचित वर्ग को उपनिवेशी शिक्षा प्रणाली में अपनी मुक्ति का माध्यम नज़र आने लगा। अत: पारंपरिक शिक्षा प्रणाली के अधीन वंचित वर्गों के सामाजिक अनुभव और उपनिवेशी संस्थानों में उनके प्रति बराबरी के व्यवहार के बीच अंतर्विरोध से अनेक वंचित वर्गों को उपनिवेशवाद में मुक्ति की संभावना दिखाई दी। आज भी कुछ दलित बुद्धिजीवी सवर्ण प्रभुत्ववाली समकालीन व्यवस्था से उपनिवेशी शासन को बेहतर मानते हैं।

इस प्रकार के बदलावों में एक उल्लेखनीय बदलाव यह था कि मध्यमवर्ग के साथ-साथ पारंपरिक रूप से वंचित और दलित वर्ग ने इस बदलाव को विभिन्न रूपों में समझते हुए इसे आधुनिकता की संज्ञा दी। इस संबंध में महत्वपूर्ण बात यह है कि उन्होंने अपने-अपने भविष्य की आकांक्षा के अनुरूप इस बदलाव की व्याख्या की। ऐसे सोच के पीछे दो कारण थे। पहला, ऐसे समाज में जहाँ शिक्षा के अवसर जाति विशेष में जन्म लेने से तय होते थे, वहाँ उपनिवेशी शिक्षा के सार्वजनिक स्वरूप ने सैद्धांतिक रूप से मुक्त शिक्षा की अनुमति दी। यह सभी के लिए एक विचारोत्तेजक शुरुआत थी। दूसरा, नई पाठ्यचर्या में वैज्ञानिक ज्ञान शामिल किया गया था जो पारंपरिक शिक्षा प्रणाली में नहीं था। इससे ज्ञान की अनजान दुनिया का रास्ता खुला। इस संबंध में सर्वोपरि यह था कि लोगों को उपनिवेशी शासन की भाषा सीखने का अवसर मिला जिसमें सामाजिक गतिशीलता की उम्मीद दिखाई गई थी।

यह सम्मोहक बदलाव समाज के मुट्ठीभर लोगों तक ही सीमित था। इसने उपनिवेशी व्यवस्था की सच्चाई को पूरी तरह जाहिर नहीं किया। उपनिवेशी शासन द्वारा दी जा रही

शिक्षा जेम्स स्कॉट के शब्दों में प्रभुत्व की छुपी इबारत थी।[3] सामाजिक पहुँच से दूर होते हुए, वह आधुनिकता जिसे उपनिवेशवाद ने शिक्षा के जरिए समाज के बहुत छोटे वर्ग तक पहुंचा पाई यद्यपि देश के विभिन्न हिस्सों में देसी शिक्षा के सर्वेक्षण से यह दिखाई पड़ता है कि जाति और धर्म के आधार पर प्रतिबंधित किए जाने के बावजूद पारंपरिक शिक्षा का विस्तार उपनिवेशी शिक्षा प्रणाली से कहीं अधिक था। (अदम, 1941)

मध्य वर्ग के बीच पश्चिमी शिक्षा के आकर्षण का मुख्य कारण इसकी वैज्ञानिक विषयवस्तु थी। परंतु इसके व्यवहारिक पक्ष की सच्चाई यह थी कि पाठ्यचर्या में मात्र विज्ञान की प्रारंभिक शिक्षा को ही शामिल किया गया था और विज्ञान की ओर महत्ती आकांक्षा के प्रति सरकार उदासीन थी। नई शिक्षा पद्धति के अंतर्गत विज्ञान की उच्च शिक्षा में भारतीय मनीषा की जो अकांक्षा थी, वह उपनिवेशी सरकार की प्राथमिकता नहीं थी। कोलकाता में इंडियन एसोसिऐशन फार कल्टीवेशन आफ साइंस के संस्थापक श्री महेंद्र सरकार ने इसके पीछे की मूल भावना को इस प्रकार व्यक्त किया है: हमें जिसकी जरूरत है, वह है वैज्ञानिक बौद्धिकता न कि दुर्घटना के कारण वैज्ञानिक युग में पहुंचा व्यक्ति। चूँकि उपनिवेशी सरकार की न तो वैज्ञानिक ज्ञान की उच्च शिक्षा में रुचि थी न ही इसके प्रसारण में। उससे ऐसी उम्मीद की संभावना बिल्कुल नहीं थी।

आरंभ में भारतीय मनीषा ने नई शिक्षा प्रणाली का बड़े उत्साह से स्वागत किया परंतु उसे शीघ्र ही यह अनुभव हुआ कि राष्ट्रीय स्तर पर जिस आधुनिकता की आवश्यकता है वह इसका विकल्प नहीं है। इसके परिणामस्वरूप उपनिवेशी आधुनिकता की आलोचना उभरकर सामने आई जिसकी प्रारंभिक अभिव्यक्ति शिक्षा के क्षेत्र में हुई। उपनिवेशी शिक्षा में असंतुष्टि के कारण राष्ट्रीय शिक्षा प्रणाली की अवधारणा और निजी पहल के जरिए उसके कार्यान्वयन की दिशा में प्रयास किए जाने लगे। आरंभ में 19वीं सदी में अक्षय कुमार दत्त से लेकर 20वीं सदी में महात्मा गांधी द्वारा वैकल्पिक शिक्षा प्रणाली की चाह ने भारतीयों को सतत् उद्वेलित करता रहा। महात्मा गांधी ने कहा कि अगर आमजन सही मायने में राष्ट्रीय शिक्षा के महत्व को समझ लेंगे और उसका आनंद लेने लगेंगे तो सरकारी स्कूल खाली हो जाएंगे। सरकारी स्कूलों में लोग तब तक नहीं आएंगे जब तक

[3] अगर निर्बल सबल के सामने मुखौटे में रहने के लिए विवश है तो सबल की भी अपने अधीनस्तों के बची मुखौटा लगाने के उसकी अपनी विवशता होती है। अत: सबल की खुली इबारत और छुपी इबारत के बीच अंतर होता है (स्काट, 1990, पृ. 10)

कि वे राष्ट्रीय आदर्शों के अनुरूप अपने आपको पूरी तरह बदल न लें। इसके परिणाम स्वरूप देशभर में राष्ट्रीय शिक्षा के लिए प्राथमिक स्कूलों से लेकर विश्वविद्यालय तक के संस्थान स्थापित किए गए जो पूरी तरह राष्ट्रीय शिक्षा के लिए प्रतिबद्ध थे और वे उपनिवेशी शिक्षा से बिल्कुल अलग राष्ट्रवादी शिक्षा प्रदान करते थे।

उपनिवेशी शिक्षा की आलोचना की अभिधारणा यह थी कि उपनिवेशी शिक्षा प्रणाली अपने प्रभाव से अराष्ट्रीयकरण कर रही थी और समाज में एक ऐसे वर्ग का निर्माण कर रही थी जो राष्ट्रीय संस्कृति से अलग-थलग हो और सामाजिक रूप से अपने देशवासियों से दूरी बनाकर रहे। इसका बंकिमचंद ने एक रेखाचित्र बनाया था जिसमें एक बंगाली बाबू एक बंदर से अंग्रेजी में बात कर रहा है और इसके प्रतिक्रिया स्वरूप बंदर उसे लात मार रहा है। यद्यपि यह अतिश्योक्तिपूर्ण चित्रण हो सकता है मगर इस संदेश से उपनिवेशी शासन का असली चेहरा उजागर हुआ और समाज पर इसका गहरा प्रभाव रहा।

वैकल्पिक शिक्षा प्रणाली की मुख्य विशेषता जन शिक्षा थी जो मातृभाषा में दी जाती थी और विज्ञान शिक्षा उसका अभिन्न अंग थी। उपनिवेशी काल में भारतीय बुद्धिजीवी उपनिवेशी शिक्षा प्रणाली में शामिल रहते हुए भी निरंतर एक वैकल्पिक प्रणाली की खोज में लगा रहता था जिससे राष्ट्र की सांस्कृतिक एवं बौद्धिक व्यक्तित्व को पुन:स्थापित किया जा सके। यहाँ तक कि अंगलोफिल यंग बंगाल के सदस्यों जो कि पारंपरिक पद्धति के घोर विरोधी थे, भी किसी भी भारतीय शिक्षा प्रणाली में शास्त्रीय विषयों या भाषाओं को शामिल करने पर खास जोर देते थे। अत: इस बात पर आम सहमति यह थी कि राष्ट्रीय संस्कृति और भाषाओं को कायम रखे बिना आधुनिकता मात्र दिखावा बनकर रह जाएगी। महात्मा गांधी का शिक्षा दर्शन भारतीय समाज की विशिष्ट संस्कृति पर आधारित था जैसा कि शांति निकेतन में रविन्द्रनाथ टैगोर ने कार्य व्यवहार में अपनाया था। आज़ाद ने इसे पुरजोर तरीके से अभिव्यक्त किया– ''कोई भारतीय भाषा नहीं बल्कि अंग्रेजी जो हम सभी के लिए एक विदेशी भाषा थी को शिक्षण का माध्यम बनाया गया।'' इसका परिणाम यह हुआ कि भारत में आधुनिक शिक्षा गैर-भारतीय तरीके से दी जाने लगी। भारतीयों के मन-मस्तिष्क में मौलिकता की बजाय कृत्रिम बौद्धिकता का विकास होने लगा। इससे उन्हें न केवल अपनी भाषा बदलनी पड़ी बल्कि उनकी सोच में परिवर्तन भी हुआ। सीखने के विभिन्न विषयों का संपूर्ण माध्यम विदेशी भाषा थी। प्रत्येक भारतीय

बच्चे के लिए आवश्यक हो गया कि वह कृत्रिम मस्तिष्क अवस्था में अप्राकृतिक दृष्टि से सीखने के प्रत्येक पक्ष से निपटे। वह प्रकृतिस्थ मस्तिष्क प्रक्रिया के तहत सीखने की स्वाभाविक स्थिति से नहीं गुजर सकता था। यह एक चिंता का विषय है कि आज भारत पूंजीवादी आधुनिकीकरण को अंधाधुंध अपनाने के कारण अपनी विशिष्ट पहचान निरंतर खोता जा रहा है।

आज़ादी के बाद जवाहरलाल नेहरू और अबुल कलाम आज़ाद सरीखे राजनीतिक और बौद्धिक रूप से निष्ठावान राजनेताओं के नेतृत्व में राष्ट्र निर्माण का कार्य नि–उपनिवेशीकरण की अनिवार्यता के प्रति संवेदनशील था। भारतीय गणराज्य के आरंभिक दिनों में शिक्षा के क्षेत्र में लगभग सभी नीतिगत बयानों में इस दृष्टिकोण को विविध परिप्रेक्ष्यों में अभिव्यक्त किया गया। वर्ष 1966 में प्रो. डी.एस. कोठारी की अध्यक्षता में गठित राष्ट्रीय आयोग की रिपोर्ट जो शिक्षा से जुड़े विकास तथा सामाजिक रूपांतरण की समस्याओं से संबंधित थी और इसमें भावी कार्यान्वयन की व्यापक योजनायें समाविष्ट थीं। इस रिपोर्ट में देश की भावी शिक्षा के स्वरूप के बारे में उत्कृष्ट रूपरेखा बनाई गई है जो शिक्षा के व्यापक प्रकृति को प्रकट करती है। यह आश्चर्य की बात नहीं है कि इसके अधिकांश भाग अभी भी कार्यान्वित नहीं हो पाये है। इस रिपोर्ट में स्पष्ट रूप से कहा गया है कि उपनिवेशी शासन में सामंती और पारंपरिक समाज द्वारा तय सीमाओं के अंतर्गत स्थापित शिक्षा व्यवस्था को आधुनिक जनंतात्रिक तथा समाजवादी समाज के विकास के प्रयोजन हेतु बदलना होगा। इसमें किसी प्रकार की छूट देने की आवश्यकता नहीं है। आयोग की रिपोर्ट में शिक्षा द्वारा मानव संसाधनों के विकास को प्राथमिकता दी गई– भौतिक संसाधनों का विकास उतना ही जरूरी है जितना कि शिक्षा के द्वारा मानव संसाधनों का पर्याप्त विकास। इसके बिना पर्याप्त भौतिक विकास संभव नहीं है। ऐसा करते हुए पश्चिम की सभी अच्छाईयों को स्वीकार करने के साथ–साथ अपने पारंपरिक संस्कृति के मूल्यवान अवयवों को बचाए रखने की भी आवश्यकता है। देश को इसके लिए सतत् प्रयास करने चाहिए। ऐसा सामंजस्यपूर्ण दृष्टिकोण देश की राष्ट्रीय नीति में तब तक प्रभावकारी रही जब तक भारतीय सत्ता वर्ग ने न उदारवादी नीतियों को अपना लिया जो उदार पंथ निरपेक्ष और वैश्विक विचारों पर आधारित था। इसमें दो भिन्न तरीकों से विस्थापन हुआ। पहला भारतीय जनता पार्टी के नेतृत्व में दक्षिण पंथ के शासन के दौरान और दूसरा कांग्रेस के नेतृत्व में संयुक्त प्रगतिशील गठबंधन सरकार के दौरान

विस्थापन हुआ। भारतीय जनता पार्टी के नेतृत्व में दक्षिण पंथ सरकार ने पारंपरिक ज्ञान को महत्व दिया और शिक्षा व्यवस्था को उसी के अनुरूप ढालने के प्रयास किए जबकि संप्रग ने पश्चिम की उपलब्धियों को ही शिक्षा का आधार माना। दोनों ने राष्ट्रीय स्वाधीनता संघर्ष की परंपरा – उपनिवेशवाद विरोधी और पारंपरिक विरोधी आंदोलन जो कि नवजागरण और स्वतंत्रता संग्राम के द्वारा एक मुखर स्वर रूप में विकसित हुआ था, को न केवल छोड़ा बल्कि अतीत की रोमानियत का या पश्चिम की आधुनिकता का अंधानुकरण किया। दक्षिण पंथ अपना राजनीतिक प्रभाव खोता जा रहा है परंतु कांग्रेस अपनी शिक्षा नीति को आगे बढ़ा रही है। जाहिर है कि मुक्तद्वार नीति के अंतर्गत भारत शिक्षा के नवाचार और पुनर्जीवन के लिए अपनी सीमाओं से बाहर की ओर झांक रहा है।

आधुनिकीकरण और मुक्तद्वार की नीति

भारत की मुक्त द्वार की नीति जिसे भारत ने पिछले कुछ दशकों में अपनाया है, के पीछे पूंजीवादी आधुनिकीकरण का तर्क रहा है। सत्ता वर्ग का मानना है कि आधुनिकीकरण के लिये और विशेषत: *नॉन मेरिट* उत्पाद जैसे उच्च शिक्षा के लिये संसाधनों की लामबंदी संभव नहीं है। इसलिये सरकार ने सामाजिक क्षेत्रों से धीरे-धीरे अपने को अलग होने की वकालत की तथा यह नीति अपनाई जिससे अंतर्राष्ट्रीय पूंजी तथा निजी राष्ट्रीय उद्यमियों को अधिक आज़ादी मिल सके। यह आशा कि गई कि भारत आकर्षित पूंजी द्वारा अपनी व्यवस्था को नवीन बना लेगा, परंतु बहुराष्ट्रीय कंपनियों से सहयोग की शर्तें लगी हुई थी : विदेशी निवेश को बढ़ावा देने हेतु अर्थव्यवस्था तथा प्रशासन में अधिकाधिक संगठनात्मक परिवर्तन, अंतर्राष्ट्रीय व्यापार तथा अन्य कार्यों से संबंधित राष्ट्रीय नीतियों को विश्व संगठनों के अनुरूप कार्य करवाना तथा बहुचर्चित (मोस्ट फेवर्ड नेशंस) सिद्धांत को लागू करना। इस प्रकार के समझौते लागू हुये, जिससे घड़ी की सुईयां पीछे चली गई, और देश में एक नये तरह का उपनिवेशवाद प्रारंभ हो गया, जो सीमाओं के अतिक्रमण वाले उन्नीसवीं शताब्दी के उपनिवेशवाद से भिन्न था। समकालीन उपनिवेश्वाद की प्रक्रिया 'समानता' की संधि, राजनैतिक साझेदारी तथा सांस्कृतिक बुद्धिजीवी सहयोग से परिलक्षित होता है। न केवल सत्ता वर्ग के लिये बल्कि मध्यम वर्ग के लिये भी नव उपनिवेशवाद के आधुनिक लाभ बहुत आर्कषक हैं। वास्तव में वे 'आधुनिक' दशाओं का 'उत्सव' और 'जश्न' मनाते हैं जिनसे उन्हें समता, सामाजिक न्याय तथा समाजवाद के नाम पर दूर रख गया था। पूंजीगत अर्थव्यवस्था

ने आधुनितकता तथा समृद्धि के द्वीप की रचना की है। विश्वस्तरीय एयरपोर्ट, वातानुकूलित माल (खाने-पीने की वस्तुओं सहित), विश्वस्तरीय विश्वविद्यालय, टी.वी. स्टूडियो तथा संसद में करोड़पति इत्यादि। इस आधुनिकतावाद के उपभोक्ता और सहायक मध्यम वर्ग से हैं जो उपनिवेशवादी शिक्षा से बाहर निकलकर बाद में स्वतंत्र भारत में विशिष्ट उच्च शिक्षा के लाभ द्वारा पोषित हुआ है। भूमंडलीकरण के बाद से मध्यम वर्ग का समूह शिक्षा नीति को अपने लाभ के अनुसार परिवर्तित करने की स्थिति में है। उच्च शिक्षा में वर्तमान परिवर्तन उनकी आकांक्षाओं को परिलक्षित करता है जो आज़ाद, कोठारी तथा अन्य शिक्षाविदों की आजादी पश्चात उनके द्वारा सोची गई शिक्षा के चरित्र और अभिविन्यास से बहुत भिन्न है।

आज शिक्षाविदों के बीच आम राय है कि शिक्षा के वर्तमान व्यवस्था में तुरंत परिवर्तन होना चाहिये। हालांकि, देश उपनिवेशवाद के दिनों से बहुत आगे निकल गया है परंतु पहुंच समुदाय की जरुरतों को पूरा करने वाली वांछित स्तर से बहुत पीछे है और न ही गुणवत्ता विकास के स्तर तक पहुंच पाई है। भौतिक संरचना, बौद्धिक संसाधन, शिक्षकों की गुणवत्ता तथा शिक्षाशास्त्रीय व्यवहार के रूप में व्यवस्था की आधुनिकता को स्वीकारते हुये ज्ञानपरक समुदाय का निर्माण राज्य का प्रथम लक्ष्य है। रिपोर्टों की श्रृंखला तथा प्रस्तावित अधिनियम इस इच्छा को पूर्ण करते हैं। सरकार द्वारा सुधारों के लिये योजना हेतु गठित राष्ट्रीय ज्ञान आयोग ने उच्च शिक्षा के महत्वाकांक्षी विस्तार की संस्तुति की है और 1500 विश्वविद्यालयों की स्थापना के अविश्वसनीय लक्ष्य की सिफारिश भी की है। आयोग द्वारा नियमित वृद्धि और विस्तार का उद्देश्य 'विस्तार, उत्कृष्टता तथा समेकन' था जिससे कि आर्थिक विकास तथा सामाजिक प्रगति हो सके। प्रो. यशपाल समिति द्वारा प्रस्तुत रिपोर्ट मुख्यत: स्वरूप में अकादमिक अधिक थी तथा उच्च शिक्षा के पुनर्निर्माण पुनरूत्थान के लिये महत्वपूर्ण सुझाव दिये गये। इन संस्तुतियों के परिणामस्वरूप सरकार ने जिस शिक्षा नीति को अपनाया, जो कि संसद के सामने रखे विभिन्न अधिनियमों से परिलक्षित होता है, की तीन विशेषताएं हैं : केंद्रीयकरण, निजीकरण तथा विदेशी शैक्षिक प्रदाताओं का प्रवेश। प्रस्तावित राष्ट्रीय उच्च शिक्षा तथा अनुसंधान परिषद इसका पहला उदाहरण है, दूसरा, योजना आयोग का निजी-सार्वजनिक साझेदारी पर दस्तावेज : तथा तीसरा विदेशी निजी शैक्षिक प्रदाताओं के प्रवेश हेतु बिल। यह कदम दो दशक पहले उठाये गये आर्थिक सुधारों के अनुरूप हैं। इस नई नीति के पीछे मुख्य कारण निजीकरण है जो कि वैश्विक

शिक्षा तथा बौद्धिक लेन-देन में प्रभावी भागीदारी हेतु आवश्यक दशा है। परिणामस्वरूप, उत्कृष्टता प्राप्त करने हेतु आधुनिकीकरण का मुख्य लक्ष्य उच्च शिक्षा का उच्च स्तर रहा है। इस प्रकार प्राथमिकता उन संस्थानों के विस्तार और सुधारों को दी गई जो अंतर्राष्ट्रीय मानकों को धारण करेंगे। इस प्रकार भारतीय प्रौद्योगिकी संस्थान, भारतीय प्रबंधन संस्थान, अंतर विश्वविद्यालय अनुसंधान केंद्र, कई नवीन केन्द्रीय विश्वविद्यालय और इन सबके उपर एक विश्वस्तरीय विश्वविद्यालय जिसे आजकल नवाचारी विश्वविद्यालय भी कहा जा रहा है की योजना बनाई गई है। यह वास्तव में बड़े ही स्वागत योग्य कदम हैं, परंतु निचले स्तर पर स्नातक और पोस्ट ग्रेजुएट टीचिंग में इस प्रकार के प्रयासों की कमी है। यह व्यवस्था विशिष्ट ज्ञान को प्राप्त कर रहे अभिजात वर्ग को और सुदृढ़ करेगी । अगर समता तथा न्याय के प्रश्न को पर्याप्त रूप से नहीं उठाया गया तो आधुनिक परिक्षेत्रों के सामाजिक निहितार्थ विशेषाधिकार वाले व्यक्तियों के सामाजिक तथा राजनैतिक शक्तियों को स्थायित्व प्रदान होगा।

तब आधुनिकीकरण एक उच्च रूप से बिगड़े स्वरूप वाला तथा दमनकारी होगा। नई नीति के क्रियान्वयन हेतु लिये गये प्रारंभिक कदमों में सह संभावना स्पष्ट रूप से झलकती है।

ग्यारहवीं पंचवर्षीय योजना में उच्च शिक्षा में नई नीति को सम्मिलित किया गया है तथा आधुनिकता की परियोजनाओं के बीच अंत संबंधों को भी उल्लेखित करती है। यह योजना उच्च शिक्षा को अप्रत्याशित रूप से महत्व देती है, शायद उभरते हुये ज्ञान समुदाय में महत्ता को देखते हुये। दसवीं योजना से आवंटन नौ गुणा अधिक है। यह बढ़ोतरी 15 प्रतिशत के सकल नामांकन अनुपात के लक्ष्य को प्राप्त करने हेतु सांस्थानिक विकास के लिये अपर्याप्त है। अनुमानित संसाधन अंतर 2.52 लाख करोड़ रुपए का है। इस घाटे को कम करने के लिये सुझाव है कि विदेश तथा भारत से प्रबुद्ध तथा मूल्य आधारित शैक्षिक उद्यमशीलता को निजी सार्वजनिक भागीदारी के लिये आकर्षित किया जाये। इसका नीतिगत निहितार्थ यह हुआ कि संसाधनों के अभाव को देखते हुये, आधुनिकीकरण को निजी पूंजी की भागीदारी द्वारा ही सफलतापूर्वक प्राप्त किया जा सकता है। परंतु उत्तर आधुनिक पूंजीवाद के युग में प्रबुद्ध और मूल्य आधारित उपक्रम एक बहुत कम मिलने वाली वस्तु है। उच्च शिक्षा में आंतरिक तथा विदेशी पूंजी केवल लाभ के लिये आकर्षित होगी। आंतरिक पूंजी की उपस्थिति बहुत समय से है और देश में कई संस्थानों का प्रबंध करती है। प्रारंभ में उनका उद्देश्य कल्याणकारी था न कि

व्यावसायिक। परन्तु अब निजी शिक्षा उपक्रमों का उद्देश्य केवल निवेश है। इस प्रकार निजी शिक्षा व्यापार का पर्याय बन गई है। निजी सार्वजनिक साझेदारी निदान हो सकता है, अगर निजी पर सार्वजनिक का नियंत्रण हो।

अगर वृहद स्तर पर निजीकरण की ओर झुकाव होता है जैसा कि उच्च शिक्षा में यह वास्तविकता लग रही है तो अधिकांश छात्रों को शिक्षा से वंचित रहना पड़ेगा। शिक्षा सत्ता का महत्वपूर्ण औज़ार है, विशेषत: वर्तमान दशाओं में जहां ज्ञान समाज में व्याप्त असमान संबंध को स्थायी रूप देने में यह एक महत्वपूर्ण कारक के रूप में उभरा है।

शिक्षा का निजी ढांचा एक ऐसे निजी व्यवस्था का निर्माण और विस्तार करता है जिससे कि वंचित वर्ग उससे दूर रहता है और विशेष सुविधा प्राप्त लोगों का आधिपत्य बना रहता है। चूंकि अधिकांश सरकारी संस्थानों की दशा बहुत ही खराब है, इसलिए यहां अधिकांश छात्रों का अधिगम स्तर कम होता है। वर्तमान के शैक्षिक सुधार इस अंतर को अधिक बढ़ायेंगे।

निजीकरण का दूसरा चेहरा 'विदेशी शिक्षा प्रदाताओं' द्वारा परिलक्षित होता है जिन्हें देश में परिसर स्थापित करने की अनुमति दी गयी है। आंतरिक शैक्षिक एजेंसियों के सहयोग से कई विदेशी विश्वविद्यालयों ने देश में परिसर स्थापित किये हैं। उनके प्रवेश और कार्य संचालक को लेकर नियंत्रण न होने के कारण उनकी गुणवत्ता और जवाबदेही संदेहास्पद है। अधिनियम का उद्देश्य उनके प्रवेश का नियमन करना और विदेशी विश्वविद्यालयों का संचालन है। परंतु इसका वास्तविक निहितार्थ यह होगा कि उच्च शिक्षा राष्ट्रीय चिंता का एक विषय नहीं रहेगा, बल्कि विदेशी एजेंसियों को इसको दिशा देने की स्वतंत्रता मिल जायेगी। कई इसका स्वागत यह कहकर करते हैं कि इससे उच्च गुणवत्ता वाली शिक्षा उपलब्ध होगी। विदेशी शैक्षिक प्रदाताओं के लिये सरकार द्वारा रखी गयी शर्तें राष्ट्रीय उदारवादियों को संतुष्ट करती है क्योंकि इसके अनुसार कोई भी रातों रात भारत में विदेशी शिक्षा के प्रवेश के लिये उपलब्ध खुली नीति का लाभ नहीं उठा पायेगा। सबसे पहले, विदेशी शैक्षिक प्रदाता को पांच करोड़ रुपये की एकमुश्त राशि जमा करनी होगी, दूसरा, लाभ का प्रत्येक भाग केवल उसके द्वारा भारत में स्थापित शिक्षा संस्थानों की वृद्धि और विकास पर ही व्यय करना होगा। तृतीय तथा सबसे महत्वपूर्ण बात गुणवत्ता की है। इसके अनुसार विदेशी शैक्षिक प्रदाता इस बात को सुनिश्चित करेगा कि इसके द्वारा संचालित पाठ्यक्रम या कार्यक्रमों को भारत की सांविधिक प्राधिकरणों के मानदंडों के अनुरूप गुणवत्तायुक्त, पाठ्यक्रम के अनुसार, शिक्षा संचालन की पद्धति तथा

संकाय नियुक्ति और शिक्षा के प्रदाता के रूप में देश के मुख्य परिसरों में जहां यह संस्थान स्थापित किये गये हैं वहां इन मानदंडों को पूर्ण करेगा। यह एक सराहनीय लक्ष्य है क्योंकि इससे मानदंडों में कहीं भी गिरावट नहीं आयेगी, मगर इस बात की संभावना भी कम ही है कि आक्सफोर्ड या हार्वर्ड विश्वविद्यालय भारत में अपने परिसर का निर्माण करेंगे।[4] इसके बावजूद इस धारा के परिचालन भाग का महत्वपूर्ण बिंदु यह है कि सभी संस्थान चरित्र में 'विदेशी' ही रहेंगे। पाठ्यचर्या के प्रतिरूप का सांस्कृतिक निहितार्थ तथा प्रतिभावान एवं अन्य समुदाय के सामाजिक, आर्थिक आवश्यकताओं के लिये विकसित पाठ्यक्रम का प्रकार भारत जैसे देश के लिये महत्वपूर्ण होगा। विश्वविद्यालय केवल ज्ञान के उत्पादन और प्रचार-प्रसार के लिये नहीं हैं, यह एक ऐसा क्षेत्र है जिसके अंतर्गत देश की पहचान बनती है। बहुराष्ट्रीय पूंजी, जिसे भूमंडलीकरण का भी नाम दिया गया है, पहले से ही लोगों की सांस्कृतिक पहचान को समाप्त कर रहा है। मौलाना अबुल कलाम आज़ाद के समय से देश बहुत आगे निकल चुका है तथा वापसी कर पाना लगभग असंभव है। पिछले साठ वर्षों में भारतीय समुदाय का चरित्र बहुत बदल चुका है अब यह उत्तर औपनिवेशिक समुदाय नहीं है। अब यह नई कॉलोनी है, जहां वैश्विक पूंजीवादियों के हितों के अनुसार नीतियां तथा विकास रणनीतियां बनायी जा रही हैं। अधीनीकरण की इस प्रक्रिया में हितैषीपूर्ण स्वीकृति हेतु बौद्धिक समर्थन के लिये शिक्षा एक महत्वपूर्ण प्रभावी कारक है। भारतीय संपन्न मध्यम वर्ग इस नई दशा में प्रसन्न है, बिना किसी अपराधबोध के, वो भी इस बहाने कि यह तो वैश्विक ताकतों का सृजन है। इस प्रक्रिया में, वैकल्पिक शिक्षा व्यवस्था जो उपनिवेशवाद के विरूद्ध संघर्ष के भाग के रूप में तैयार की गई और जिसे वैकल्पिक आधुनिकता का अनिवार्य अंग माना गया था, को कूड़ेदान में डाल दिया गया है। यह चिंताजनक है परन्तु आश्चर्यजनक नहीं है क्योंकि समकालीन पूंजीवाद का तर्क स्थिति की अनिवार्यता को देखते हुये कार्य करने के संदर्भ में बेहद लचीला है।

उच्च शिक्षा के नये माहौल में, अंत: संबंधित तथा पारस्परिक बिल संसद में विचाराधीन हैं, जो अभिजात वर्ग उन्मुख सामाजिक तथा सांस्कृतिक परिवर्तन हेतु एक बौद्धिक आधार तथा संस्कृति का सृजन कर सकते हैं। दलित तथा आदिवासी जो गरीबी

[4] फिलिप जी अल्टबाख और अन्य विद्वानों के अनुसार, वैश्विक अनुभव से पता चलता है कि विदेशी बाज़ार में प्रवेश करने वाले अधिकांश उच्च शिक्षा संस्थान लोकप्रिय संस्थान नहीं हैं बल्कि निम्न दर्जे के संस्थान हैं जो बाज़ार में हिस्सा लेकर लाभ कमाना चाहते हैं। *(दि हिंदू, 8 अप्रैल, 2010)*

रेखा से नीचे जीवनयापन कर रहे हैं, सरकार द्वारा प्राप्त की जाने वाली तथाकथित 'क्रांति' से बाहर ही रहेंगे। जब तक आधुनिकीकरण की नीति के लाभ धनी एवं अभिजात्य वर्ग को प्राप्त होते रहेंगे, शिक्षा राष्ट्रीय विकास के लिये समुचित मानव संसाधन का विकास नहीं कर पायेगी। उत्कृष्टता के लिये शिक्षा में नये प्रयास करना एक आवश्यकता है। भारत जैसे देश में जहाँ पर प्रचुर मात्रा में मानव पूंजी है, उत्कृष्टता प्राप्त करने का एकमात्र रास्ता समानता तथा सामाजिक न्याय के द्वारा ही संभव है। अंततः विकास तभी समावेशी हो सकता है जब वह संगठित रूप से हो।

स्वतंत्र भारत की शुरुआत इस प्रतिबद्धता के साथ हुई कि बौद्धिक उपनिवेश के अंत के साथ वैकल्पिक शिक्षा व्यवस्था का प्रारंभ होगा, परंतु इतिहास पूर्ण रूप से करवट ले चुका है। एक बार फिर, भारतीय सत्ता के अभिजात्य वर्ग ने विदेशी आधुनिकता को खरीदकर सरल मार्ग अपनाया है। किसी भी प्रकार का राष्ट्रीय विकल्प समाप्त हो चुका है। अब केवल समय ही बतायेगा कि भविष्य के लिये हमारे पास क्या है। राष्ट्र मृत्यु शोक में संलिप्त न होकर, गंवाने का जश्न मना रहा है। स्वच्छंद अतिक्रमण तथा सांस्कृतिक और बौद्धिक साम्राज्यवाद का प्रभुत्व धार्मिक कट्टरवाद को बढ़ावा दे सकते हैं। रवीन्द्रनाथ टैगोर, जवाहरलाल नेहरू तथा मौलाना अबुल कलाम आज़ाद के स्वप्नों की शिक्षा व्यवस्था का उद्देश्य भारतीय सभ्यता की बौद्धिक शक्ति को प्रवाहित करना था। आधुनिकीकरण के रूप में पूंजीवादी विकास के समीकरण तथा स्थिर विचार इनके सपनों को ओझल होने के लिए मजबूर कर सकते हैं।

संदर्भ

अबुल कलाम आज़ाद, *इंडिया विंस फ्रीडम*, पृ. 13

अबुल कलाम आज़ाद (1959): *एजुकेशन एंड नेशनल रिकांस्ट्रक्शन, स्पीचेज आफ अबुल कलाम आज़ाद*, नई दिल्ली

एजेंडा नोट – न्यू इनीशिएटिव्स फार दि XI प्लान इन हायर एजुकेशन

कलेक्टेड वर्क्स आफ महात्मा गांधी, जिल्द 14, नई दिल्ली, 1976, पृ. 319

कलेक्टेड वर्क्स आफ महात्मा गांधी, जिल्द 14, नई दिल्ली, 1976, पृ. 18–36; 37–42

जार्ज इरुम्बयम (सं.) (1985): नालू नोवालुकूर त्रिसूर

जेम्स स्काट (1990): डामिनेशन एंड दि एक्ट आफ रेजिस्टेंस, लंदन

जांध्याला बी.जी. तिलक (2010): दि फारेन एजुकेशनल बिल : ए क्रिटिक. *इकोनमिक एंड पोलिटिकल वीकली,* वाल्यूम XLV, अंक 19

के.एन. पणिक्कर (2007): कोलोनिलिज्म कल्चर एंड रेजिस्टेंस, आक्सफोर्ड यूनिवर्सिटी प्रेस, नई दिल्ली

के.एन. पणिक्कर (सं.) (2009): टूवार्ड्स फ्रीडम, 1940, नई दिल्ली, पृ. 220

कृष्ण मोहन बैनर्जी : ए लेक्चर आन दि पिक्यूलियर रेस्पांसिबिलिटी आफ इंडियन्स, नई दिल्ली, पृ. 4

प्रधान मंत्री को साम पित्रोदा, अध्यक्ष, राष्ट्रीय ज्ञान आयोग, का पत्र, 29 नवंबर, 2006

महेंद्र लाल सरकार (1872) *प्रोजेक्टेड साइंस एसोसिएशन फार दि नेटिव्स आफ इंडिया*, कोलकाता, पृ. 16

मौलाना अबुल कलाम आज़ाद (1988): *इंडिया विंस फ्रीडम*, नई दिल्ली

प्लानिंग कमीशन : *पब्लिक-प्राईवेट-पार्टनरशिप इन हायर एंड टेक्नीकल एजुकेशन*, पृ. 2, ड्राफ्ट परामर्श पेपर

पाथेरी कुंहाम्बू, सरस्वती विजयम, 1892, कन्नूर

रिपोर्ट आफ दि कमीटी आन रिनेवेशन एंड रिजुवेनेशन आफ हायर एजुकेशन, 2009

रिपोर्ट आफ दि एजुकेशन कमीशन, 1964-66, नई दिल्ली 1970, पृ. 9

तत्वबोधिनी पत्रिका, श्रावण, शक 1768 अंक 36 पृ. 309-11

दि इंग्लिश वर्क्स आफ राज राममोहन राय, इलाहाबाद, 1906

दि फारेन एजुकेशनल इंस्टीट्यूशंस (रेगुलेशन आफ इन्ट्री एंड आपरेशंस) बिल 2010, उपधारा 5.1, विलियम एडम, रिपोर्ट आन दि स्टेट आफ एजुकेशन इन बेंगाल (1941) सं. ए.एन.बसु, कोलकाता

(जेपा, वर्ष 25, अंक 2, अप्रैल 2011 से साभार)

परिप्रेक्ष्य
वर्ष 18, अंक 3, दिसंबर 2011

मध्याह्न भोजन कार्यक्रम के कार्यान्वयन में महिलाओं की भागीदारी

वेटुकुरी पी.एस. राजू*

सारांश

राष्ट्र के समग्र विकास के लिए 6-14 वर्ष आयु वर्ग के बच्चों की सार्वभौम शिक्षा की संप्राप्ति को एक महत्वपूर्ण कारक माना गया और इस कारण भारतीय संविधान की उत्तरोत्तर नीतियों, योजनाओं तथा सांस्थानिक कार्यक्रमों एवं प्रयासों में इसे प्रमुख स्थान दिया गया। परंतु इस दिशा में बढ़ते कदम के रास्ते में अनामांकन, अपव्यय, स्कूल त्याग, ठहराव और अधिगम की निम्नगुणवत्ता सबसे बड़ी बाधाएं हैं। यह सर्वमान्य है कि बालिका शिक्षा की गुणवत्ता में सुधार से काफी हद तक लैंगिक समता को बल मिलेगा। लैंगिक सशक्तिकरण से बालिकाओं के स्वास्थ्य रोजगार और निर्णय प्रक्रिया में सहभागिता सुनिश्चित हो पाएगी।

प्रस्तावना

वास्तव में विभिन्न घरेलू कार्यों, सामुदायिक गतिविधियों तथा धार्मिक और सांस्कृतिक रीति-रिवाजों में महिलाओं की भागीदारी होती है परंतु इनसे संबंधित निर्णय कार्य में उनकी स्वयं की भूमिका नामाात्र ही होती है। समाज, घर-परिवार और सगे-संबंधियों के पुरुषों का साथ निर्णय प्रक्रिया में प्रमुख होता है। यद्यपि वर्षों से महिला सशक्तिकरण के लिए प्रयास किए जा रहे हैं परंतु वर्ष 1997 से 1999 के दौरान औसतन 55% महिला मतदाताओं ने राजसत्ता के चयन में अहम भूमिका निभाई है। संविधान के 73वें और 74वें संशोधन के द्वारा इस दिशा में तेजी से बदलाव आया है। स्थानीय निकायों में महिलाओं के आरक्षण से भी निर्णय प्रक्रिया में उनकी भागीदारी सुनिश्चित की गई है।

सर्वप्रथम स्कूलों में विद्यार्थियों को पौष्टिक आहार देने का आरंभ 1925 में मद्रास नगर निगम ने किया। इसके अंतर्गत स्कूल के बच्चों को पौष्टिक आहार दिया जाता था।

* सहायक प्रोफेसर, राष्ट्रीय शैक्षिक योजना एवं प्रशासन विश्वविद्यालय, न्यूपा

इसी परंपरा के मद्देनज़र तमिलनाडु में के.कामराज के मुख्यमंत्रीत्वकाल में 1969 के दशक में 'गरीब पोषण' कार्यक्रम लागू किया गया। 1982 में तमिलनाडु के लोकप्रिय मुख्यमंत्री एम.जी. रामचंद्रन ने राज्य भर में पौष्टिक आहार कार्यक्रम चलाया। इसके बाद 1980 के दशक के मध्य तक तीन राज्यों- गुजरात, केरल, तमिलनाडु और संघ क्षेत्र पांडिचेरी ने राज्य स्तर के संसाधनों के द्वारा प्राथमिक स्कूल के बच्चों के लिए राज्यभर में मध्याह्न भोजन कार्यक्रम आरंभ किया। इसके बाद 1990 में, राज्यों– गोवा, मध्यप्रदेश, महाराष्ट्र, मेघालय, मिज़ोरम, नागालैंड, सिक्किम, त्रिपुरा और उत्तर प्रदेश में भी यह कार्यक्रम आरंभ किया गया। इसके अतिरिक्त, कर्नाटक, ओडिसा और पश्चिम बंगाल में यह कार्यक्रम अंतर्राष्ट्रीय आंशिक सहयोग से लागू किया गया। 15 अगस्त 1995 को भारत सरकार ने प्राथमिक शिक्षा के लिए पोषाहार समर्थन राष्ट्रीय कार्यक्रम (एन पी-एन एस जी ई) आरंभ किया। इसका मुख्य उद्देश्य प्राथमिक स्कूलों में दाखिला बढ़ाना, ठहराव और उपस्थिति सुनिश्चित करना तथा बच्चों में पौष्टिकता के स्तर में सुधार लाना था। आरंभ में यह कार्यक्रम देश के 2408 ब्लाकों में केंद्र प्रायोजित योजना के रूप में आरंभ किया गया। 1997-1998 से यह कार्यक्रम देश भर में लागू कर दिया गया। वर्ष 2002 में इस कार्यक्रम का विस्तार राजकीय स्कूलों की सहायता प्राप्त राजकीय स्कूलों, स्थानीय निकायों के स्कूलों के अलावा शिक्षा गारंटी योजना वैकल्पिक तथा नवाचारी शिक्षा योजना के अंतर्गत संचालित शिक्षा केंद्रों में भी लागू कर दिया गया।

भारत सरकार के सार्वभौम भोजन कार्यक्रम की गूंज जुलाई 2004 में वित्त मंत्री के बजट संभाषण में ध्वनित हुई– ''गरीब अपने बच्चों की बुनियादी शिक्षा चाहते हैं। हम उन्हें शिक्षा प्रदान करेंगे। हम यह भी सुनिश्चित करेंगे कि बच्चे स्कूल में भूखे न रहें।'' बजट संभाषण भी यह भी वचनबद्धता व्यक्त की गई– 'उपकर के अधीन एकत्रित सभी धनराशि शिक्षा को आवंटित होगा । जिसमें स्वाभाविक रूप से दोपहर का पका हुआ भोजन देने का प्रावधान शामिल है। अगर प्राथमिक शिक्षा और पोषाहार कार्यक्रम साथ-साथ कार्यान्वित होता है, मुझे विश्वास है यह कार्यक्रम भारत के गरीब बच्चों के जीवन में एक नई सुबह सिद्ध होगा'

बजट संभाषण-2004 को ध्यान में रखते हुए 1995 में लागू प्राथमिक शिक्षा हेतु राष्ट्रीय पोषाहार कार्यक्रम में सितंबर 2004 में संशोधन किया गया। इसके अंतर्गत राजकीय और सहायता प्राप्त स्कूलों, शिक्षा गारंटी योजना/वैकल्पिक तथा नवाचार शिक्षा केंद्रों के कक्षा-5 के बच्चों के लिए 8-10 ग्राम प्रोटीन तथा 300 कैलोरीयुक्त पका हुआ

मध्याह्न भोजन का प्रावधान रखा गया। संशोधित योजना में मुफ्त अनाज की आपूर्ति के अलावा निम्नांकित मदों के लिए केंद्रीय सहायता प्रदान की गई– (1) भोजन पकाने की लागत –एक रुपए प्रति विद्यार्थी, (2) विशेष वर्ग के राज्यों के लिए ढुलाई खर्च 50 रुपए प्रति कुंतल से रु.100/– प्रति कुंतल तथा अन्य राज्यों के लिए रु.75/– प्रति कुंतल (3) अनाज़ ढुलाई उपदान और भोजन पकाने की कुल लागत के 2% मात्रा के बराबर इसके प्रबंधन, निगरानी तथा मूल्यांकन की लागत, (4) सूखा प्रभावित क्षेत्रों में ग्रीष्मकालीन अवकाश के दौरान भी मध्याह्न भोजन की व्यवस्था।

मध्याह्न भोजन कार्यक्रम

भारत में स्कूलों में पोषाहार के रूप में मध्याह्न भोजन कार्यक्रम बहुत लोकप्रिय है। इसके तहत स्कूल के कार्यदिवस में सभी बच्चों को दोपहर का भोजन सुलभ कराने का प्रावधान है। इस कार्यक्रम के उद्देश्य निम्नलिखित है :

- राजकीय, सहायता प्राप्त, स्थानीय निकायों तथा शिक्षा गारंटी योजना केंद्रों तथा वैकल्पिक तथा नवाचार केंद्रों में कक्षा 1–5 के बच्चों की पौष्टिकता स्तर में सुधार करना,
- गरीब तथा वंचित वर्ग के बच्चों को स्कूल में उपस्थित रहने के लिए प्रोत्साहित करना और कक्षा की गतिविधियों पर ध्यान देने हेतु उनकी मदद करना,
- ग्रीष्मावकाश के दौरान सूखा प्रभावित क्षेत्रों में प्राथमिक स्तर के बच्चों को पौष्टिक आहार प्रदान करना।

सर्वोच्च न्यायालय द्वारा 18 नवंबर 2001 को जारी निर्देश के बाद यह कार्यक्रम देश भर में लागू किया गया। इस कार्यक्रम की सबसे बड़ी चुनौती पके भोजन की गुणवत्ता अपेक्षित धनराशि का आवंटन और समुचित निगरानी तथा प्रबंधन है। (ज़ैदी 2005)। इस संबंध में अंतर्राष्ट्रीय तथ्य यह है कि सर्वप्रथम जापान में 1800 के उत्तरार्ध में यह कार्यक्रम लागू किया गया। उसके बाद 1938 में बाजील तथा 1946 में अमरीका में लागू किया गया (पारीख तथा यासमीन 2009) अंतर्राष्ट्रीय अनुभवों से यह प्रकाश में आया है कि मध्याह्न भोजन कार्यक्रम बहुत ही प्रभावकारी रहा है तथा इसे नियमित रूप से जारी रखना चाहिए।

मध्याह्न भोजन कार्यक्रम में महिलाओं की भागीदारी

मध्याह्न भोजन कार्यक्रम ने एक तरफ जातिगत भेदभाव और पूर्वग्रह को दूर करने में

सफल दिखाई पड़ता है तो वहीं दूसरी तरफ भोजन तैयार करने में रसोईया की भूमिका में महिलाओं की बढ़ती भागीदारी और स्कूलों में लड़कियों के भारी नामांकन से लैंगिक समता को भी बल मिला है। रसोईया के रूप में महिलाओं और खासकर अपवंचित वर्ग की महिलाओं की संख्या अधिक है। मध्याह्न भोजन कार्यक्रम लागू होने के कारण रसोईया की मांग बढ़ी है परंतु वेतन बहुत कम है। इसके अलावा, कार्यक्रम के दिशानिर्देश के अनुसार अपवंचित वर्ग से रसोईया नियुक्त करने का प्रावधान है। इससे कामकाजी महिलाओं को अपने बच्चों के लिए दोपहर का भोजन बनाने से मुक्ति भी मिली है। यह कार्यक्रम कामकाजी महिलाएं, विशेषकर विधवाएं या अकेली मांओं के लिए निश्चित होकर काम पर जाने का अवसर प्रदान करता है।

स्कूलों में पढ़ रहे बच्चों की माताओं को दोपहर के भोजन की तैयारी और विशेष पर्यवेक्षण करने की अनुमति दी गई है। माँ-समितियों की प्रतिनिधि निम्नांकित कार्यों की निगरानी में मदद कर सकती हैं : (i) बच्चों को परोसे जा रहे भोजन की मात्रा और उसका नियमित अनुपालन, (ii) भोजन पकाने और वितरण के समय साफ-सफाई (iii) भोजन की सामग्री और इंधन की समय पर आपूर्ति (iv) निर्धारित व्यंजन सूची (मेनू) का कार्यान्वयन और (v) सामाजिक और लैंगिक समता। इस प्रकार हम देखते हैं कि मध्याह्न भोजन कार्यक्रम से लैंगिक समता की दिशा में निरंतर प्रगति हो रही है। बालिका नामांकन से लेकर कामकाजी महिलाओं और महिला रोजगार के नए अवसर ने लैंगिक समता को बढ़ाने में बहुत सहायक सिद्ध हुए हैं ।

इस प्रकार मध्याह्न भोजन कार्यक्रम में महिलाओं और लड़कियों के हित सधे हुए हैं। यह आलेख आंध्र प्रदेश और असम में महिलाओं की भागीदारी को दर्शाता है।

आंध्र प्रदेश का मध्याह्न भोजन कार्यक्रम : सर्वोत्तम उदाहरण

वर्ष 2001 की जनगणना के अनुसार आंध्र प्रदेश क्षेत्रफल और जनसंख्या की दृष्टि से देश में पांचवां बड़ा राज्य था। (275045 वर्ग कि.मी.) तथा जनसंख्या (762.10 लाख) थी। 16.19% अ.जाति तथा 6.9% अ.ज.जाति । इसकी वृद्धि दर 1991-2001 में 13.86% थी। 72.7% जनसंख्या गांवों में रहती थी। प्रशासनिक दृष्टि से राज्य 23 जिलों, 81राजस्व डिवीजन, 8 नगर निगम, 4 महानगरीय शहरों तथा 111 नगर पालिकाओं में विभाजित था । मंडल प्रजा परिषद व्यवस्था (तहसील की जगह मंडल) लागू होने के बाद सभी 23 जिलों को 1128 मंडलों में बांट दिया गया जिनमें 31683 ग्राम, 22,084 ग्राम पंचायत तथा 72372 बस्तियां थी।

2001 की जनगणना के अनुसार राज्य में 60.47% साक्षरता दर थी। जिसमें महिला एवं पुरूष साक्षरता दर क्रमशः 50.43% और 70.32% थी। कुल 23 जिलों में से नौ जिलों, हैदराबाद, रंगारेड्डी, पूर्वी गोदावरी, पश्चिमी गोदावरी, कृष्णा, गुटुंर, नेलोट, कुडाप्पा तथा चितुर में महिला साक्षरता दर राज्य के अन्य जिलों से कुछ अधिक थी। अनुसूचित जाति और जनजाति के बीच साक्षरता दर बहुत काम भी जो कि निम्नांकित तालिका से स्पष्ट है :

तालिका 1

आंध्रप्रदेश में अनुसूचित जाति और जनजाति के मध्य साक्षरता दर

अ.जाति			अ.जनजाति			
पुरुष	महिला	योग	पुरुष	महिला	योग	ग्रामीण महिला साक्षरता दर
63.51	43.35	53.52	47.66	26.11	37.04	23.97

लड़के तथा लड़कियों के लिये ड्राप आऊट दर क्रमशः 26.76 तथा 27.32 थी। वर्ष 2006–2007 में राज्य में 3,76,121 थी (1,78,856 लड़के 1,97,265 लड़कियाँ)

आंध्र प्रदेश सरकार ने 1982 में प्रयोगात्मक तौर पर अभ्युदय प्राथमिक पाठशालाओं में मध्याह्न भोजन कार्यक्रम प्रारंभ किया। परंतु वित्तीय रूकावटों के कारण कार्यक्रम बंद कर दिया गया। 15 अगस्त 1995 में भारत सरकार ने प्राथमिक शिक्षा के लिये राष्ट्रीय पोषण समर्थन कार्यक्रम प्रारंभ किया। इस कार्यक्रम के अंतर्गत प्रत्येक छात्र को 3 किलो चावल प्रत्येक वर्ष के दस महीनों के लिये प्रदान किया गया। परिणाम स्वरूप,2001 में आंध्रप्रदेश सरकार ने सभी सरकारी तथा स्थानीय निकाय सहायता प्राप्त प्राथमिक स्कूलों में मध्याह्न भोजन कार्यक्रम चलाया। बाद में इसे एजुकेशन गारंटी स्कीम तथा इनोवेटिव एजुकेशन सेंटर के लिए भी लागू कर दिया।

इस कार्यक्रम का मुख्य उद्देश्य विद्यालयों में स्कूल त्यागदर को घटाना था जिससे कि राज्य संपूर्ण साक्षर हो पाए । इस काय्रक्रम के अंतर्गत 68.00 लाख बच्चों के लिये वर्ष 2006–07 में 402.85 करोड़ रुपये प्रदान किये गये। इस बात का ध्यान रखा गया कि प्रत्येक बच्चे को प्रतिदिन 300 कैलोरीज़ और 8 से 10 ग्राम प्रोटिन प्रदान हो। प्रत्येक बच्चे की प्रतिदिन के हिसाब से भारत सरकार 100 ग्राम चावल मुफ्त प्रदान कर रही है।

इस कार्यक्रम को जून 2006 में पुन: संशोधित किया गया जिससे कि पर्याप्त पोषण मिले और राज्यों तथा संघशासित प्रदेशों को अतिरिक्त केंद्रीय सहायता मिले। निम्नांकित घटकों के लिये सहायता दी गई –प्रत्येक स्कूल, प्रतिदिन, प्रति बच्चे के लिये नि:शुल्क 100 ग्राम (चावल/गेंहू) प्रत्येक स्कूल प्रत्येक स्कूल प्रत्येक बच्चे के लिये 1.50 रुपये प्रतिदिन के हिसाब से खाना पकाने की सहायता, प्रति क्विंटल के लिये 75 रुपये की परिवहन लागत, प्रबंधन मानीटरिंग तथा मूल्यांकन के लिये सहायता।

आंध्र प्रदेश के ग्रामीण इलाकों में स्कूल स्तर पर मध्याह्न भोजन कार्यक्रम का क्रियान्वयन मण्डल राजस्व अधिकारी द्वारा चिन्हित डी डब्ल्यू.सी.आर.ए. सेल्फ हेल्प ग्रुप, विद्यालय शिक्षा समिति तथा अन्य अभिकरण जैसे नामी एन.जी.ओ., चैरीटेबल ट्रस्ट/अभिभावकों द्वारा किया जाता है। शहरी क्षेत्रों में एम.आर.ओ. की अध्यक्षता में समिति समुदायिक विकास समिति, एन.जी.ओ., शहरी एस.एच.जी.डी.डब्ल्यू.सी.यू.ए. विद्यालय शिक्षा समिति तथा कार्यान्वयन अभिकरण के रूप में अन्य एजेंसियों की पहचान करती है। इसमें अधिकतर महिला एस.एच.जी.डी. सम्मिलित हैं। गैर सरकारी संगठन तथा अन्य सेवा उन्मुख संगठनों को भी इसमें भागीदारी हेतु प्रोत्साहित किया जाता है। प्रायोगिक आधार पर आंध्रप्रदेश के अंनतपुर, कृष्णा तथा गुंटुर जिलों के कुछ मण्डलों में मिड–डे–मील कार्यक्रम का क्रियान्वयन महिला मण्डल स्मारक को सौंपा गया।

महिला स्तंभ मदद समूह–मिड–डे–मील के वितरण और पकाने के लिये निजी अभिकरण की सेवाएं

आंध्रप्रदेश सरकार ने सामाजिक आर्थिक गरीबी से निपटने के लिये महिला सशक्तिकरण के विषय को उठाया है। महिलाओं के बचत के माध्यम से स्वंय अपनी मदद आंदोलन को प्रारंभ किया गया। इस समय आंध्र प्रदेश में 4.65 लाख महिला एस.एच.जी. के अंतर्गत 61.70 लाख महिलाएं हैं। देश के कुल एस.एच.जी. की आधी संख्या आंध्र प्रदेश में है। एस.एच.जी. को डी.डब्ल्यू.आर.सी.ए. समूह भी कहा जाता है और यह नाम ग्रामीण क्षेत्रों में महिलाओं और बच्चों के विकास कार्यक्रम के आधार पर पड़ा जिससे पहले महिलायें जुड़ी हुई थीं एस.एच.जी. न केवल बचत कर रहा है बल्कि कोष में से ऋण भी प्रदान कर रहा है । समूह के कोष में बचत, सरकारी सहायता तथा बैंक ऋण सम्मिलित है। सदस्य समूह के कोष आवश्यकताओं को पूर्ण करते हैं। हालांकि दीर्घ अवधि में यह ऋण आय सृजन गतिविधियों के लिये प्रयोग में लाया जाता है। शुरूआत में ही इस समूह

ने 15556.90 करोड़ की राशि जमा कर ली थी। 1993 में महिला बचत आंदोलन संपूर्ण साक्षरता अभियान के भाग के रूप में प्रारंभ हुई। जिले आंध्रप्रदेश के दक्षिणी भाग में सरकारी सदस्यता प्राप्त प्रयासों के रूप में सफलता मिली। ग्रामीण महिलाओं ने 'अरक शराब' की बिक्री के विरूद्ध आंदोलन किया। अपने को ऋण और बचत समूह' के अंतर्गत संगठित किया। प्रतिदिन एक रुपये की बचत के साथ आज यह 61.70 लाख सदस्यों और 887.47 करोड़ के साथ एक आंदोलन बन गया है। इस राशि को आंतरिक रूप से परिचालित किया जाता है और सदस्यों को वर्ष में दो बार समूह द्वारा निर्धारित ब्याज दरों पर ऋण के लिये दिया जाता है। इस धनराशि को दैनिक जरूरतों को पूरा करने और आय सृजन हेतु वस्तुओं के उत्पादन के लिए प्रयोग किया जाता है।

राज्य के प्रत्येक गांव में कम से कम एक एस.एच.जी है तथा 25% गांवों में 15-20 समूह हैं। सरकार ने ग्राम स्तर पर एस.एच.जी. के लिये संस्थानों के निर्माण की आवश्यकता को महसूस किया और मंडल स्तरीय ग्राम संगठन तथा मंडल संघों का निर्माण किया, और मंडल संघों को परस्पर सहायता सहकारिता समिति एक्ट 1995 के अंतर्गत पंजीकृत किया गया। यह संघ बुजुर्ग व्यक्तियों को पेंशन, सदस्यों को बीमा सुविधा, कच्चे माल की आपूर्ति तथा तैयार उत्पाद के लिये बाजार, सामुदायिक आधार संरचना, बाजार सूचना तथा सदस्यों को अन्य सेवायें प्रदान करता है।

पबिलक-प्राईवेट साझेदारी एस.एच.जी. सदस्यों के लिये आर्थिक अवसर प्रदान करने के लिये अपनाई जाती है। इसके अंतर्गत उन्हें हिन्दुस्तान लीवर लिमिटेड, टी.वी. एस, टी.टी, के प्रेस्टीज, कोलगेट-पालमोलिव, फिलिप्स इत्यादि कंपनियों के उत्पादों के वितरक के रूप में नियुक्त किया जाता है। कंपनी इसके बदले में एस.एच.जी को वित्त प्रबंधन, उद्यम विकास, पैकेंजिंग, वस्तुओं की कीमत और ब्राण्ड हेतु प्रशिक्षण प्रदान करती है। यह साझेदारी बहुत ही सफल है। आंध्रप्रदेश सूचना प्रौद्योगिकी के प्रयोग द्वारा विकास कार्यक्रमों की गहन खोज में लगा हुआ है और यह ग्रामीण क्षेत्रों में इसके लाभ हेतु रणनीति तैयार करने में जुटा है। स्वयं सहायता समूह के लिये पी.सी. और जानकारी सूचना और व्यापार के विकास के हेतु प्रोत्साहित किया जा रहा है। उनके उत्पादों की फोटो खींची जा रही हैं तथा स्केचिंग के बाद वेबसाईट पर प्रदर्शित किया जा रहा है। यह ई-कामर्स कंपनियों के पोर्टल पर डिस्पले किया जा रहा है। हस्तकरघा, आयुर्वेदिक दवाईयां तथा साज-सज्जा का सामान, खिलौने, पेंटिग इत्यादि को राष्ट्रीय तथा अंतर्राष्ट्रीय बाजार प्राप्त हो रहा है। सदस्य को मोबाईल फोन बिक्री को बढ़ावा देने के साथ-साथ

सार्वजनिक टेलिफोन के रूप में उपयोग करने के लिये दिया गया है। इस तरह मध्याह्न भोजन कार्यक्रम समुदाय के स्वामित्व वाले कार्यक्रम की तरह क्रियान्वित किया जाता है।

महिला स्वयं सहायता समूहों और मध्याह्न भोजन कार्यक्रम क्रियान्वयन की प्रक्रिया

मध्याह्न भोजन कार्यक्रम सरकार और बड़ी संख्या में मंडल से लेकर राज्य स्तर तक के अधिकारियों के लिये एक प्रमुख कार्यक्रम है। ये अधिकारी बच्चों की उपस्थिति, अभिलेखों का रख-रखाव, डाटा का प्रसंस्करण द्वारा मध्याह्न भोजन कार्यक्रम की विभिन्न प्रक्रियाओं में सम्मिलित हैं। लेकिन भोजन पकाना कार्यक्रम निजी एजेंसियों को दिया जाता है। ग्रामीण क्षेत्रों में ही डब्ल्यू.सी.आर.ए./स्वयं सहायता समूह/एस.ई. सी/सिद्ध रिकार्ड वाली एजेंसियां, धमार्थ ट्रस्ट मंदिर की तरह अन्य एजेंसियां/माता-पिता के संगठन मंडल राजस्व अधिकारी द्वारा कार्यान्वयन एजेंसियों के रूप में पहचाने जाते हैं। इस उद्देश्य के लिये उन्हें किसी भी वेतन पारिश्रमिक का भुगतान नहीं होता। शहरी क्षेत्रों में समुदाय विकास सम्मितियां जैसे (पी.डी.एस.)/ गैर सरकारी संगठन/शहरी एस.एच.जी/डी.डब्ल्यू.सी.यू.ए/विद्यालय शिक्षा समिति तथा अन्य अभिकरणों जैसे मंदिर, धर्मार्थ ट्रस्ट/माता-पिता के समूहों (वरीयता के इसी क्रम में) चिन्हित करती है। आयुक्त, नागरिक आपूर्ति, आंध्र प्रदेश राज्य नागरिक आपूर्ति निगम समय पर चावल की मात्रा की आपूर्ति और निगरानी के लिये जिम्मेदार है। आंध्र प्रदेश में औसत गुणवत्ता के कच्चे चावल की आपूर्ति खाद्य निगम के गोदामों से उठाकर उचित मूल्यों की दुकान के माध्यम से कार्यान्वयन एजेंसियों को की जाती है। आवश्यकतानुसार नामांकन के आधार पर चावल की आपूर्ति कार्यान्वयन एजेंसियों को की जाती है। अनाज के भंडारण का ध्यान हैडमास्टर और कार्यान्वयन एजेंसियों द्वारा रखा जाता है। प्रधानाचार्य बच्चों की उपस्थिति और उपयोग हुए चावल की मात्रा को प्रमाणित करता है। कार्यान्वयन एजेंसियां दाल, सब्जियां, तेल, लकड़ी, रसोई गैस, आदि जैसे सामग्री की खरीद करते हैं। राष्ट्रीय पोषण संस्थान, हैदराबाद द्वारा बनाया मानकीकृत मेनू पालन के लिये जिला प्रशासन को भेजा जाता है। मेनू को लचीला बनाया गया है जिसमें चावल और सांभर मुख्य मेनू हैं तथा सप्ताह में दो बार अंडा और केला प्रदान किया जाता है। कार्यान्वयन एजेंसियां मौसमी सब्जियों को पकाती है। विभिन्न अधिकारियों द्वारा औचक निरीक्षण के माध्यम से भोजन की पौष्टिकता की जांच की जाती है। दोपहर का भोजन स्वच्छ वातावरण में बनाया जाना चाहिये तथा गुणवत्ता के उच्च मानकों को बनाये रखने की जरूरत है। इसलिये ग्राम पंचायतों, माता समिति,

स्कूल प्रबंधन समितियों और स्वयं सहायता समूहों के लिये मध्याह्न भोजन कार्यक्रम के महत्व और भोजन तैयार करने के लिये स्वच्छता के उच्च मानकों को समझाया जाता है। अत: यह सुनिश्चित करना है कि प्रत्येक बच्चे व्यंजनों का आनंद लें। आम तौर पर महिलाओं के स्वयं सहायता समूह खुद खाना पकाते हैं, लेकिन कुछ मामलों में क्रियान्वयन अभिकरण रसोईयों की नियुक्ति करती है। कार्यान्वयन एजेंसियां मंडल राजस्व अधिकारी द्वारा किये गये आवंटन के अनुसार उचित मूल्यों की दुकान से चावल उठाने के लिये जिम्मेदार है। कार्यान्वयन एजेंसियां कैशबुक, स्टाक रजिस्टर, आवंटन रजिस्टर आदि रखती हैं। मंडल कार्यकारिणी के लिए मंडल शैक्षिक अधिकारियों को स्कूलों में मध्याह्न भोजन के कार्यान्वयन पर मासिक रिपोर्ट प्रस्तुत करती हैं। स्कूल प्रबंधन समिति समय-समय पर एजेंसियों के रिकार्ड का निरीक्षण करती है। प्रधानाध्यापक बच्चों की उपस्थिति और उपयोग चावल की मात्रा प्रमाणित करता है। आमतौर पर एक एजेंसी खाना पकाती है और स्कूल में मध्याह्न भोजन प्रदान करती है।

आंध्रप्रदेश का महबूबनगर जिला समस्त आंध्रप्रदेश में तेलंगाना क्षेत्र में सबसे बड़ा जिला है और आंध्रप्रदेश में दूसरा सबसे बड़ा है। यह पालामोरू नाम से भी जाना जाता है। 1553 राजस्व गांव, 1347 ग्राम पंचायत, 64 मंडल और 5 राजस्व प्रभागों सहित महबूबनगर जिले में 14 विधानसभा निर्वाचन क्षेत्र और 2 संसदीय निर्वाचन क्षेत्र हैं। यह अनियमित और अल्प वर्षा की वजह से भारत के सूखग्रस्त क्षेत्र में स्थित है और भूजल संसाधनों की अति खपत से सूखा की स्थिति और भी बदतर है। महबूबनगर जिले में 90% लोग तेलुगू, बोलते हैं और शेष उर्दू ।

2001 में भारत की जनगणना के रूप में महबूबनगर में 130,849 की आबादी थी। पुरुषों और महिलाओं की जनसंख्या 5% से 49% क्रमश: है। महबूबनगर में 74% की औसत साक्षरता दर 59.5% राष्ट्रीय औसत की तुलना में अधिक है। पुरूष साक्षरता 80% है और महिला साक्षरता 67% है। कुछ शैक्षिक संकेतक भी नीचे दिए गए है:

तालिका 2

सरकारी, ए.आई.ई. ई.जी.एस. केंद्र और मदरसे

जनपद	स्कूलों की संख्या	ए.आई.ई	ई.जी.एस.	मदरसे	कुल
महबूबनगर	3310	88	34	40	34723

स्त्रोत: डी.आई.एस.ई

केस अध्ययन I : मंडल परिषद उच्च प्राथमिक विद्यालय

दुसकाल गांव में यह स्कूल 1959 में स्थापित किया गया था और स्थानीय निकाय द्वारा प्रबंधित है। इस गांव में केवल यह स्कूल है और यह स्कूल कक्षा 1–7 तक है। यह एक सह – शिक्षा विद्यालय है और इसमें पूर्व प्राथमिक अनुभाग नहीं है। स्कूल का कुल नामांकन 187 जिसमें ओ.बी.सी नामांकन 88, एस.सी/एस.टी. नामांकन क्रमश : 65 और 15 है तथा अन्य जातियों का नामांकन 19 हैं। यह स्कूल सभी बच्चों को भोजन प्रदान कर रहा है। समुदाय के सदस्यों ने रसोई शेड निर्माण हेतु (75%)और शिक्षा विभाग ने शेष (25%) खर्च का योगदान दिया। श्री बी.कृष्णैया स्कूल के प्रमुख अध्यापक है और इसके अलावा स्कूल में पांच पदों की स्वीकृत संख्या के स्थान पर तीन नियमित अध्यापक हैं। इसके अलावा, स्कूल में चार अर्द्ध शिक्षका हैं। स्कूल में चार महिला शिक्षक और सभी शिक्षक अच्छी तरह से योग्य हैं तथा शिक्षक छात्र अनुपात 26:1 है। स्कूल पहले से ही मध्याह्न भोजन कार्यक्रम लागू कर रहा है। इसके अलावा दुसकाल गांव में 35 स्वयं सहायता समूह कार्यरत हैं। मंडल राजस्व अधिकारी ने ज्योति लक्ष्मी महिला समूह को मंडल शिक्षा अधिकारी और ग्रामसभा के अन्य सदस्यों की मदद से खाना पकाने और बच्चों के लिए भोजन की सेवा के लिए चयनित किया है। एक पता कार्यान्वयन एजेंसी के रूप में शुरू में दो समूहों को दोपहर का भोजन हेतु खाना पकाने की जिम्मेदारी दी गई थी परन्तु अब केवल एक एजेंसी (ज्योति लक्ष्मी महिला समूह) ने जिम्मेदारी ली है। कार्यान्वयन एजेंसी में 13 महिला सदस्य हैं, जो पिछड़े और मुस्लिम समुदाय से संबंधित हैं। समूह पिछले दस वर्षों से कार्य कर रहा है।

महिलाओं के समूह से चयनित दो महिलायें खाना पकाने, ईंधन, अंडे और मसाले के खर्चों का ख्याल रखती हैं उस अवधि के लिए जिस दौरान वह प्रभारी होती हैं। ये दो महिलाएं बहुत ही जवाबदेही के साथ कार्य करती हैं। गांव में महिला स्वयं सहायता समूह का एक हिस्सा है। भोजन की सफलता उनके स्थानीय समुदाय की संस्कृति और परंपरा के साथ जुड़े रहने के कारण है। उन्हें यह भी ख्याल रखकर स्वादिष्ट खाना बनाना होता है कि बच्चों को भिन्नता प्राप्त हो। इसे दिलचस्प बनाने के लिए दैनिक मेनू को बदलना व सप्ताह में एक बार देना और स्वादिष्ट खाना बनाना पड़ता है। हेड मास्टर मेनू का फैसला लेता है। बच्चे स्थानीय स्वाद और स्थानीय रसोईयों की वजह से इस भोजन को स्वादिष्ट मानते हैं। माता पिता स्कूल का दौरा करते हैं और भोजन की गुणवत्ता की निगरानी करते हैं। शिक्षक भी भोजन और स्वाद की गुणवत्ता की जाँच करते हैं। हालांकि दोनों रसोईये मुस्लिम समुदाय से हैं। पर इस गांव में कोई सांप्रदायिक समस्या नहीं हैं।

असम का केस अध्ययन

असम देश के पूर्वोत्तर भाग में स्थित है और 30.285 वर्ग मील (78.438 वर्ग मिलोमीटर) में फैला एक क्षेत्र है। उत्तर में यह भूटान और अरुणाचल प्रदेश राज्य से घिरा हुआ है, नागालैंड और मणिपुर राज्यों से पूर्व में मिज़ोरम और त्रिपुरा राज्यों से दक्षिण में और मेघालय बांग्लादेश और पश्चिम बंगाल द्वारा पश्चिम में। 2001 की जनगणना के अनुसार असम की जनसंख्या 2,66,55,528 है। असम आयुक्त के अधीन तीन मंडलों में विभाजित है। प्रत्येक आयुक्त के तहत, 27 प्रशासनिक जिले हैं। पूर्वोत्तर राज्यों के बीच 339 व्यक्ति प्रति वर्ग किलोमीटर का जनसंख्या घनत्व है। 1991– 2001 दशक में 21.54% की वृद्धि दर की तुलना में राज्य की जनसंख्या 18.92% अच्छी खासी बढ़ गयी। असम का लिंग अनुपात 1000 पुरुषों पर 935 महिलाएं, 933 के राष्ट्रीय औसत की तुलना में अधिक है। राज्य की महिला साक्षरता दर 1991 में 43.03% से 54.61% हो गई। वहाँ कई प्रमुख जनजातियां और उपक्षेत्र हैं। जनजातियों की अच्छी खासी संख्या है।

असम राज्य में 27 जिले हैं (बी.टी.ए.डी. के चार नये जिलों के साथ), कामरूप (ग्रामीण और महानगर) जिला राज्य की कुल आबादी का 8.92% के साथ सबसे बड़ा जिला है। जनसंख्या घनत्व 604 वर्ग कि.मी. प्रति व्यक्ति के साथ इस जिले में सबसे अधिक है लेकिन उत्तरी कछार हिल्स में जनसंख्या घनत्व केवल 38 वर्ग कि.मी. प्रति व्यक्ति है। साक्षरता दर जोरहाट जिले (77.91%) में सबसे अधिक है और डूबरी जिले में (49.86%) सबसे कम है, 219 विकास खंडों, 2489 गांव पंचायतों और 26,312 राजस्व गांव (2001 जनगणना) हैं।

प्राथमिक शिक्षा की राष्ट्रीय पोषाहार सहायता कार्यक्रम (मध्याह्न भोजन योजना के रूप में जाना जाता है) एक सी.एस.एस. के रूप में असम सरकार ने 15 अगस्त 1995 को शिक्षा के प्राथमिक स्तर पर अध्ययन करने वाले बच्चों, प्रांतीय प्राथमिक स्कूलों और एम वी स्कूल के प्राथमिक अनुभागों में प्रारंभ किया। माननीय सुप्रीम कोर्ट के निर्देशानुसार बच्चों के लिए पका हुआ भोजन उपलब्ध कराने हेतु असम सरकार ने जनवरी 2005 से मध्याह्न भोजन कार्यक्रम का शुभारंभ किया। इसे वित्तीय सहायता, शिक्षा गारंटी स्कीम (ईजीएस) वैकल्पिक तथा अभिनव शिक्षा (एआईई) प्राप्त स्कूलों के लिए भी बढ़ाया गया था। योजना को उच्च प्राथमिक स्तर के लिए बढ़ा दिया गया है। कक्षा VIII तक के लिये असम के शैक्षिक रूप से पिछड़े 81 ब्लॉकों में अक्तूबर 2007 से योजना निजी तौर पर प्रबंधित और सहायता प्राप्त संस्थानों में अध्ययन करने वाले बच्चों के लिये नहीं है।

राज्य नोडल अधिकारी (उपायुक्त) को खाना पकाने की लागत और मजदूरी हेतु निधि जारी करते हैं। जिला नोडल अधिकारी स्कूलों की एस.एम.सी. को निधि जारी करते हैं। आदाता चेक जिला नोडल अधिकारी द्वारा एस एम सी स्कूल प्रधानाध्यापक के पक्ष में जारी किया जाता है।

भारत सरकार 28 फरवरी तक अगले वित्तीय वर्ष के लिए राज्य और भारतीय खाद्य निगम के लिए खाद्यान्न का जिले-वार आवंटन कर देती है। अगले वित्तीय वर्ष के लिए जिले-वार आवंटन राज्य नोडल अधिकारी द्वारा सभी उपायुक्त को 15 मार्च तक कर दिया जाता है। जिला नोडल अधिकारी स्कूल की और ई पी एस एस को वर्ष के लिए जिला आवंटन का उप आवंटन मासिक आधार पर करता है और भारतीय खाद्य निगम (एफ.सी.आई.) के संबंधित अधिकारियों को सूचित करता है। ब्रेक-अप माहवार आधार पर स्कूल के दिनों की वास्तविक संख्या को देखकर दिया जाता है। नोडल विभाग (प्राथमिक शिक्षा विभाग) के उप मंडल ब्लॉक स्तर के अधिकारी खाद्य अनाज फंड की वास्तविक उपयोगिता की प्रत्येक संस्था में जांच करते हैं और आगे वितरण को विनियमित करने हेतु अनुपयोगी सामग्री पर नज़र रखकर उच्चतर प्राधिकारी को सूचित करते है।

उचित मूल्य की दुकानों से चावल उठाने के लिए आवश्यक व्यवस्था करते हैं। यह अनाज की संरक्षक हैं। अध्यक्ष/सचिव संबंधित स्कूल एसएमसी, अलग रजिस्टर में खाना पकाने की लागत और अनाज का रिकार्ड दर्ज करता है। कार्यक्रम प्रबंधन, जिला नोडल अधिकारी ग्राम, शिक्षा समिति/अभिभावक - गैर-सरकारी संगठान की सेवाओं का उपयोग कर सकते है। उपायुक्त, जिला स्तर पर कार्यक्रम का उचित कार्यान्वयन के लिए जिला नोडल अधिकारी हो सकता है और एडीसी को जिला स्तर पर कार्यक्रम की निगरानी की जिम्मेदारी सौंप सकता है और मंडल के लिये एक ई.ए.सी. को जिम्मेदारी सौंप सकता है।

स्कूलों की एस.एम.सी. खाद्य पदार्थों और खाना पकाने संबंधी खर्च आदि के लिये दैनिक रिकॉर्ड आदि रखती है और स्कूलों की एस एम सी रसोईयों और सहायकों की नियुक्ति करती है। यह खाना पकाने की खरीद के लिए मातृ समूह स्वयं सहायता समूहों को शामिल करने का अधिकार रखती है मातृ समूह पक्का भोजन और बच्चों को भोजन के वितरण की निगरानी रखता है।

स्कूल में विशेष रूप से स्थानीय स्थिति पर निर्भर होते हुए, छ एस एम सी जिला नोडल अधिकारी के साथ परामर्श कर दोपहर भोजन योजना के पर्यवेक्षण हेतु ग्राम स्तरीय

गैर सरकारी संगठन, ग्राम शिक्षा समिति और पंचायती राज संस्थानों की सेवा का उपयोग करती है। जिला नोडल अधिकारी शहरी क्षेत्रों में गैर सरकारी संगठन, नगर पालिका/शहरी समिति को कार्यक्रम के कार्यान्वयन और पर्यवेक्षण के लिए जिम्मेदारी देता है।

असम में मध्याह्न भोजन कार्यक्रम में महिलाओं की भागीदारी

असम में समुदाय स्वामित्व अधीन कार्यक्रम संचालित है। स्कूल प्रबंधन समिति, ग्राम शिक्षा समिति, लघु मार्डन समिति और माताओं के समूह की भागीदारी योजना के कार्यान्वयन में बहुत महत्वपूर्ण है। एस एम सी गुणवत्ता आश्वासन के माध्यम से प्रधानाध्यापकों पर कार्यक्रम के नियमित रूप से निगरानी और सामग्री की खरीद की जिम्मेदारी है। गांव की महिलाएं (माँ समिति के सदस्य) थोक में खाना पकाने और बच्चों के लिए भोजन परोसने में शामिल हैं।

माताओं के समूह में स्कूल जाने वाले बच्चों की माताऐं शामिल हैं। इसके अलावा, 18 वर्ष से ऊपर कोई भी महिला की सदस्य हो सकती है और यह सभी एल.पी.यू.पी. , ई.जी.एस और एच.टी. आर केंद्रों में प्रतिनिधित्व कर सकती हैं। कार्यकारी समिति में सामान्य एम.जी समिति के 11 से 21 सदस्यों द्वारा गठित की जाती है। सदस्यों की संख्या को जरूरत के हिसाब से बढ़ाया जा सकता है। एक सार्वजनिक सभा बुलाई जाती है और समिति का गठन किया जाता है।

माता समूह (एमजी) के गठन की विधि : ग्राम शिक्षा समिति, एसएमसी और डब्ल्यू ई सी के अध्यक्ष कलस्टर पर माता समूह के गठन के बारे में चर्चा करके प्रत्येक गांव में एम. जी के गठन के लिए तिथि और स्थान तय करते हैं। एस.एम.सी. और ग्राम शिक्षा समिति की महिला सदस्य एम जी के गठन के लिए सार्वजनिक बैठक का आयोजन करने के लिए पहल करती हैं। सभी शिक्षक ग्राम शिक्षा समिति एस.एम.सी. स्थानीय युवा क्लब के सदस्यों को बैठक में आमंत्रित किया जाता है। एम.जी की अवधि गठन के दिन से एक वर्ष तक की होती है और निम्नलिखित गतिविधियां करती है :

योजना और स्कूल मानचित्रण के दौरान शिक्षा समिति को मदद, वी.ई.सी. को मदद एमजी निधि का विकास और स्कूल के बुनियादी ढांचे के विकास में निधि निवेश, स्कूलों में किए गए कार्यों का निरीक्षण करने के साथ स्कूल और अध्यापक संबंधी विभिन्न समस्याओं को सूचित करने के लिए जीपी या उच्चतर प्राधिकारी को सूचना बच्चों का नामांकन और नियमित रूप से कक्षाओं में बच्चों की उपस्थिति स्कूल विकास कार्यों के सुचारु संचालन के लिए एस.एम.सी. को सहायता कक्षा संचालन

अधिगम सामग्री और तैयारी हेतु स्कूलों में शिक्षकों ई.जी.एस. एच.टी.आर. की मदद, गर्मियों के शिविर और नामांकन अभियान में सहायता, स्कूल में बच्चों और परिसर की सफाई, स्कूल के दौरान पीने के पानी की आपूर्ति 'क' श्रेणी में कक्षाएं स्कूल पुस्तकालय का रखरखाव होमवर्क में बच्चों का ख्याल रखना, और उनके कार्यों चलाने के लिए छात्रों और सरकार को मदद देना।

केस अध्ययन-II: बालिजान एल.पी. स्कूल

यह स्कूल 1948 में स्थापित किया गया था और शिक्षा विभाग द्वारा प्रबंधित है। यह असम के गोलाधार के पश्चिमी ब्लॉक में ग्रामीण क्षेत्र में स्थित है। स्कूल 1 से 4 कक्षा तक सह-विद्यालय है। इसमें पूर्व-प्राथमिक कक्षा भी है। हालांकि, पूर्व प्राथमिक कक्षा के अलग से शिक्षक नहीं हैं। असमिया इस स्कूल में शिक्षा का माध्यम है। स्कूल में स्वीकृत तीन पदों की संख्या के अनुसार तीन नियमित अध्यापक हैं। स्कूल में दो महिला और दो समुदाय शिक्षक हैं। उन्हें वेतन एस.एम.सी. से प्राप्त होता है। स्कूल का कुल नामांकन 162 है जिनमें से लड़कों का नामांकन 93 है और लड़कियों का नामांकन 69 है। अनुसूचित जनजाति का नामांकन 84,ओ.बी.सी. का 43 और अन्यों का नामांकन 35 है।

सामुदायिक भागीदारी: सामुदायिक समन्वयक स्कूल गतिविधियों में भाग लेने हेतु मातृ-समिति सदस्यों को प्रोत्साहित करते हैं। जैसे एम.डी.एम., अध्यापकों की अनुपस्थिति में शिक्षण, सी.आर.सी. भवन में आंगनवाड़ी केंद्रों का संचालन प्रार्थना सभा में भाग लेना, अध्यापन सामग्री के विकास में मदद, दीवारों पर चित्रकारी, विद्यालय परिसर और क्लास रूम में सफाई, मातृ समिति सदस्य खाना पकाती हैं और बच्चों को परोसती हैं। बच्चों के अंदर अच्छी आदते हैं जैसे कि अच्छी तरह से कपड़े पहनना, अपने जूतों को तरीके से रखना और खाना खाने से पहले हाथों को धोना, विद्यालय प्रबंधन समिति अध्यापकों और मातृ-समिति सदस्यों की सहायता से एम.डी.एम. योजना चला रही है। दोनों समुदाय स्कूल की भलाई के लिये कार्य कर रहे हैं। समिति के अध्यक्ष खाना पकाने की लागत को पूरा करने के लिये धन प्राप्ति में देरी होने पर विभाग में व्यवस्था करते हैं। मातृ समिति खाना बनाती है और बच्चों को गर्म खाना परोसती है। मीड-डे-मील छात्रों को परोसने के लिये पृथक सी.आर.सी हॉल उपलब्ध है और मेनू में चावल, दाल, सब्जी और सोयाबिन है।

सामाजिक समता: एस.एम.सी. तथा मातृ-समिति में सभी समुदायों को प्रतिनिधित्व मिला। स्कूल छात्र चुनाव मतपत्रों के द्वारा करता है, गाँव का प्रचार भी किया जाता है। शिक्षा अधिकारी समुदाय सदस्यों को स्कूल की दैनिक गतिविधियों में भाग लेने के लिये

प्रोत्साहित करता है। मातृ-समिति सदस्य तथा एस.एम.सी. सदस्य अन्य विद्यालयों में भ्रमण करते हैं और अपने अनुभवों का आदान-प्रदान करते हैं। एस.एम.सी मीना क्लब और मातृ समिति के माध्यम से समुदाय स्कूल की दैनिक गतिविधियों से जुड़ा है। इसके अतिरिक्त स्कूल रसोई और परिसर में सफाई पर ध्यान देते हैं। शिक्षा अधिकारी, अध्यापक, एस.एम.सी. तथा मातृ समूह इस प्रयास को सामुहिक रूप से निभा रहे हैं।

केस अध्ययन-III : नेपाली खानी बोनुआ निम्न प्राथमिक स्कूल

यह स्कूल 1971 में स्थापित किया गया था और शिक्षा विभाग द्वारा प्रबंधित है। यह ग्रामीण क्षेत्र में स्थित है। यह असम के गोलाधार जिले के पश्चिम ब्लॉक में ब्लॉक मुख्यालय से 9 कि.मी. की दूरी पर स्थित है।यह कक्षा 1 से 4 तक है और यह सह-विद्यालय है तथा पूर्व प्राथमिक कक्षा भी है। हालांकि, यहां पूर्व प्राथमिक कक्षा के लिये पृथक शिक्षक नहीं है तथा असमिया शिक्षा का माध्यम है। स्कूल में 2 ब्लॉक भवन है जो कि सरकारी भवन में स्थित है। यहाँ अनुदेशात्मक उद्देश्यों के लिये चार कक्षाएं हैं। यहां पीने का पानी का स्रोत हैंडपंप है और यहां पिछले शैक्षणिक वर्ष के दौरान छात्रों की चिकित्सा जांच आयोजित की गई थी। स्कूल में गैर शिक्षण स्टाफ नहीं है। स्कूल का छात्र शिक्षक अनुपात 61% और 62 लडकियां हैं। अ.जाति, अ.पि. वर्ग की संख्या क्रमश: 31 तथा 18 है। नामांकन दोपहर का भोजन कार्यक्रम के परिणामस्वरूप बढ़ा है और स्कूल की औसत उपस्थिति 90% है।

तालिका 4

विद्यालय में जातिवार नामांकन

कक्षा	सामान्य		अ.जाति		अ.पि. वर्ग		टी.जी.एल		योग	
	लड़के	लड़कियां	लड़के	लड़कियां	लड़के	लड़कियां	लड़के	लड़कियां	लड़के	लड़कियां
का	0	2	4	1	3	1	5	2	12	6
I	0	2	2	3	2	0	8	5	12	10
II	2	0	1	3	3	3	3	5	9	11
III	0	1	0	7	0	2	12	12	12	20
IV	3	2	4	6	1	3	9	9	8	14
योग	5	6	11	20	9	9	37	25	62	61

दोपहर का भोजन कार्यक्रम स्कूल में सुचारू रूप से चल रहा है। इसके लिये स्कूल में अस्थायी रसोई घर है। असम राज्य हाउसिंग बोर्ड ने अभी तक स्थायी रसोईघर नहीं बनाया है। चावल और अन्य बर्तनों के लिये अलग से कक्ष नहीं है। वह चावल कक्षा में रखते हैं। इस क्षेत्र में हाथियों की भी समस्या है। कभी कभी दीवार तोड़ कर स्टोर रूम में घुस जाते हैं। स्कूल में धुलाई के लिये पानी की सुविधा है इसलिये बच्चे पीने का पानी घर से लाते हैं। मीना क्लब स्कूल में छात्राओं का नामांकन बढ़ाने हेतु मदद कर रहा है और जिला गुणवत्ता स्वयं सेवक समय समय पर स्कूल का भ्रमण अध्यापकों और गांववालों को मार्गदर्शन देने हेतु करते हैं। जिला बैठकों में स्कूल में अध्यापक अधिगम में सुधार हेतु इस स्कूल का प्रतिनिधित्व करते हैं।

मातृ समूह सदस्य दोपहर का भोजन पकाने का उत्तरदायित्व लेती है और एस.एम. सी. सदस्यों तथा अध्यापकों के सहयोग से छात्रों को परोसा जाता है। वह अध्यापन, परंपरागत गीत, प्रार्थना बैठक तथा कक्षाओं के संचालन रखने में भी मदद करती है। इसलिये वह स्कूल की दैनिक गतिविधियों में संलिप्त रहती है।

स्कूल में दोपहर का भोजन हेतु निर्मित रसोई उछाल से सामुदायिक भागीदारी का उदाहरण झलकता है। वास्तव में, पूरा समुदाय ही स्कूल के विकास में कार्यरत है और इस प्रकार इस स्कूल में किसी भी प्रकार का कोई भेदभाव नहीं है। मातृ-समूह रसोईघर तथा स्कूल में स्वच्छता बनाये रखती है। शिक्षा अधिकारी, स्वच्छता अधिकारी, स्वास्थ्य कार्यकर्त्ता, अध्यापक, एस.एम.सी तथा मातृ समूह स्कूल के संपूर्ण विकास में कार्यरत हैं। इसके अतिरिक्त स्कूल के कैलेण्डर को मुद्रित कर सभी घरों में बाँटा जाता है।

समापन टिप्पणियां

स्कूल में भोजन विश्वभर में बच्चों की भूख मिटा रहा है और उनकी शिक्षा, पोषण, स्वास्थ्य तथा भविष्य की उत्पादकता में योगदान दे रहा है। विद्यालय के अधिकारी बताते हैं कि दोपहर का भोजन कार्यक्रम से स्कूल में नामांकन 10 से 12 प्रतिशत बढ़ा है। हालांकि, दोपहर का भोजन कार्यक्रम के प्रबंधन में सुधार की गुंजाईश है। प्रमुख उपलब्धि यह है कि पका हुआ भोजन नामांकन में वृद्धि कर रहा है और स्कूलों में त्याग दर कम हो रही है।

भारत में लिंग संबंध पितृसत्तात्मक है जो यह दर्शाते हैं कि महिला पुरुषों के अधीनस्थ हैं। महिलाओं और पुरुषों के बीच असमानता घर और समाज में तथा सामाजिक,

आर्थिक, सांस्कृतिक और राजनैतिक आयामों और लोगों के बीच संबंधों में परिलक्षित होती है। इसके अतिरिक्त लैंगिक समता केवल महिलाओं की दशा में परिवर्तन से नहीं आ सकती बल्कि इसके लिये व्यवस्था में परिवर्तन की जरूरत है। यह केवल बाह्य हस्तक्षेपों से नहीं आ सकती बल्कि इसके लिये स्वयं महिलाओं को परिवर्तन का अभिकरण बनना होगा। इसके अलावा लैंगिक मुख्यधारा पर यू.एन.डी.पी. मार्गदर्शन नोट असशक्तिकरण और भयभीत व्यवहार को बढ़ावा देने वाले नियमों के उन्मुलन की सिफारिश करता है, जिससे कि सभी कर्मचारियों में प्रभावी ढंग से बातचीत करने और पूरी रचनात्मकता के साथ विकास की गतिशीलता में योगदान हेतु क्षमता विकसित हो सके। इस प्रकार यह महिला सशक्तिकरण की मांग करता है, जिससे कि सामाजिक तथा राजनैतिक प्रक्रिया, निर्णय लेने की अधिक क्षमता और सामाजिक परिवर्तन के लिये सचेत कार्रवाई सुनिश्चित हो पाये। इस प्रकार महिला सशक्तिकरण अपने ही गांव और शैक्षिक कार्यक्रमों के संदर्भों और भागीदारी से प्रारंभ होना चाहिए। आंध्र प्रदेश सरकार ने सामाजिक–आर्थिक गरीबी से निपटने की रणनीतियों में से एक महिला सशक्तिकरण के विषय को चुना है। महिलाओं ने बचत के माध्यम से स्वयं सहायता समूह को चुना है । आमतौर पर महिलाओं के स्वयं सहायता समूह स्वयं खाना पकाते हैं, लेकिन कुछ मामलों में एजेंसियों ने रसोईयों को नियुक्त किया है। विभिन्न स्कूलों के आकलन से यह पता चला है कि स्थानीय मेनू के साथ स्वच्छ गर्म भोजन सामाजिक सदभाव को बढ़ावा दे रहा है। समूह से दो महिलाओं का चयन उनकी प्रभारी अवधि के दौरान दाल, खाना पकाने का ईंधन, अंडे और मसाले जैसे अन्य सामग्री के खर्च का ध्यान रखने के लिये किया जाता है। यह दो महिलाएं इस परिदृश्य में बहुत महत्वपूर्ण हो जाती हैं और वे गांव में स्वयं समूह का एक हिस्सा है। भोजन की सफलता उनके स्थानीय समुदाय की संस्कृति और परंपरा के साथ जुड़ाव और खाना पकाने में महिलाओं की रूचि पर निर्भर है। मध्याह्न भोजन योजना असम में समुदाय के स्वामित्व विकास का कार्यक्रम है। वास्तव में, सभी समुदाय मिलकर स्कूल के विकास में कार्यरत है और कोई भी सामाजिक भेदभाव गांव में नहीं पाया गया। इस दौरान, शिक्षा अधिकारी समुदाय के लोगों को स्कूल की दैनिक गतिविधियों में भाग लेने के लिये प्रोत्साहित कर रहा हैं और मातृ समूह इसका समर्थन कर रहे हैं। मातृ समूह में विद्यालय जाने वाले सभी बच्चों की माताएं सम्मिलित हैं। इसके अतिरिक्त 18 वर्ष से ऊपर कोई भी महिला इसकी सदस्या बन सकती है और एल.पी.,यू.पी., ई.जी.एस और एच.आर. केंद्रों में इनका प्रतिनिधित्व है। विद्यालय प्रबंधन

समिति अध्यापक और मातृ समिति सदस्यों के सहयोग से मध्याह्न भोजन कार्यक्रम स्कूल में चला रही है। विद्यालय प्रबंधन समिति तथा मातृ समिति में बिना भेदभाव के सभी समुदाय के लोग सम्मिलित हैं।

संदर्भ

सेंटर फार इक्विटी स्टडीज़ (2003) वेबसाईट

कट्स (2007): सेंसरिंग इफैक्टिव आफ मिड डे-मील स्कीम इन राज्स्थान, इंडिया

डी. अनुराधा नोरनोहा, क्लेरा एंड सैमरन, मीरा (2005)

इवडर्स मोर बेनिफिट फ्राम दिल्ली मिड-डे-मील स्कीम, सी.ओ.आर.डी. कौलाबेरेटिव रिसर्च एंड डिसैमिनेशनण् नई दिल्ली, अक्तूबर

देवधर सतीश (2007): मिड-डे-मील स्कीम: अंडर-स्टैडिंग क्रिटिकल इश्यूज़ विद रेफरेन्स टू अहमदाबाद सिटी, वर्किंग पेपर सं. 2007-03-03, इंडियन इंस्टीट्यूट आफ मैनेजमेंट, अहमदाबाद

गंगाघटन, बी.ए. (2006): नून मील स्कीम इन केरला

जोसेफिन, वाई एंड वेटुकरी वी. एस. राजू (2008) ए स्टडी आफ बेस्ट प्रैक्टिसेज़ इन द इंपलिमेंटेशन आफ मिड-डे-मील प्रोउडामस इन आंध्र प्रदेश, राष्ट्र शैक्षिक योजना एवं प्रशासन विश्वविद्यालय, नई दिल्ली

एन.ए.सी. (2004): रिकमडेंशन आन मिड-डे मील्स राष्ट्रीय सलाहकारी परिषद की विवेचना के आधार पर 28 अगस्त, 2004

योजना आयोग (2007): अध्याय 1, भारत सरकार

बेटुकुरी पी.एस. राजू (2009): बेस्ट प्रैक्टिसेज़ इन द इम्पलिमेंटेशन आफ मिड-डे-मील स्कीम इन असम, राष्ट्रीय शैक्षिक योजना एवं प्रशासन विश्वविद्यालय, नई दिल्ली

ज़ैदी अनी (2005): फूड फार एजुकेशन, जिल्द 22, अंक 5, 26 फरवरी से मार्च 11, फ्रंटलाईन

परिप्रेक्ष्य
वर्ष 18, अंक 3, दिसम्बर 2011

बिहार के महादलित बालकों की शिक्षा एवं उनका समावेशी विकास

कुमार संजीव*

सारांश

बिहार का महादलित समुदाय राज्य के बदलते राजनैतिक परिदृश्य की एक नयी उपज है। महादलित आयोग की रिपोर्ट (2007–08) पर राज्य सरकार ने 22 दलित समुदाय (अनुसूचित जातियों) में से 21 की पहचान महादलितों के रूप में की है। ये दलित समुदाय के सर्वाधिक सुविधा वंचित लोगों की जॅमात हैं जिनकी पहचान मुख्यत: साक्षरता के आधार पर की गयी है। जहाँ पूरे बिहार की साक्षरता दर 47% है वहीं दलित समुदाय की 28.5% और महादलित समुदाय की प्राथमिक मात्र 16.7% है। इस समुदाय में शिक्षा का स्तर काफी नीचे है। प्राथमिक और मिडिल स्तर तक की स्कूली शिक्षा हासिल करने वाले इस समुदाय के लोगों की संख्या क्रमश: 28.4 और 13.1% है। वहीं केवल 15.1% साक्षर व्यक्ति ही माध्यमिक और उच्चतर माध्यमिक स्तर तक की शिक्षा हासिल कर पाते हैं। 3.6% लोगों को स्नातक अथवा उच्च शिक्षा नसीब हो पाता है जबकि केवल 0.1% लोगों को तकनीकी और व्यावसायिक शिक्षा। महादलित समुदाय की शैक्षिक और आर्थिक समस्याओं को समझने के लिए दशकों से न तो कोई प्रयास किये गये हैं और न ही कोई शोध अध्ययन। लिहाजा महादलितों की 'शिक्षा तक पहुँच' के मसले आज भी अनसुलझे हैं। बिहार सरकार ने वर्ष 2007–08 से महादलित विकास मिशन के तहत महादलितों के समावेशी विकास के लिए 17 महत्ती परियोजनाएँ चलायी है ताकि वे समाज की मुख्यधारा में शामिल हो सकें। इसे महादलित विकास की दिशा में उठाया गया एक ऐतिहासिक कदम माना जा रहा है।

परिप्रेक्ष्य

बिहार में वंचित समुदाय के लोगों की एक लम्बी फेहरिस्त है। इसमें से 21 जातियों की पहचान महादलित के रूप में की गयी है। बिहार में महादलित समुदाय की जनसंख्या

* शिक्षा संकाय, पटना विश्वविद्यालय, पटना–800004 ई–मेल : kr.sanjeev2008@gmail.com

दलितों की कुल आबादी का 31 प्रतिशत है। दलितों की तुलना में वे सामाजिक, आर्थिक और शैक्षिक रूप से पिछड़े हैं। इस समुदाय के ज्यादातर लोगों के पास अपनी जमीन नहीं है। लिहाजा वे अपने परिवार के सदस्यों का भरण-पोषण अपने परम्परागत पेशे की बदौलत करते हैं। शैक्षिक समानता के अवसर मिलने के बावजूद वे अपने बच्चे को स्कूल भेजना मुनासिब नहीं समझते हैं। अगर बच्चे स्कूल चले भी जाएँ तो उनके सहपाठी और शिक्षक उनसे शिष्ट व्यवहार नहीं करते हैं परिणामस्वरूप प्राथमिक स्तर पर उनका छीजन दर (Drop out rate) काफी ऊँचा है। 70 फीसदी से अधिक बच्चे आज भी स्कूल से बाहर हैं।

2001 की जनगणना के अनुसार बिहार में दलितों (अनुसूचित जातियों) की जनसंख्या 1, 30, 48, 608 है जो बिहार की कुल आबादी का 15.7% है। इनमें से 93.3% आबादी ग्रामीण इलाकों में निवास करती है।

कौन हैं महादलित ?

महादलित शब्द देश और दुनिया के लिए भले ही नया हो, लेकिन यह जातिय वैविध्य वाले बिहार के बदलते राजनैतिक परिदृश्य की एक नयी उपज है। यह कोई नयी जाति नहीं है बल्कि महादलित आयोग (2007-08) की अनुशंसा पर गठित दलित समुदाय के सर्वाधिक सुविधा वंचित 21 (इक्कीस) जनजातियों: बांतर, बाउरी, भोगता, भूइयाँ, भूमिज, चौपल, दबगर, धोबी, डोम, घासी, हलालखोर, हारी, कुरियार, लालबेगी, मुसहर, नट, पासी, रजवार एवं तूरी आदि की नई जमात है। जो वर्षों से शैक्षिक, सामाजिक, आर्थिक, सांस्कृतिक तथा राजनैतिक हैसियत से काफी अधिक सुविधावंचित हैं। महादलित समुदाय की परिधि में आने वाले इन इक्कीस जातियों की पहचान मुख्यत: साक्षारता के आधार पर ही की गई है।

तालिका-1: दलितों की जनसांख्यिक प्रोफाइल

दलित जातियाँ	व्यक्ति	पुरुष	महिला	सभी दलितों में प्रतिशत
बांतर	101223	52403	48820	0.78
बाउरी	2097	1074	1023	0.02
भोगता	12659	6713	5946	0.10
भुइयाँ	568403	293027	275376	4.37

तालिका 1 क्रमशः

भूमिज	2333	1197	1136	0.02
चमार (रविदास)	4090070	2122732	1967338	31.41
चौपाल	100111	52021	48090	0.77
दबगर	3590	1813	1777	0.03
धोबी	647491	336880	310611	4.97
डोम	155383	80855	74528	1.19
दुसाध	4029411	2107535	1921876	30.94
घासी	674	365	309	0.01
हलालखोर	3960	2069	1891	0.03
हारी	181748	94035	87713	1.40
कंजर	1620	860	760	0.01
कुररियार	6566	3366	3200	0.05
लालबेगी	809	445	364	0.01
मुसहर	2112136	1093077	1019059	16.22
नट	38615	19976	18639	0.30
पान	3653	1959	1694	0.03
पासी	711389	370599	340790	5.46
रजवार	213795	109831	103964	1.64
तूरी	33638	17344	16294	0.26
अनाम (जेनरिक) जाति	27234	14500	12734	0.21
योग	**13021374**	**6770176**	**6251198**	**100.00**

स्रोतः महादलित आयोग की रिपोर्ट (2007–08), बिहार सरकार।

तालिका 2: महादलित आबादी की जिलावार जनसंख्या

जिला	कुल जनसंख्या	कुल अ.जा. जनसंख्या	दलित जनसंख्या
अररिया	2158608	293488	293279
औरंगाबाद	2013055	472766	472227
बांका	1608773	200059	198589
बेगूसराय	2349366	341173	340872
भागलपुर	2423172	254686	242386
भोजपुर	2243144	343598	343428

तालिका-2 क्रमश:

बक्सर	1402396	198014	196854
दरभंगा	3295789	511125	510392
पूर्व चंपारण	3939773	514119	513437
गया	3473428	1029675	1028978
गोपालगंज	2152638	267250	266241
जमुई	1398796	242710	241902
जहानाबाद	1514315	286217	286126
कैमूर	1289074	286291	285345
कटिहार	2392638	208384	207541
खगड़िया	1280354	185122	184959
किशनगंज	1296348	85833	84477
लखीसराय	802225	126575	126299
मधेपुरा	1526646	260461	260211
मधुबनी	3575281	481922	481603
मुंगेर	1137797	150947	105620
मुज्जफरपुर	3746714	594577	593865
नालंदा	2370528	473786	473758
नवादा	1809696	435975	435138
पटना	4718592	729988	728896
पूर्णिया	2543942	312088	310459
रोहतास	2450748	444333	442965
सहरसा	1508182	242612	242309
समस्तीपुर	3394793	628838	628397
सारण	3248701	389933	388926
शेखपुरा	525502	103732	103712
शिवहर	515961	74391	74352
सीतामढ़ी	2682720	315646	315087
सीवान	2714349	309013	306701
सुपौल	1732578	256444	256165
वैशाली	2718421	562123	561947
पश्चिम चंपारण	3043466	434714	432931
योग	**82998509**	**13048608**	**13021374**

स्रोत : महादलित आयोग की रिपोर्ट (2007-08), बिहार सरकार।

शिक्षा और साक्षरता

बिहार की दलित जनसंख्या का 31 प्रतिशत हिस्सा महादलित का है। दलितों की तुलना में वे सामाजिक-आर्थिक रूप से कमजोर तो हैं ही, इनकी शैक्षिक स्थिति भी काफी बदतर है। जहाँ पूरे बिहार की साक्षरता दर 47 प्रतिशत है, वहीं दलित समुदाय की 28.5 प्रतिशत। लेकिन महादलित के मामले में वह मात्र 16.7 प्रतिशत है।

तालिका -3

बिहार के दलित एवं महादलित समुदाय की साक्षरता दर का विवरण

समुदाय	साक्षरता दर
सामूहिक	47
दलित	28.5
महादलित	16.7

स्रोत: महादलित आयोग की रिपोर्ट (2007-08)

तालिका-4

बिहार में महादलित समुदाय का साक्षरता दर का विवरण

	महादलित	धोबी	पासी	चमार	भुईयां	मुसहर
पुरुष	28.5	43.9	40.6	32.7	13.3	9
महिला	15.2	27.9	25.3	16.8	6.5	3.9

स्रोत: महादलित आयोग की रिपोर्ट (2007-08)

तालिका 4 से स्पष्ट है कि धोबी (रजक) समुदाय की साक्षरता दर सर्वाधिक 43.9 है जबकि पासी और चमार समुदाय की साक्षरता दर क्रमश: 40.63 एवं 32.7 है। वहीं मुसहर समुदाय की साक्षरता दर सर्वाधिक कम है।

महादलित समुदाय में शिक्षा का स्तर काफी नीचे है। प्राथमिक एवं मिडिल स्तर की शिक्षा हासिल करने वाले लोगों की संख्या क्रमश: 28.4 प्रतिशत और 13.1 प्रतिशत है। वहीं केवल 15.1 प्रतिशत साक्षर व्यक्ति ही मैट्रिक एवं इंटर तक की शिक्षा प्राप्त कर

तालिका-5

महादलित समुदाय के साक्षर लोगों का ब्यौरा

महादलित समुदाय	साक्षर लोगों की संख्या	साक्षार पुरुषों की संख्या	साक्षर महिलाओं की संख्या
बांतर	14508	11894	2614
बाउरी	857	559	298
भोगता	1913	1518	395
भुइयाँ	58483	44710	13773
भूमिज	614	433	181
चमार	1022022	766525	255497
चौपाल	17568	14112	3456
दबगर	1327	889	438
धोबी	225505	156899	68606
डोम	19304	14657	4647
घासी	192	142	50
हलालखोर	1404	973	431
हारी	55541	38208	17333
कंजर	242	178	64
कुरियार	1147	883	264
लालबेगी	191	157	34
मुसहर	145268	114986	30282
नट	6483	4588	1895
पान	1776	1166	610
पासी	224389	158112	66277
रजवार	37287	29462	7825
तूरी	4923	3868	1055

स्रोत : महादलित आयोग की रिपोर्ट 2007-08

पाते हैं। केवल 3.6 प्रतिशत लोगों को स्नातक अथवा उच्च शिक्षा नसीब होती है और केवल 0.1 प्रतिशत लोगों को तकनीकी और व्यावसायिक शिक्षा।

महादलित आयोग (2007–08) की रिपोर्ट के अनुसार महादलित समुदाय में धोबी ही एक ऐसी जाति है जिसमें सर्वाधिक (19.7%) लोगों मैट्रिक तक की शिक्षा हासिल करते हैं। मुसहर और भूईयाँ जाति में माध्यमिक स्तरीय शिक्षा पाने वाले लोगों की संख्या क्रमशः 6–6 प्रतिशत है। महादलित समुदाय के 5 से 14 वर्ष वाले कुल 38.8 लाख बच्चों में केवल 11.4 लाख बच्चे ही स्कूल जाते हैं। आश्चर्य की बात यह है कि तमाम शैक्षणिक सुविधओं की उपलब्ध्ता के बावजूद 70.6 प्रतिशत (27.4 लाख) बच्चे स्कूल नहीं जाते हैं।

महादलित आयोग की रिपोर्ट (2007–08) के अनुसार शिक्षा और नौकरी में आरक्षण के प्रावधन के बावजूद महादलितों की पहुँच शिक्षा तक नहीं हो पायी है। यहाँ तक कि पूरे दलित समुदाय के लिए चली सकारात्मक कार्यवाही से समुदाय लाभान्वित नहीं हो सके हैं। बिहार के महादलित समुदाय की वर्तमान शैक्षिक स्थिति एवं समस्याओं को समझने के लिए अब तक न तो महादलित परिवारों का विस्तृत सर्वेक्षण हो सका है और न ही कोई शोध अध्ययन । इसलिए महादलितों की 'शिक्षा तक पहुँच' के मसले आज भी अनसुलझे हैं।

महादलित समुदाय के बच्चे स्कूल जाने से कतराते हैं। इन्हें लज्जा, भय जैसे अनेक किस्म के संकोच झेलने पड़ते हैं। इस कारण वे स्कूल जाने में शरमाते हैं। अगर कोई बच्चा विनम्र होकर स्कूल जाता है तब स्कूल में दूसरे बच्चे उससे सम्मानजनक व्यवहार नहीं करते हैं। अगर कहने–सुनने या दबाव में ठीक से व्यवहार करते भी हैं तब भी स्कूल के शिक्षक सम्मानजनक व्यवहार नहीं करते हैं। सदियों से धार्मिक और परम्परागत शोषण के कारण वे लाचार हैं। समाज की उपेक्षा और प्रोत्साहन के अभाव में महादलित अपने बच्चों को विद्यालय भेजने में असमर्थ हैं।

महादलितों का विद्यालयी शिक्षा के क्षेत्र में उनका पारिवारिक एवं सामाजिक माहौल भी उसके विकास में बाधक बन रहा है। कम उम्र में शादी हो जाने के कारण पारिवारिक दायित्व काफी कम उम्र में ही उनके कंधे पर आता है और वे तत्काल कोई न कोई जीवीका की खोज में जुट जाते हैं। विद्यालयी शिक्षा में बच्चों को सामाजिक एवं अन्य बाधाओं के कारण अपनी पढ़ाई बन्द करनी पड़ती है और उनका विकास अवरुद्ध हो जाता है। इनकी प्रगति अन्य छात्रों से पिछड़ी है।

तालिका 6

महादलित समुदाय के लोगों के शैक्षिक स्तरों का विवरण

महादलित समुदाय के ईकाइयों का नाम	साक्षर औपचारिक शिक्षा	प्राथमिक शिक्षा से नीचे	शैक्षिक स्तर				
			प्राथमिक	मिडिल	माध्यमिक /उच्चतर माधयमिक	तकनीकी गैर तकनीकी	परास्नातक एवं उच्च शिक्षा
सभी महादलित	6.6	33.1	28.4	13.1	15.1	0.1	3.6
भूइयाँ	15.3	44.1	26.5	7.4	6	Nil	0.6
चमार	5.9	33.6	28.5	13.4	15	0.1	3.5
धोबी	4.5	28.3	27.0	14.9	19.7	0.2	5.4
मुसहर	15.3	44.0	27.8	6.7	5.5	Nil	0.8
पासी	5.0	3.0	27.1	13.4	1.0	Nil	5.0

स्रोत : महादलित आयोग की रिपोर्ट 2007–08

महादलितों के समावेशी विकास के राजकीय प्रयास

बिहार में महादलितों एवं उनके बच्चों के शैक्षिक उत्थान के लिए निम्नलिखित प्रयास किये गये हैं

महादलित आयोग का गठन : बिहार के दलित समुदाय (अनुसूचित जाति) के सर्वाधिाक सुविधा वंचित घटकों की पहचान एवं उत्थान करने और उन्हें राष्ट्र की मुख्यधारा से जोड़ने के लिए सुशासन कार्यक्रम के अंतर्गत 30 अगस्त 2007 को राज्य महादलित आयोग का गठन किया गया। इस आयोग ने पहले 22 में से 18 अत्यंत पिछड़ी अनुसूचित जातियों की पहचान महादलित समुदाय के रूप में की और सरकार ने इन 18 जनजातियों को महादलित का दर्जा दे दिया। कालांतर में 3 और जनजातियों को इस सूची में शामिल कर लिया गया। महादलित आयोग की रिपोर्ट के पश्चात् राज्य सरकार ने महादलित उत्थान के लिए कई विकासात्मक योजनाओं की घोषणा की, जिनमें कई शैक्षिक कार्यक्रम भी शामिल हैं।

महादलित विकास हेतु सरकारी योजना : सरकार ने महादलितों के विकास हेतु निम्नलिखित योजनाएं चलायी है:

1. दशरथ माँझी कौशल विकास योजना : इस योजना का उद्देश्य है महादलित युवकों एवं युवतियों को नि:शुल्क व्यावसायिक प्रशिक्षण देकर उनके लिए रोजगार सुनिश्चित करना, जिससे महादलितों का विकास हो सके। दशरथ माँझी कौशल विकास योजना के अंतर्गत नौ व्यावसायिक प्रशिक्षण पाठ्यक्रम राज्य के जिला मुख्यालय में चलाया जा रहा है। इस योजना में महिलाओं को विशेष प्राथमिकता दी जा रही है। इस विकास योजना के तहत बेरोजगार महादलितों को अब 20 ट्रेडों में प्रशिक्षण दिया जा रहा है। इसमें 11 नये ट्रेड जोड़े जा रहे हैं। नये ट्रेड में मोटर ड्राइविंग, सिलाई-कढ़ाई, प्लंबरिंग, स्क्रीन प्रिंटिंग व डिजाइनिंग, कम्प्यूटर हार्ड्वेयर रिपेयरिंग व नेटवर्किंग, वेब डिजाइनिंग, एसी-रेफ्रिजरेटर रिपेयरिंग, एलसीडी टीवी व रेडियो मेकैनिक, टेलिकॉम इक्यूपमेंट, डीटीएच इंस्टॉलेशन इंजीनियरिंग, टेलीकॉम इंस्टॉलेशन एवं फॉल्ट रिपेयरिंग व ऑटोमोबाइल रिपेयरिंग आदि को शामिल किया गया है। फिलहाल डीटीपी व इंटरनेट, इलेक्ट्रिकल वायरिंग, कंप्यूटर, एकाउंटिंग, टैली, भवन निर्माण, ड्राफ्टमैन, भवन निर्माण, साइट सपोर्ट, सिक्यूरिटी गार्ड प्रशिक्षण, मोबाइल रिपेयरिंग, ब्यूटिशियन और हॉस्पिटलिटी व सॉलिड वेस्ट मैनेजमेंट ट्रेड में प्रशिक्षण दिया जा रहा है। पाँचवीं से इंटर पास तक के लिए अलग-अलग ट्रेड में प्रशिक्षण देने की व्यवस्था की गयी है। इसमें 15 दिन से छह माह तक के कोर्स उपलब्ध हैं । प्रशिक्षण के दौरान प्रशिक्षुओं को प्रतिदिन 75 रुपये का स्पाइपेंड भी दिया जायगा, नि:शुल्क प्रशिक्षण के साथ आवश्यक पाठ्यसामग्री और टूल किट भी दिये जाने का प्रावधन है।

2. मुख्यमंत्री महादलित पोशाक योजना: इस योजना के तहत सरकारी विद्यालय में पढ़ने वाले 1 से 5 वर्ग तक के सभी महादलित छात्र-छात्राओं को 500/-रु. पोशाक, जूता आदि क्रय करने हेतु नगद राशि उपलब्ध करायी जाती है। अगले वर्ष इस योजना के अंतर्गत पहले और दूसरे वर्ग के छात्र-छात्राओं को मिशन के द्वारा लाभान्वित किये जाने का प्रावधन है। तीसरे से पाँचवें वर्ग के छात्र-छात्राओं को मानव संसाधन विभाग द्वारा लाभान्वित किये जाने का प्रावधाान है।

3. विकास मित्र : सरकार की सभी योजनाओं को महादलितों के विकास हेतु प्रभावी ढंग से कार्यान्वयन के लिए प्रत्येक पंचायत (ग्रामीण) एवं वार्ड (शहरी) में एक-एक विकास मित्र का चयन करने की योजना है। प्रत्येक पंचायत एवं वार्ड समूह में जिस

महादलित जाति की बहुलता होगी, उसी जाति से विकास मित्र का चयन किया जा रहा है। विकास मित्र के चयन में 52 प्रतिशत महिलाओं का चयन किये जाने का प्रावधाान है। उनके लिए प्रतिमाह 3000 रुपये मानदेय सुनिश्चित किया गया है। विकास मित्र सरकार एवं महादलित परिवारों के बीच एक कड़ी की रूप में एवं महादलित समुदाय में एक 'चेंज एजेंट' के रूप में कार्य करते हैं। सम्पूर्ण राज्य में लगभग 10,000 विकास मित्रों के चयन की योजना है। सरकार उन्हें साइकिल भी मुहैया करवाई है।

4. महादलित शैचालय निर्माण योजना : सम्पूर्ण स्वच्छता अभियान के तहत व्यक्तिगत शौचालय निर्माण हेतु महादलित परिवार (लाभार्थी) के सहायतार्थ 300/- रु. प्रति परिवार को बिहार महादलित विकास मिशन की ओर से देकर नि:शुल्क शौचालय निर्माण की कार्रवाई सभी जिलों में की जा रही है। इस योजना के तहत 7.00 करोड़ की राशि मिशन के द्वारा जिला जल एवं स्वच्छता समिति को उपलब्ध करा दी गयी है जिससे 2,33,333 शौचालयों का निर्माण किया जाना है।

5. मुख्यमंत्री जीवन दृष्टि योजना : महादलितों को मुख्यधाारा में जोड़ने एवं प्रभावी जीवन दृष्टि बनाने हेतु इस योजना के तहत प्रत्येक परिवार को ट्रांजिस्टर क्रय करने के लिए 400 रुपये दिये जाते हैं।

6. सामुदायिक भवन-सह वर्कशेड : सामुदायिक भवन सह-वर्कशेड का उद्देश्य महादलित टोला में एक ऐसे भवन का निर्माण करना है जहाँ महादलितों के सामाजिक कार्यों के निर्वाहन के साथ-साथ बौद्धिक, सांस्कृतिक एवं खेल-कूद की गतिविधियों का विकास हो सके। जिला प्रशासन द्वारा चयनित एवं अनुशंसित पंचायतों जहाँ महादलितों की अधिक से अधिक आबादी है, में कम से कम एक सामुदायिक भवन निर्माण करने का लक्ष्य है।

7. सहायता (कॉल सेंटर) : 'सहायता' बिहार महादलित विकास मिशन द्वारा स्थापित पूर्णत: कम्प्यूटरीकृत आधुनिक सुविधाओं से युक्त कॉल सेंटर है। इस कॉल सेंटर की स्थापना मुख्य रूप से अनु. जाति एवं जनजाति (अत्याचार निवारण) अधिनियम 1989 एवं नियम 1995 के अंतर्गत की गयी है। 'सहायता' अनु. जाति एवं अनु. जनजाति अत्याचार निवारण अधिनियम के अंतर्गत आने वाले शिकायतों को प्राप्त करेगा और उसका समुचित निराकरण करने में अभिवंचित वर्ग की सहायता करेगा। इस कार्य के अतिरिक्त 'सहायता' बिहार महादलित विकास मिशन एवं अनु. जाति एव अनु. जनजाति कल्याण विभाग की योजनाओं से संबंधित जानकारी मांगकर्ता तक पहुँचाएगी। साथ ही

मिशन एवं विभाग से जुड़ी समस्याओं को भी लाभुकों, जो अभिवंचित वर्ग के सदस्य हैं, से प्राप्त कर समाधान के लिए संबंधित अधिकारी एवं विभाग को प्रेषित करेगीं। 'सहायता' कॉल सेंटर की तरह कार्य कर रहा है, इस हेतु एक टॉल फ्री नं. 180033456345 बी.एस.एन.एल. से लिया गया है जिस पर एक साथ 30 कॉल आने-जाने की सुविधा है।

8. महादलित आवास भूमि योजना : भूमिहीन/आवासहीन महादलित परिवारों का सर्वेक्षण कराकर, चिन्हित कर प्रति परिवार 3 डेसिमल भूमि उपलब्ध कराने का प्रावधान है। राजस्व एवं भूमि सुधार विभाग द्वारा इस हेतु एक ''हाउस साइट स्कीम'' तैयार कर इस योजना को क्रियान्वित किया जा रहा है।

9. महादलित जलापूर्ति योजना : महादलित जलापूर्ति योजना में प्रत्येक महादलित बस्ती, जिसकी आबादी कम से कम 125 हो, में एक स्वच्छ पेयजल का स्रोत उपलब्ध काराने का प्रावधान है। इससे महिलाओं को पानी लाने के लिए अतिरिक्त श्रम नहीं करना पड़ेगा, साथ ही लोगों को स्वास्थ्यगत स्थिति में सुधार आएगी।

10. मुख्यमंत्री नारी ज्योति कार्यक्रम : इस योजना के अंतर्गत महादिलत महिलाओं का स्वयं सहायता समूह गठित कर उनका आर्थिक सशक्तिकरण किया जाना है। गया, मुजफ्फरपुर, खगड़िया, नवादा जिलों में डेयरी, बकरी एवं कुक्कुट पालन हेतु स्वयं सहायता समूहों को आर्थिक सहायता दिया जा रहा है ।

11. महादलित क्रेश : महादलित बस्तियों में आंगनबाड़ी केन्द्र के साथ एक-एक क्रेश खोलने का भी प्रस्ताव है। इसमें तीन वर्ष के बच्चों की देख-रेख करने की व्यवस्था होगी। क्रेश खोलने से वे बच्चियाँ विद्यालय जा सकेंगी जिन्हें घर में बच्चों की देखभाल के लिए रुक जाना पड़ता है। प्रायोगिक स्तर पर गया जिला में इस योजना की शुरुआत की गई है।

12. धनवंतरी मोबाईल चिकित्सा योजना : महादलितों की बस्ती में स्वास्थ्य के परीक्षण के लिए विशेष मोबाईल आयुर्वेदिक वैन चलाया जा रहा है । योजना के कार्यान्वयन के संबंध में विचार-विमर्श कर एक कार्ययोजना का निर्माण किया गया है, जिसके तहत राज्य को विभिन्न जोन में बाँट कर चिकित्सा, औषधि एवं जाँच किट सहित वैन निश्चित स्थान एवं समय पर महादलित टोलों में उपलब्ध कराया जाना है। इस योजना का कार्यान्वयन स्वास्थ्य विभाग द्वारा किया जाना है। इसमें महिलाओं के स्वास्थ्य पर विशेष ध्यान दिये जाने का प्रावधान है।

13. महादलित स्वास्थ्य-कार्ड योजना : महादलित बस्ती में स्वास्थ्य परीक्षण के लिए विशेष अभियान चलाने हेतु परिवार को एक स्वास्थ्य कार्ड दिये जाने की योजना है। इस योजना का कार्यान्वियन स्वास्थ्य विभाग द्वारा किया जा रहा है।

14. सामुदायिक रेडियो : महादलित वर्ग के कालाकारों को सम्मिलित कर रेडियो कार्यक्रम तैयार किया जाएगा एवं लोकगीत, लोककथा, लोकनृत्य आदि को प्रसारित किया जाना है। अत: विभिन्न भाषा केन्द्रों पर रेडियो खोलने का प्रस्ताव है। इसमें प्राथमिकता के आधार पर उनके लोकज्ञान को तो प्रदर्शित किया जाएगा, साथ ही साथ सरकारी कार्यक्रमों की भी जानकारी दी जाएगी।

15. महादलित बस्ती सम्पर्क योजना : महादलित बस्ती सम्पर्क योजना महादलित बस्तियों को ग्रामीण पथ से जोड़ने की एक महत्वपूर्ण योजना है ।

16. अनुसूचित जाति आवासीय विद्यालय : जिले के सभी अनुसूचित जाति आवासीय विद्यालयों में केन्द्रीयकृत प्रवेश प्रणाली को लागू कराकर 60 प्रतिशत स्थान को महादलित समुदाय के लिए आरक्षित किया गया है। इसके अतिरिक्त महादलित वर्ग के छात्र-छात्राओं के लिए शिक्षण संबंधी कई योजनाओं को अंतिम रूप दिया जा रहा है। इसे शीघ्र ही कार्यान्वित किया जाना है ।

17. महादलित आँगनबाड़ी : महादलित बस्तियों में 500 परिवार पर कम-से-कम एक मिनी आँगनबाड़ी खोलने की योजना है।

निष्कर्ष

महादलित विकास मिशन के तहत बिहार सरकार द्वारा चलाये जा रहे सतरह महत्ती योजनाओं को समावेशी एवं टिकाऊ विकास की दिशा में उठाया गया एक ऐतिहासिक कदम माना जा रहा है। इससे न केवल महादलितों में नामांकन, उपस्थिति एवं छीजन जैसी समस्याओं से निजात मिलेगा बल्कि उन्हें समाज की मुख्यधारा में शामिल होने एवं टिकाऊ विकास का भागीदार होने का मौका भी मिलेगा।

संदर्भ

महादलित आयोग की रिपोर्ट (2007-08), बिहार सरकार, पटना।
समाण स्कूल प्रणाली की रिपोर्ट (2007), बिहार सरकार पटना।
अक्षय कुमार (2008) शिक्षा की मुक्ति, ग्रंथशिल्पी, नयी दिल्ली।

परिप्रेक्ष्य
वर्ष 18, अंक 3, दिसम्बर 2011

स्नातक स्तर पर सतत् एवं वार्षिक मूल्यांकन पद्धति का प्रभाव

प्रवीन देवगन* और **रीना यादव****

सारांश

किसी परीक्षा पद्धति अथवा मूल्यांकन पद्धति की औचित्यता उसमें निहित विशेषताओं की परख पर निर्भर करती है। साथ ही इस तथ्य पर भी निर्भर करती है कि शिक्षा के सन्दर्भ में निर्धारित उद्देश्यों की प्राप्ति के मूल्यांकन के सन्दर्भ में प्रयुक्त की गयी परीक्षा प्रणाली कितनी वैज्ञानिक है। शोधार्थी ने अपने शोध में सतत् एवं वार्षिक मूल्यांकन पद्धति में आगरा एवं दयालबाग विश्वविद्यालयों के विज्ञान तथा वाणिज्य संकाय के 120 छात्र-छात्राओं की अध्ययन सम्बन्धी आदतों का अध्ययन करने के लिए न्यादर्श के रूप में चयनित किया। इस अध्ययन के लिए वर्णनात्मक अनुसंधान की सर्वेक्षण विधि का प्रयोग किया गया है। अध्ययन आदतों के विभिन्न क्षेत्रों के माध्यम से तुलना करने से परिणाम के रूप में पाया गया कि मूल्यांकन की दोनों पद्धतियों सतत् एवं वार्षिक के कुछ क्षेत्रों में अध्ययन आदतों के योग में अन्तर पाया गया है। समस्त अध्ययन आदतों के योग में सतत् मूल्यांकन पद्धति के विद्यार्थियों का मध्यमान अधिक है। जबकि वार्षिक मूल्यांकन के अन्तर्गत छात्राओं की अध्ययन आदतें छात्रों की तुलना में उच्च स्तर पर हैं। सतत् एवं वार्षिक मूल्यांकन पद्धतियों में वाणिज्य संकाय के विद्यार्थियों की अध्ययन आदतों में कोई सार्थक अन्तर नहीं पाया गया है। साथ ही विज्ञान एवं वाणिज्य संकायों के विद्यार्थियों की अध्ययन आदतों के मध्य भी सार्थक अन्तर नहीं पाया गया है। परन्तु आगरा एवं दयालबाग विश्वविद्यालय के विद्यार्थियों के समय व्यवस्थापन सम्बन्धी अध्ययन आदतों के योग में अन्तर पाया गया है।

---

* प्रोफेसर, शिक्षा संकाय, दयालबाग एजूकेशनल इंस्टीट्यूट, दयालबाग, आगरा

** गृह विज्ञान, कला संकाय, दयालबाग एजूकेशनल इंस्टीट्यूट, दयालबाग, आगरा

प्रस्तावना

शिक्षा प्रकाश का वह स्रोत है, जिससे जीवन के विभिन्न क्षेत्रों में हमारा सत्य पथ प्रदर्शन होता है। शिक्षा से सभ्यता एवं संस्कृति का विकास होता है। शिक्षा ने ही मनुष्य को आदिम अवस्था के अन्धकार से मुक्ति प्रदान की है। आदिकाल से ही शिक्षा का उद्देश्य व्यक्ति तथा समाज का विकास करना रहा है। विद्यार्थी के सर्वांगीण विकास के अन्तर्गत उनके शरीर, मन और बुद्धि, आत्मा का विकास आता है। बौद्धिक विकास के अन्तर्गत ज्ञान, अवबोध, ज्ञान का प्रयोग तथा विभिन्न प्रकार के मनोगत्यात्मक कौशल आते हैं। डब्ल्यू.जॉन (1943) ने कहा कि शिक्षा ने अपने उद्देश्यों की प्राप्ति किस सीमा तक की है, इसकी एकमात्र कसौटी है 'परीक्षा'। अत: किसी भी शिक्षा पद्धति में परीक्षा प्रणाली का अत्यधिक महत्वपूर्ण स्थान है। अत: सम्पूर्ण परीक्षा प्रणाली, परीक्षा पद्धति के इर्द-गिर्द संचालित होती है। परीक्षा के लिए छात्रों को तैयार करना तथा विभिन्न विषयों में उनका मापन ही आज परीक्षा का उद्देश्य हो गया है।

प्रचलित परीक्षा प्रणाली इस सन्दर्भ में माननीय डॉ. राधाकृष्णन के नेतृत्व में शिक्षा आयोग (1948-49) ने विश्व संपूर्ण में कहा था कि यदि विद्यालय शिक्षा में हमें किसी एक सुधार को प्रस्तावित करना है तो वह परीक्षा पद्धति के द्वारा ही सम्भव होगा। तब से परीक्षा पद्धति में सुधार हेतु अनेक शोधों को गति प्रदान की गयी है। उन सुधारों को क्रियान्वित करने हेतु अनेक कदम भी उठाये गये हैं। परीक्षा पद्धति में वस्तुनिष्ठता, विश्वनीयता, वैधता तथा उपयोगिता लाने तथा उसे कहीं अधिक वैज्ञानिक बनाने हेतु कदम उठाये हैं। जैसे कि शिक्षा एवं मूल्यांकन को एकबद्ध कर दिया जाए तथा उन कौशलों एवं योग्यताओं को जाँचा जाए जो एक निश्चित अवधि के अन्त में लिखित बाह्य परीक्षा द्वारा नहीं जाँची जा सकती। मूल्यांकन प्रणाली की रचना ऐसी होनी चाहिए कि शिक्षक जो पढ़ाते हैं और विद्यार्थी जो सीखते हैं, उसे प्रभावित करने का एक शक्तिशाली माध्यम बने। केवल इतना ही नहीं, मूल्यांकन को लगातार पाठ्यवस्तु की प्रभावशीलता, कक्षायी प्रक्रियाओं और प्रत्येक शिक्षार्थी के विकास के बारे में प्रतिपुष्टि देनी होगी जो मूल्यांकन प्रक्रिया की उपयुक्तता के अतिरिक्त होगी। इस प्रकार मूल्यांकन में सूचनाओं का संग्रह, विश्लेषण एवं निर्णय लेना निहित है। मूल्यांकन दो तरह से किया जाता है।

वार्षिक मूल्यांकन पद्धति

यह मूल्यांकन पद्धति कई प्रकार की अपूर्णताओं से ग्रस्त है। यह पद्धति छात्रों की योग्यता

का सही मापन नहीं करती, क्योंकि वर्ष भर में छात्र जो पाठ्यवस्तु सीखने का प्रयास करते हैं, उसके एक अंश भर का ही मापन करती है। वर्ष में एक या दो बार आयोजित होने के कारण परीक्षा विद्यार्थियों के लिए बोझ बन जाती है। वार्षिक मूल्यांकन पद्धति में विद्यार्थियों को अंक पाने के अवसर कम मिल पाते हैं, जिसके कारण विद्यार्थी परीक्षा परिणामों को अनावश्यक महत्व देते हैं।

व्यापक सतत् मूल्यांकन पद्धति

सतत् मूल्यांकन पद्धति में कम से कम पाठ्यक्रम पर परीक्षा की विभिन्न प्रकार की विधाओं को अपना कर बालक का मूल्यांकन वर्ष भर चलता रहता है, यही सत्त मूल्यांकन है। सतत् मूल्यांकन बिना बोझ बने विद्यार्थी की सही योग्यता का मूल्यांकन कर देती है जिससे विद्यार्थी अपनी गति से प्रगति करता है और उसका सतत् विकास होता रहता है। व्यापक सतत् मूल्यांकन को अधिकृत रूप में 1986 की राष्ट्रीय शिक्षा नीति में भी स्थान दिया गया। आन्तरिक विद्यालयी मूल्यांकन सतत् मूल्यांकन है जिसके अन्तर्गत यह संभव है कि अध्यापक विभिन्न प्रकार की मूल्यांकन की विधियों और विधाओं का उपयोग करते हुए विद्यार्थी की शैक्षिक तथा शैक्षिकेतर संप्राप्ति का मूल्यांकन, सतत् रूप में कर सकता है तथा अधिकतम संप्राप्ति में उसकी सहायता निरन्तर कर सकता है।

विद्यार्थियों की शैक्षिक क्षेत्र में सफलता सम्प्राप्ति के मूल्यांकन के सन्दर्भ में परीक्षा तथा मूल्यांकन प्रविधि की भूमिका महत्वपूर्ण तो है ही, किन्तु छात्रों द्वारा शैक्षिक क्षेत्र में की जाने वाली सम्प्राप्ति उनकी महत्वाकांक्षा तथा अध्ययन सम्बन्धी आदतों पर

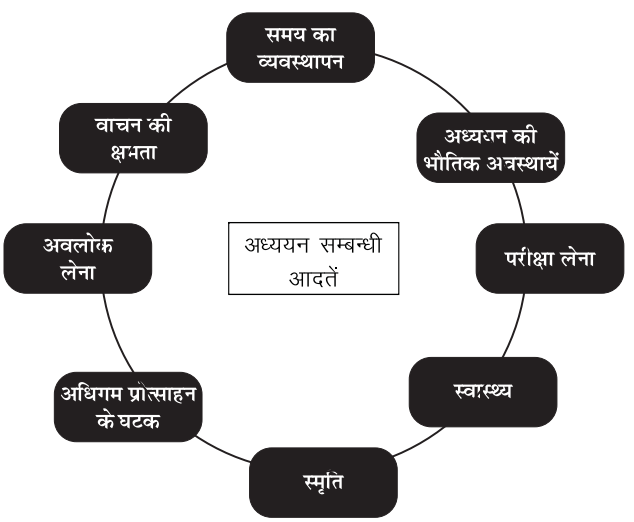

भी निर्भर करती है। अध्ययन के क्षेत्र में प्राप्त की जाने वाली सफलता मात्र योग्यता तथा कठिन परिश्रम का ही प्रतिफल नहीं है, बल्कि यह इस बात पर भी निर्भर करती है कि विद्यार्थी ने अपने अध्ययन एवं विषय की तैयारी के सन्दर्भ में कौनसी प्रभावपूर्ण विधि अपनाई है। पल्साने ने विद्यार्थियों की अध्ययन आदतों से सम्बन्धित मुख्य विधाओं को स्पष्ट किया है।

अध्ययन सम्बन्धी आदतें

विद्यार्थी के स्वयं के द्वारा किया गया अध्ययन ही अध्ययन कहलाता है। शिक्षा में पिछड़ने के मुख्य कारणों में एक है अध्ययन की कमी। किसी विद्यार्थी की पूर्ण अध्ययन उपलब्धि की क्षमता, विभिन्न कारणों से मुश्किल ही कभी महसूस की जाती है। अध्ययन सम्बन्धी समस्याओं का निराकरण करने तथा उच्च उपलब्धि प्राप्त करने लिए शिक्षक को अनुदेशों की गुणवत्ता, अध्ययन सामग्री तथा अध्ययन वातावरण में सुधार करने के प्रयास करने चाहिए। विद्यार्थी को उत्साहित करने एवं रुचि तथा कार्य प्रणाली को सुधारने के प्रयास करने चाहिए, जिससे वह अपनी पूर्ण क्षमता दिखा सके।

अध्ययन के उद्देश्य

- सतत् एवं वार्षिक मूल्यांकन पद्धति में स्नातकीय विद्यार्थियों की अध्ययन सम्बन्धी आदतों का अध्ययन करना।
- सतत् एवं वार्षिक मूल्यांकन पद्धति में स्नातकीय विद्यार्थियों की अध्ययन सम्बन्धी आदतों का तुलनात्मक अध्ययन करना।
- अध्ययन सम्बन्धी आदतों का संकायों के अनुसार अध्ययन करना।
- अध्ययन सम्बन्धी आदतों का विश्वविद्यालयों के अनुसार अध्ययन करना।

परिकल्पना

- सतत् एवं वार्षिक मूल्यांकन पद्धति में स्नातकीय विद्यार्थियों की अध्ययन सम्बन्धी आदतों में अन्तर पाया जाता है।
- सतत् एवं वार्षिक मूल्यांकन पद्धति में स्नातकीय छात्र एवं छात्राओं की अध्ययन सम्बन्धी आदतों में अन्तर पाया जाता है।
- विभिन्न संकायों के विद्यार्थियों की अध्ययन सम्बन्धी आदतों में अन्तर पाया जाता है।
- विभिन्न विश्वविद्यालयों के विद्यार्थियों की अध्ययन सम्बन्धी आदतों में अन्तर पाया जाता है।

अध्ययन के चर

- स्वतंत्र चर – अध्ययन सम्बन्धी आदतें
- आश्रित चर – स्नातकीय छात्र-छात्राऐं

अध्ययन का सीमांकन

- शोध को आगरा शहर के दो विश्वविद्यालयों, आगरा विश्वविद्यालय एवं दयालबाग विश्वविद्यालय, तक ही सीमित रखा गया।
- शोधार्थी द्वारा केवल स्नातक स्तर के छात्र-छात्राओं को ही शोध में सम्मिलित किया गया।
- शोधार्थी द्वारा आगरा विश्वविद्यालय द्वारा मान्यता प्राप्त दाऊदयाल महाविद्यालय एवं दयालबाग महाविद्यालय के वाणिज्य एवं विज्ञान संकाय को अपने शोध में शामिल किया गया है।
- शोध विश्वविद्यालयों के 120 विद्यार्थियों तक ही सीमित रखा गया है।

शोध प्रक्रिया

अध्ययन विधि : प्रस्तुत लघुशोध कार्य की प्रकृति को ध्यान में रखते हुए वर्णनात्मक अनुसंधान की सर्वेक्षण विधि का प्रयोग किया गया है।

उपकरण

स्टडी हैबिट इन्वेंटरी का चयन : प्रस्तुत लघु शोध कार्य के उद्देश्यों को ध्यान में रखते हुए प्रदत्तों के संकलन हेतु प्रश्नावली विधि द्वारा किया गया है। प्रयुक्त प्रश्नावली पल्साने तथा शर्मा द्वारा निर्मित 'स्टडी हैबिट इन्वेंटरी' है।

न्यादर्श का आकार

शोध अध्ययन हेतु 120 विद्यार्थियों का चयन यादृच्छिक प्रतिदर्शन विधि द्वारा किया गया। वर्तमान अध्ययन के सम्बन्ध में जिन इकाइयों का चयन किया गया उनका संकायानुसार विवरण के अन्तर्गत दयालबाग विश्वविद्यालय के विज्ञान संकाय के 30 छात्र-छात्राएं (15+15) तथा वाणिज्य संकाय के 30 छात्र-छात्राएं (15+15) को चयनित किया गया है।

अध्ययन में प्रयुक्त सांख्यिकीय प्रविधियाँ – प्रस्तुत अध्ययन में प्रदत्त संग्रह के अनुसार यथोचित एवं समोचित सांख्यिकीय प्रविधियों का प्रयोग किया गया है। शोध अध्ययन के अन्तर्गत मध्यमान, मानक विचलन, सततमक एवं t मूल्य के परीक्षण का प्रयोग किया गया है।

उद्देश्य-1 सतत् एवं वार्षिक मूल्यांकन पद्धति में समस्त स्नातकीय विद्यार्थियों की अध्ययन सम्बन्धी आदतों का अध्ययन करना।

तालिका-1

सतत् एवं वार्षिक मूल्यांकन पद्धति में अध्ययनरत् विद्यार्थियों की अध्ययन आदतों का अध्ययन

अध्ययन आदतों के क्षेत्र	सतत् मूल्यांकन पद्धति (संख्या-60)		वार्षिक मूल्यांकन पद्धति (संख्या-60)		सांख्यिकीय गणना	
	मध्यमान	प्रामाणिक विचलन	मध्यमान	प्रामाणिक विचलन	मानक मूल्य	सार्थकता अन्तर
समय व्यवस्थापन	7.80	1.46	7.17	1.99	1.977	< 0.05
अध्ययन की भौतिक अवस्थायें	7.72	1.29	7.37	1.39	1.430	> 0.05
वाचन की क्षमता	10.30	2.18	9.63	2.24	1.660	> 0.05
अवलोक ग्रहण करना	4.28	1.62	4.42	1.46	0.497	> 0.05
अधिगम प्रोत्साहन में घटक	8.85	1.53	8.30	2.03	1.676	> 0.05
स्मृति	5.17	1.07	4.40	1.10	3.887	< 0.05
परीक्षा लेना	12.92	2.49	12.52	2.69	0.845	> 0.05
स्वास्थ्य	3.98	1.04	3.67	1.09	1.594	> 0.05
कुल योग	61.02	7.71	57.47	9. 79	2.207	< 0.05

प्रस्तुत तालिका से पता चलता है कि समस्त आदतों के योग में सतत् मूल्यांकन पद्धति के विद्यार्थियों का मध्यमान अधिक है, क्योंकि सतत् मूल्यांकन पद्धति में नियमित कक्षाऐं लगती हैं, जिससे वहाँ के विद्यार्थियों को समय का व्यवस्थापन करना आ गया है। विद्यार्थियों को पढ़ने का उचित वातावरण मिलता है। नियमित परीक्षाओं का आयोजन होने के कारण विद्यार्थियों को अपनी शैक्षिक योग्यता का पता होता रहता है और परीक्षा में मिलने वाले अंकों से विद्यार्थी प्रोत्साहित होते हैं। साथ ही परीक्षा की तैयारी करने का कौशल भी उनमें विकास होता है। सतत् एवं वार्षिक मूल्यांकन पद्धति में अध्ययनरत् विद्यार्थियों के समय व्यवस्थापन, स्मृति तथा अध्ययन आदतों के योग में सार्थक अन्तर पाया गया है। ($p < 0.05$)

उद्देश्य-2 सतत् एवं वार्षिक मूल्यांकन पद्धति में स्नातकीय विद्यार्थियों की अध्ययन सम्बन्धी आदतों का तुलनात्मक अध्ययन करना।

तालिका-2

सतत् एवं वार्षिक मूल्यांकन पद्धति में स्नातकीय छात्रों की अध्ययन आदतों का तुलनात्मक अध्ययन

अध्ययन आदतों के क्षेत्र	सतत् मूल्यांकन पद्धति (संख्या-30)		वार्षिक मूल्यांकन पद्धति (संख्या-30)		सांख्यिकीय गणना	
	मध्यमान	प्रामाणिक विचलन	मध्यमान	प्रामाणिक विचलन	मानक मूल्य	सार्थकता अन्तर
समय व्यवस्थापन	7.47	1.59	6.17	1.88	2.892	< 0.05
अध्ययन की भौतिक अवस्थायें	7.50	1.34	7.07	1.36	1.234	> 0.05
वाचन की क्षमता	10.17	2.25	8.87	2.42	0.811	> 0.05
अवलोक ग्रहण करना	3.60	1.58	3.93	1.57	2.155	< 0.05
अधिगम प्रोत्साहन में घटक	8.50	1.61	7.50	2.06	2. 095	< 0.05
स्मृति	5.43	1.09	4.57	1.05	3.112	< 0.05
परीक्षा लेना	13.17	2.96	11.23	2.72	2.643	< 0.05
स्वास्थ्य	3.87	1.20	3.43	1.23	1.402	> 0.05
कुल योग	59.70	9.08	52.77	10.02	2.807	< 0.05

दर्शायी गयी तालिका से स्पष्ट है कि अवलोक ग्रहण करना एवं स्वास्थ्य संबंधी अध्ययन आदत में दोनों मूल्यांकन पद्धतियों के छात्रों का मध्यमान अन्य अध्ययन आदतों की तुलना में सबसे कम है। सतत् मूल्यांकन पद्धति में नियमित कक्षाऐं लगती है, विद्यार्थियों को पुस्तकों की सन्दर्भ ग्रन्थ सूची उपलब्ध कराई जाती है, जिसके कारण छात्र अवलोक ग्रहण करने में अधिक परिश्रम नहीं करते हैं।

सांख्यिकीय सार्थकता के स्तर में अन्तर देखने पर यह ज्ञात होता है कि सतत् एवं वार्षिक मूल्यांकन पद्धति में अध्ययनरत छात्रों की समय व्यवस्थापन, अवलोक ग्रहण करना, अधिगम प्रोत्साहन के घटक, स्मृति परीक्षा लेना एवं सभी अध्ययन आदतों के योग में 0.5 प्रतिशत सार्थकता के स्तर में अन्तर पाया गया है।

तालिका-3

सतत् एवं वार्षिक मूल्यांकन पद्धति में स्नातकीय छात्रओं की अध्ययन आदतों का तुलनात्मक अध्ययन

अध्ययन आदतों के क्षेत्र	सतत् मूल्यांकन पद्धति (संख्या-30)		वार्षिक मूल्यांकन पद्धति (संख्या-30)		सांख्यिकीय गणना	
	मध्यमान	प्रामाणिक विचलन	मध्यमान	प्रामाणिक विचलन	मानक मूल्य	सार्थकता अन्तर
समय व्यवस्थापन	8.13	1.23	8.17	1.55	0.111	> 0.05
अध्ययन की भौतिक अवस्थायें	7.93	1.21	7.67	1.35	0.786	> 0.05
वाचन की क्षमता	10.43	2.09	10.40	1.72	0.061	> 0.05
अवलोक ग्रहण करना	4.97	1.35	4.90	1.16	0.215	> 0.05
अधिगम प्रोत्साहन में घटक	9.20	1.35	9.10	1.64	0.258	> 0.05
स्मृति	4.90	0.98	4.23	1.12	2.466	< 0.05
परीक्षा लेना	12.67	1.89	13.80	1.96	2.275	< 0.05
स्वास्थ्य	4.10	0.83	3.90	0.87	0.911	> 0.05
कुल योग	62.33	5.75	62.17	6.86	0.098	> 0.05

समय व्यवस्थापन तथा परीक्षा लेना सम्बन्धी अध्ययन आदत में वार्षिक मूल्यांकन पद्धति की छात्राओं का मध्यमान अधिक है। वार्षिक मूल्यांकन पद्धति में कक्षाओं के लगने का समय, परीक्षा का समय आदि निश्चित नहीं होता। चूँकि छात्राओं को परीक्षा की चिन्ता पहले से ही होने लगती है जिसके कारण वह अपनी ही समय सारणी तैयार कर लेती हैं तथा उसी के अनुसार अध्ययन करती हैं। जिसके अन्तर्गत कमजोर बिन्दुओं पर अधिक ध्यान देना, परीक्षा के समय शान्त तथा आरामपूर्ण आचरण रखना आदि आते हैं। इन सभी बिन्दुओं को ध्यान में रखते हुए कहा जा सकता है कि वार्षिक मूल्यांकन पद्धति की छात्राओं का परीक्षा लेना सम्बन्धी अध्ययन आदत में मध्यमान अधिक हो सकता है। मानक मूल्यों के आधार पर दोनों मूल्यांकन पद्धतियों की छात्राओं के स्मृति परीक्षा लेना तथा सभी अध्ययन आदतों के योग में सार्थक अन्तर पाया गया है। ($p < 0.05$)

उद्देश्य-3 अध्ययन सम्बन्धी आदतों का संकायों के अनुसार अध्ययन करना।

तालिका-4

सतत् एवं वार्षिक मूल्यांकन पद्धति में अध्ययनरत् विज्ञान संकाय के विद्यार्थियों की अध्ययन आदतों का तुलनात्मक अध्ययन

अध्ययन आदतों के क्षेत्र	सतत् मूल्यांकन पद्धति (संख्या-30)		वार्षिक मूल्यांकन पद्धति (संख्या-30)		सांख्यिकीय गणना	
	मध्यमान	प्रामाणिक विचलन	मध्यमान	प्रामाणिक विचलन	मानक मूल्य	सार्थकता अन्तर
समय व्यवस्थापन	8.10	0.98	6.90	2.29	2.688	< 0.05
अध्ययन की भौतिक अवस्थायें	7.77	1.33	7.53	1.50	0.656	> 0.05
वाचन की क्षमता	10.37	2.17	9.47	2.25	1.577	> 0.05
अवलोक ग्रहण करना	4.20	1.74	4.23	1.65	0.069	> 0.05
अधिगम प्रोत्साहन में घटक	9.20	1.40	8.37	2.06	1.825	> 0.05
स्मृति	5.47	1.02	4.20	1.19	4.438	< 0.05
परीक्षा लेना	13.43	2.53	12.63	3.16	1.082	> 0.05
स्वास्थ्य	4.03	1.14	3.63	1.05	1.414	> 0.05
कुल योग	62.57	7.62	56.97	11.35	2.244	< 0.05

प्रस्तुत तालिका अवलोकन से पता चलता है कि सतत् मूल्यांकन पद्धति के विज्ञान संकाय के विद्यार्थियों का मध्यमान अंक प्रत्येक अध्ययन आदत में अधिक है। चूँकि दयालबाग संस्थान में सैद्धान्तिक कक्षाओं के साथ-साथ प्रयोगात्मक कक्षाऐं भी निरन्तर होती है: जिस कारण विद्यार्थी 'करके सीखने' के सिद्धान्त का अनुसरण करते हैं तथा वे अधिक से अधिक ज्ञानार्जित करने में सफल भी सिद्ध होते हैं। इसके विपरीत वार्षिक मूल्यांकन पद्धति में तो प्रयोगात्मक ही नहीं वरन क्रियात्मक कक्षाऐं भी समय पर नहीं होतीं इसलिए विद्यार्थी प्रयोगात्मक कार्यों को नहीं सीख पाते तथा वे पिछड़ते चले जाते हैं। जिसकी वजह से उनका मध्यमान अंक कम हो सकता है।

वार्षिक एवं सतत् मूल्यांकन पद्धति में अध्ययनरत् विज्ञान संकाय के विद्यार्थियों के समय व्यवस्थान, स्मृति एवं सभी अध्ययन आदतों के योग में सार्थक अन्तर पाया गया है। ($p<0.05$)

तालिका-5

सतत् एवं वार्षिक मूल्यांकन पद्धति में अध्ययनरत् वाणिज्य संकाय के विद्यार्थियों की अध्ययन आदतों का तुलनात्मक अध्ययन

अध्ययन आदतों के क्षेत्र	सतत् मूल्यांकन पद्धति (संख्या-30)		वार्षिक मूल्यांकन पद्धति (संख्या-30)		सांख्यिकीय गणना	
	मध्यमान	प्रामाणिक विचलन	मध्यमान	प्रामाणिक विचलन	मानक मूल्य	सार्थकता अन्तर
समय व्यवस्थापन	7.50	1.77	7.43	1.61	0.160	> 0.05
अध्ययन की भौतिक अवस्थायें	7.60	1.25	7.20	1.25	1.239	> 0.05
वाचन की क्षमता	10.23	2.19	9.80	2..21	0.757	> 0.05
अवलोक ग्रहण करना	4.37	1.49	4.60	1.23	0.652	> 0.05
अधिगम प्रोत्साहन में घटक	8.50	1.57	8.23	1.99	0.583	> 0.05
स्मृति	4.87	1.02	4.60	0.95	1.061	> 0.05
परीक्षा लेना	12.40	2.35	12.40	2.12	0.00	> 0.05
स्वास्थ्य	3.93	0.93	3.70	1.13	0.861	> 0.05
कुल योग	59.47	7.49	57.97	7.89	0.755	> 0.05

उपरोक्त तालिका के अध्ययन से यह ज्ञात होता है कि सतत् मूल्यांकन पद्धति में अध्ययनरत वाणिज्य संकाय के विद्यार्थियों का मध्यमान सभी अध्ययन आदतों में अधिक है, परन्तु अवलोक ग्रहण करना सम्बन्धी अध्ययन आदत में कम है। इसका कारण यह हो सकता है कि वार्षिक मूल्यांकन पद्धति में अध्ययनरत वाणिज्य संकाय के विद्यार्थी कक्षा में बनाये गये अवलोक तथा पुस्तकों से एकत्र किये गये अवलोक को सम्बद्ध करके निर्णायक अवलोक बनाते हैं तथा उसकी सहायता से अध्ययन करते हैं। इसके साथ ही वे इन्टरनेट, मैंगजीन आदि से भी अवलोक एकत्र कर सकते हैं। इसके विपरीत सतत् मूल्यांकन पद्धति के छात्र ऐसा नहीं करते हैं। दोनों प्रकार की मूल्यांकन पद्धतियों में अध्ययनरत् वाणिज्य संकाय के विद्यार्थियों की अध्ययन आदतों में कोई सार्थक अन्तर नहीं पाया गया है। ($p>0.05$)

तालिका-6

सतत् एवं वार्षिक मूल्यांकन पद्धति में अध्ययनरत् विज्ञान संकाय एवं वाणिज्य संकाय के विद्यार्थियों की अध्ययन आदतों का तुलनात्मक अध्ययन।

अध्ययन आदतों के क्षेत्र	सतत् मूल्यांकन पद्धति (संख्या-60)		वार्षिक मूल्यांकन पद्धति (संख्या-60)		सांख्यिकीय गणना	
	मध्यमान	प्रामाणिक विचलन	मध्यमान	प्रामाणिक विचलन	मानक मूल्य	सार्थकता अन्तर
समय व्यवस्थापन	7.50	1.86	7.47	1.69	0.092	> 0.05
अध्ययन की भौतिक अवस्थायें	7.65	1.42	7.43	1.27	0.895	> 0.05
वाचन की क्षमता	9.92	2.25	10.02	2.21	0.246	> 0.05
अवलोक ग्रहण करना	4.22	1.69	4.48	1.37	0.926	> 0.05
अधिगम प्रोत्साहन में घटक	8.78	1.81	8.37	1.80	1.244	> 0.05
स्मृति	4.83	1.28	4.73	1.00	0.477	> 0.05
परीक्षा लेना	13.03	2.89	12.40	2.24	1.335	> 0.05
स्वास्थ्य	3.83	1.11	3.82	1.04	0.051	> 0.05
कुल योग	59.77	10.07	58.72	7.73	0.641	> 0.05

उपरोक्त तालिका द्वारा स्पष्ट होता है कि दोनों मूल्यांकन पद्धतियों में अध्ययनरत् विज्ञान एवं वाणिज्य संकाय के विद्यार्थियों के मध्यमान अंक अवलोक ग्रहण करना, स्मृति तथा स्वास्थ्य सम्बन्धी अध्ययन आदतों में सबसे कम रहे हैं। स्मृति सम्बन्धी अध्ययन आदत को नहीं लिया गया है। स्मृति के सुधारीकरण से तात्पर्य है अपेक्षाकृत अच्छा अध्ययन। सतत् और वार्षिक मूल्यांकन पद्धति में अध्ययनरत् विज्ञान संकाय एवं वाणिज्य संकाय के विद्यार्थियों की अध्ययन आदतों में कोई सार्थक अन्तर नहीं पाया गया है। ($p>0.05$)

उद्देश्य-4 अध्ययन सम्बन्धी आदतों का विश्वविद्यालयों के अनुसार अध्ययन करना।

तालिका-7 द्वारा यह ज्ञात होता है कि दयालबाग विश्वविद्यालय के छात्रों के मध्यमान अंक समय व्यवस्थापन, अध्ययन की भौतिक अवस्थाऐं, वाचन की क्षमता सम्बन्धी अध्ययन आदतों में आगरा विश्वविद्यालय के छात्रों की अपेक्षा अधिक है। परन्तु अवलोक

तालिका-7

दयालबाग विश्वविद्यालय एवं आगरा विश्वविद्यालय में अध्ययनरत् विद्यार्थियों का समय व्यवस्थापन, अध्ययन की भौतिक अवस्थाएँ, वाचन की क्षमता एवं अवलोक ग्रहण करना सम्बन्धी अध्ययन आदतों का तुलनात्मक अध्ययन।

अध्ययन आदतें	लिंग	संख्या	दयालबाग विश्वविद्यालय		संख्या	आगरा विश्वविद्यालय		सांख्यिकीय गणना	
			मध्यमान	प्रामाणिक विचलन		मध्यमान	प्रामाणिक विचलन	मानक मूल्य	सार्थकता अन्तर
समय व्यवस्थापन	छात्र	30	7.47	1.59	30	6.17	1.88	2.892	>0.05
	छात्राएं	30	8.13	1.23	30	8.17	1.55	0.11	>0.05
	विद्यार्थी	60	7.80	1.46	60	7.17	1.99	1.977	<0.05
अध्ययन की भौतिक अवस्थाएँ	छात्र	30	7.50	1.34	30	7.07	1.36	1.234	>0.05
	छात्राएं	30	7.93	1.21	30	7.67	1.35	0.786	>0.05
	विद्यार्थी	60	7.72	1.29	60	7.37	1.39	1.430	>0.05
वाचन की क्षमता	छात्र	30	10.17	2.25	30	8.87	2.42	0.811	>0.05
	छात्राएं	30	10.43	2.09	30	10.40	1.72	0.061	>0.05
	विद्यार्थी	60	10.30	2.18	60	9.60	2.24	1.660	>0.05
अवलोक ग्रहण करना	छात्र	30	3.60	1.58	30	3.93	1.57	2.155	<0.05
	छात्राएं	30	4.97	1.35	30	4.90	1.16	0.215	>0.05
	विद्यार्थी	60	4.28	1.62	60	4.42	1.46	0.497	>0.05

ग्रहण करना सम्बन्धी अध्ययन आदत में मध्यमान अंक कम है। क्योंकि दयालबाग में निरन्तर कक्षायें लगती हैं तथा छात्र अध्यापक द्वारा पढ़ायी गयी विषय सामग्री को अपनी अभ्यास पुस्तिका में लिखते हैं। अधिकांश परीक्षा में वे अध्यापक द्वारा दी गयी विषय सामग्री से ही अध्ययन करते हैं। परन्तु आगरा विश्वविद्यालय में कक्षाऐं कम लगती जिससे वहाँ के छात्र अन्य स्रोतों जैसे-इन्टरनेट, मैगजीन, पुस्तकों, अखबारों आदि से भी अवलोक एकत्र करते हैं। जिसके कारण उनके मध्यमान अंक अधिक हो सकते हैं।

इसी प्रकार दयालबाग विश्वविद्यालय की छात्राओं के मध्यमान अंक अध्ययन की भौतिक अवस्थाऐं, वाचन की क्षमता, अवलोक ग्रहण करना सम्बन्धी अध्ययन आदतों में आगरा विश्वविद्यालय की छात्राओं की अपेक्षा अधिक है परन्तु समय व्यवस्थापन सम्बन्धी अध्ययन आदत में कम है। इसका कारण यह है कि आगरा विश्वविद्यालय की छात्राएं अध्ययन के लिए अधिक जागरुक हैं जिसके कारण वह अपना पढ़ने का समय व अन्य कार्यों का समय सुलभता के आधार पर निश्चित करती हैं।

सार्थकता के स्तर में अन्तर देखने पर यह ज्ञात होता है कि दोनों विश्वविद्यालयों के विद्यार्थियों के समय व्यवस्थापन सम्बन्धी अध्ययन आदत के मध्यमान योग में सार्थक अन्तर पाया गया है तथा अवलोक ग्रहण करना सम्बन्धी अध्ययन आदत में छात्रों के मध्यमान अंक में सार्थक अन्तर पाया गया है। ($p>0.05$)

तालिका-8 से यह पता चलता है अधिगम प्रोत्साहन के घटक, स्मृति, परीक्षा लेना तथा स्वास्थ्य सम्बन्धी अध्ययन आदतों में दयालबाग विश्वविद्यालय के छात्रों के मध्यमान अंक अधिक हैं तथा आगरा विश्वविद्यालय के लड़कों के मध्यमान अंक कम हैं। दयालबाग विश्वविद्यालय की छात्राओं के मध्यमान अंक अधिगम प्रोत्साहन के घटक, स्मृति तथा स्वास्थ्य सम्बन्धी अध्ययन आदतों में आगरा विश्वविद्यालय की छात्राओं की अपेक्षा अधिक है। परन्तु परीक्षा लेना सम्बन्धी अध्ययन आदत में आगरा विश्वविद्यालय की छात्राओं का मध्यमान अंक अधिक है।

इसका कारण यह है कि आगरा विश्वविद्यालय की छात्राएं परीक्षा के सन्दर्भ में अधिक जागरुक हैं क्योंकि उन्हें परीक्षा में उत्तीर्ण होने के एक या दो अवसर ही मिलते हैं परन्तु दयालबाग की छात्राओं को अधिक अवसर मिलते हैं जिससे वे परीक्षा पर अधिक ध्यान नहीं देतीं। स्मृति सम्बन्धी अध्ययन आदत में दोनों विश्वविद्यालय के लड़के, लड़कियों के मध्यमान अंक तथा मध्यमान योग में सार्थक अन्तर पाया गया है। परीक्षा लेना सम्बन्धी अध्ययन आदत में दोनों विश्वविद्यालय के छात्र व छात्राओं के मध्यमान अंक में सार्थक अन्तर पाया गया है। सार्थकता के स्तर में अन्तर देखने पर यह

तालिका-8

दयालबाग विश्वविद्यालय एवं आगरा विश्वविद्यालय में अध्ययनरत् विद्यार्थियों का अधिगम प्रोत्साहन के घटक, स्मृति, परीक्षा लेना एवं स्वास्थ्य सम्बन्धी अध्ययन आदतों का तुलनात्मक अध्ययन

अध्ययन आदतें	लिंग	संख्या	दयालबाग विश्वविद्यालय		संख्या	आगरा विश्वविद्यालय		सांख्यिकीय गणना	
			मध्यमान	प्रामाणिक विचलन		मध्यमान	प्रामाणिक विचलन	मानक मूल्य	सार्थकता अन्तर
अधिगम प्रोत्साहन के घटक	छात्र	30	8.50	1.61	30	7.50	2.06	2.095	<0.05
	छात्राएं	30	9.20	1.85	30	9.10	1.64	0.258	>0.05
	विद्यार्थी	60	8.85	1.53	60	8.30	2.03	1.676	>0.05
स्मृति	छात्र	30	5.43	1.09	30	4.57	1.05	3.122	<0.05
	छात्राएं	30	4.90	0.98	30	4.23	1.12	2.466	<0.05
	विद्यार्थी	60	5.17	1.07	60	4.40	1.10	3.887	<0.05
परीक्षा लेना	छात्र	30	13.17	2.96	30	11.23	2.72	2.643	<0.05
	छात्राएं	30	12.67	1.89	30	13.80	1.96	2.265	<0.05
	विद्यार्थी	60	12.92	2.49	60	12.52	2.69	0.845	>0.05
स्वास्थ्य	छात्र	30	3.87	1.20	30	3.43	1.23	1.402	>0.05
	छात्राएं	30	4.10	0.83	30	3.90	0.87	0.911	>0.05
	विद्यार्थी	60	3.98	1.04	60	3.67	1.09	1.594	>0.05

ज्ञात होता है कि दोनों विश्वविद्यालय के छात्रों के अधिगम प्रोत्साहन के घटक सम्बन्धी अध्ययन आदत में सार्थक अन्तर पाया गया है। ($p<0.05$)

शोध कार्य की उपलब्धियाँ एवं निष्कर्ष

उद्देश्य-1 सतत् एवं वार्षिक मूल्यांकन पद्धति में स्नातकीय विद्यार्थियों की अध्ययन सम्बन्धी आदतों का अध्ययन करना।

सतत् मूल्यांकन पद्धति एवं वार्षिक मूल्यांकन पद्धति में अध्ययनरत् विद्यार्थियों की समय व्यवस्थापन, स्मृति तथा अध्ययन आदतों के योग में सार्थक अन्तर पाया गया है। इस प्रकार शोधार्थी द्वारा बनायी गयी परिकल्पना स्वीकृत होती है।

उद्देश्य-2 सतत् एवं वार्षिक मूल्यांकन पद्धति में स्नातकीय विद्यार्थियों की अध्ययन सम्बन्धी आदतों का तुलनात्मक अध्ययन करना।

सतत् मूल्यांकन पद्धति में पढ़ने वाले छात्रों का मध्यमान अंक अवलोक गृहण करना सम्बन्धी अध्ययन आदत को छोड़कर अन्य सभी अध्ययन आदतों में अधिक है। जबकि वार्षिक मूल्यांकन पद्धति में अध्ययनरत् छात्रों का मध्यमान अंक अवलोक गृहण करना सम्बन्धी अध्ययन आदत में अधिक है।

समय व्यवस्थापन, अवलोक गृहण करना, स्मृति परीक्षा लेना तथा समस्त अध्ययन आदतों के योग में सार्थक अन्तर पाया गया है। परिणाम स्वरूप शोधार्थी द्वारा निर्मित परिकल्पना स्वीकृत होती है।

सतत् मूल्यांकन पद्धति में अध्ययनरत् छात्राओं का अध्ययन की भौतिक अवस्थाएँ, वाचन की क्षमता, अवलोक गृहण करना, अधिगम प्रोत्साहन के घटक, स्मृति स्वास्थ्य, एवं सभी अध्ययन आदतों के योग के माध्यमिक अंक अधिक हैं, जबकि वार्षिक मूल्यांकन पद्धति में पढ़ने वाली छात्राओं के मध्यमान अंक समय व्यवस्थापन तथा परीक्षा लेना सम्बन्धी अध्ययन आदतों में अधिक है।

एमद्द नैन्सी (2007) द्वारा किये गये अध्ययन में भी यही पाया गया कि छात्राएँ अवलोक गृहण करने में अधिक तत्परता दिखाती हैं जबकि छात्र केवल कक्षा में बनाये गये अवलोक पर ही निर्भर रहते हैं।

इसके विपरीत वार्षिक मूल्यांकन पद्धति की छात्राओं के मध्यमान अंक स्मृति सम्बन्धी अध्ययन आदत को छोड़कर अन्य सभी अध्ययन आदतों में अधिक है।

जबकि संतविजय (2007) द्वारा किये गये अध्ययन में भी पाया गया कि छात्राओं की तुलना में छात्रों की अध्ययन आदतें उच्च स्तर की होती है।

उद्देश्य-3 अध्ययन सम्बन्धी आदतों का संकायों के अनुसार अध्ययन करना।

सतत् मूल्यांकन के विज्ञान संकाय के विद्यार्थियों के मध्यमान अंक अवलोक ग्रहण करना सम्बन्धी अध्ययन आदत को छोड़कर अन्य सभी अध्ययन आदतों में अधिक हैं। समय व्यवस्थापन, स्मृति तथा कुल योग में दोनों के मध्य सार्थक अन्तर पाया गया है। दृष्टिगोचर करते हुए कहा जा सकता है कि शोधार्थी द्वारा निर्मित परिकल्पना स्वीकृत हुई है।

जबकि सतत् मूल्यांकन पद्धति में अध्ययनरत् वाणिज्य संकाय के विद्यार्थियों के मध्यमान अंक अवलोक गृहण करना सम्बन्धी अध्ययन आदत को छोड़कर अन्य सभी अध्ययन आदतों में अधिक हैं। दोनों पद्धतियों में अध्ययनरत् वाणिज्य संकाय के विद्यार्थियों की अध्ययन आदतों में कोई सार्थक अन्तर नहीं पाया गया है।

यदि सतत् मूल्यांकन पद्धति के विद्यार्थियों की अध्ययन आदतों का अवलोकन करें तो विज्ञान संकाय के विद्यार्थियों के मध्यमान अंक सभी अध्ययन आदतों में अधिक हैं जबकि वाणिज्य संकाय के विद्यार्थियों के मध्यमान अंक अवलोक ग्रहण करना सम्बन्धी अध्ययन आदत में अधिक हैं। दोनों के मध्य केवल परीक्षा लेना सम्बन्धी अध्ययन आदत में सार्थक अन्तर पाया गया है।

इसके विपरीत वार्षिक मूल्यांकन पद्धति के वाणिज्य संकाय के विद्यार्थियों के मध्यमान अंक विज्ञान संकाय के विद्यार्थियों की तुलना में अधिकांश अध्ययन आदतों में अधिक हैं। जबकि अध्ययन की भौतिक अवस्था अधिगम प्रोत्साहन के घटक, परीक्षा लेना सम्बन्धी अध्ययन आदतों में विज्ञान संकाय के विद्यार्थियों के मध्यमान अंक अधिक हैं। दोनों संकायों के विद्यार्थियों की अध्ययन आदतों के मध्य सार्थक अन्तर नहीं पाया गया है। यहाँ पर शाधार्थी द्वारा बनायी गयी परिकल्पना अस्वीकृत होती है।

सुनीता सिंह (2008) द्वारा किये गये अध्ययन में भी यही पाया गया कि छात्रों की अपेक्षा छात्राओं की अध्ययन आदतें श्रेष्ठ थीं। दोनों सकायों के विद्यार्थियों की अध्ययन आदतों के मध्य सार्थक अन्तर नहीं पाया गया है।

उद्देश्य-4 अध्ययन सम्बन्धी आदतों का विश्वविद्यालयों के अनुसार अध्ययन करना।

दयालबाग़ विश्वविद्यालय के छात्रों के मध्यमान अंक समय व्यवस्थापन, अध्ययन की भौतिक अवस्थाएँ, वाचन की क्षमता सम्बन्धी अध्ययन आदतों में आगरा विश्वविद्यालय के छात्रों की अपेक्षा अधिक है, परन्तु अवलोक ग्रहण करना सम्बन्धी अध्ययन आदत में कम है।

इसी प्रकार दयालबाग विश्वविद्यालय की छात्राओं के मध्यमान अंक अध्ययन की भौतिक अवस्थायें, वाचन की क्षमता, अवलोकन गृहण करना सम्बन्धी अध्ययन आदतों

में आगरा विश्वविद्यालय की छात्राओं की अपेक्षा अधिक है परन्तु समय व्यवस्थापना सम्बन्धी अध्ययन आदत में कम है।

दोनों विश्वविद्यालयों के विद्यार्थियों के समय व्यवस्थापन सम्बन्धी अध्ययन आदत के मध्यमान योग में सार्थक अन्तर पाया गया है तथा अवलोक ग्रहण करना सम्बन्धी अध्ययन आदत में छात्रों के मध्यमान अंक में सार्थक अन्तर पाया गया हैं। अत: शोधार्थी द्वारा परिकल्पना स्वीकृत होती है।

इसके अलावा दयालबाग़ विश्वविद्यालय की छात्राओं के मध्यमान अंक अधिगम प्रोत्साहन के घटक, स्मृति तथा स्वास्थ्य सम्बन्धी अध्ययन आदतों में आगरा विश्वविद्यालय की छात्राओं की अपेक्षा अधिक है। परन्तु परीक्षा लेना सम्बन्धी अध्ययन आदत में आगरा विश्वविद्यालय की छात्राओं का मध्यमान अंक अधिक है। दोनों विश्वविद्यालय के छात्रों के अधिगम प्रोत्साहन के घटक सम्बन्धी अध्ययन आदत में सार्थक अन्तर पाया गया है। परीक्षा लेना सम्बन्धी अध्ययन आदत में दोनों विश्वविद्यालय के छात्रों व छात्राओं के मध्यमान अंकों में सार्थक अन्तर पाया गया है।

उपलब्धियों एवं निष्कर्षों का शिक्षा में उपयोग

प्रस्तुत अध्ययन की उपलब्धियों एवं निष्कर्षों को दृष्टिगोचार करके शिक्षा में विद्यार्थियों की अध्ययन आदतों आदि में कुछ सुधार लाये जा सकते हैं–

विद्यालय प्रबन्धक : विद्यालय प्रबन्धक अपने विद्यालय के वातावरण में सुधार ला सकते हैं जिससे विद्यार्थियों को पढ़ने योग्य वातावरण मिल सके तथा उनके स्वास्थ्य पर भी अनुकूल प्रभाव पड़े। ये सुधार – हवादर व प्रकाश युक्त कक्ष, खेल-कूद का पर्याप्त स्थान, पुस्तकालय का प्रावधान, आदि हो सकते हैं।

अध्यापक : अध्यापक अपने अध्यापन की विधियों में परिवर्तन ला सकते हैं। वे विद्यार्थियों को अवलोक संग्रह की विधियों से अवगत करा सकते हैं तथा विद्यार्थियों की समस्याओं को सुनकर उनका समाधान कर सकते हैं, प्रतिदिन कक्षा में उपस्थित होकर आदि।

विद्यार्थी : विद्यार्थी भी स्वयं को दिशानिर्देशित कर सकते है: वे यह पता लगा सकते हैं कि उनमें कौन सी अध्ययन आदतों का अभाव है जिनके द्वारा वह अपनी कक्षा में पिछड़ रहे हैं। यदि विद्यार्थी औसत अथवा निम्न बौद्धिक क्षमता से ग्रस्त है किन्तु वह सकारात्मक अध्ययन आदतों को अपनाता है तथा परिश्रम करता है तो निश्चित ही उसकी बौद्धिक क्षमता उसके सफलता के मार्ग में बाधक सिद्ध नहीं होती है क्योंकि सकारात्मक अध्ययन आदतें उसकी उच्च शैक्षिक उपलब्धि को प्राप्त करने में सहायता प्रदान करती हैं। यदि विद्यार्थी की नकारात्मक अध्ययन आदतें हैं तो सभी का यह उत्तरदायित्व हो जाता है कि

विद्यार्थियों में सकारात्मक अध्ययन आदतें विकसित कर उन्हें उच्च शैक्षिक उपलब्धि की प्राप्ति का अनुगामी बनाएँ।

अभिभावक : अभिभावक को भी निर्देशित किया जा सकता है। उन्हें यह बताया जा सकता है कि वे विद्यार्थियों के लिए समय सारणी का निर्माण करें जिससे उनमें समय व्यवस्थापन सम्बन्धी अध्ययन आदत का निर्माण हो सके। साथ ही उनके स्वास्थ्य पर भी विशेष ध्यान दें।

शिक्षाविद अथवा समाजशास्त्री : शिक्षाविद अथवा समाजशास्त्री शिक्षा के तरीकों में बदलाव ला सकते हैं जिसके द्वारा विद्यार्थियों की अध्ययन आदतों में सुधार लाया जा सके। वे सतत् मूल्यांकन पद्धति को विद्यालयों में अनिवार्य कर सकते हैं।

सन्दर्भ

अग्रवाल, वी.पी. एंड सैनी, वी.पी. (1964); *''पैटर्न आफ स्टडी हैविट्स एंड इट्स रिलेशनशिप विद अचीवमेंट्स पेरेन्ट्स, इकॉनमिक एंड एजुकेशनल स्टेट्स''*, जर्नल आफ एजुकेशनल रिसर्च एंड एक्सटेंशन, वाल्यूम-4, पी.पी. 19-25

भदवाल, एस.सी. (2004); *''एन इवाल्यूशन आफ स्टडी हैविट्स आफ रूरल प्राइमरी स्कूल स्टूडेंट्स''*, एशियन जर्नल आफ डवलपमेंट मैटर्स, वाल्यूम-4, पी.पी. 261-271

कुलर, रिचर्ड जे. (2003); *''एन इन्स्ट्रूमेंट फार द असैसमेंट आफ स्टडी बिहेवियर आफ कॉलेज स्टूडेंट्स''*, जर्नल आफ एजुकेशनल रिसर्च एंड एक्सटेंशन; वाल्यूम-5, पी.पी. 449-455

मुहम्मद खान, एस. (2009); *''स्ट्डी हैविट्स ऑफ हाई एंड लो एकेडमिक अचीव्स एट सेकेण्डरी लेवल इन पाकिस्तान''*, जर्नल आफ एजुकेशनल रिसर्च, वाल्यूम-3, पी.पी. 160-169

शर्मा, एन. (2000); *''रिलेशन अमंग स्टडी हैविट एंड स्किल आफ पॉलीटैक्निक स्टूडेंट्स''*, न्यू एजुकेशन एकेडमिक मैग्जीन, जर्नल, जनवरी-जून 2001, पी.पी. 85-87

सिंह पी. (2000); *''रिलेशन विटवीन इमोशनल स्टेबिलिटी एंड स्टडी हैविट''*, इंडियन रिसर्च मैग्जीन, जनवरी-जून 2006, पी.पी. 10-11

सिंह, एस. (2008); *''स्टडी हैविट्स इन हाई रिलेशन टू एकेडमिक इन हाई स्कूल स्टूडेंट्स''*, जर्नल आफ एजुकेशनल स्ट्डीज, वाल्यूम-17, पी.पी. 291-299

थाथोंन्ग, एन. (2000); *''द कैजुअल रिलेशनशिप आफ स्टडी हैविट्स मोटिवेशन अचीवमैन्ट, स्टेटिक्स अटीट्यूड''*, जर्नल आफ एजुकेशनल रिसर्च एंड एक्सटेंशन, वाल्यूम-6, पी.पी. 29-35

वैबसाईट

www.alchoholiymd.com/pdf/studyhabits.
www.csd.uwa.edu.cw/ced2007/abstract.
www.encyclopedia.com/pdf/studyhabits.
www.herdsa.orgau/cop.content/studyhabits.
www.highbeam.com/pdf/studyhabits.
www.ideas.respec.org/a/taf.edu.com/vol-12,year2004.

परिप्रेक्ष्य
वर्ष 18, अंक 3, दिसम्बर 2011

ग्राम शिक्षा समितियों की भूमिका एवं उनका उत्तरदायित्व

प्रशान्त अग्निहोत्री* और **धीरज कुमार रस्तोगी****

सारांश

पंचायत शब्द की व्युत्पत्ति संस्कृत भाषा के शब्द पंचायतन से हुई है जिसका अर्थ है पाँच व्यक्तियों का समूह। महात्मा गाँधी ने भी पंचायत का शाब्दिक अर्थ गांव के लोगों द्वारा चुने हुए पाँच व्यक्तियों की सभा से लिया है। यह संकल्पना कोई नई राजनीतिक-दार्शनिक संकल्पना नहीं है अपितु प्राचीन भारत में पंचायतें अपने समग्र रूप में ऐसी संस्थाएँ होती थीं जिनका मार्गदर्शन ग्रामीण अपने नित्य-प्रतिदिन के जीवन में प्राप्त करते थे। पंचायतों के माध्यम से ही ग्रामीण नेता अपनी समस्याएँ सुलझाते थे। इसका अभिलेखबद्ध प्रमाण है कि ***भारत में प्राचीन काल से ही ग्राम प्रशासन की धुरी बना रहा है। इसका महत्व उस युग में वास्तव में बहुत था, जब संचार व्यवस्था धीमी थी और औद्योगिकीकरण का कोई नाम तक नहीं जानता था। वैदिक युग में छोट-छोटे मुकाम होते थे, जिनके कारण ग्राम का महत्व और बढ़ गया था। ग्राम सामाजिक जीवन के वास्तविक केन्द्र बिन्दु और देश की अर्थव्यवस्था के महत्वपूर्ण समंक होते थे।''*** पंचायतों द्वारा प्राचीन भारत के सामाजिक, आर्थिक, प्रशासनिक जीवन को प्रभावित करने की महत्वपूर्ण भूमिका का निरूपण इस तथ्य में सन्निहित था कि ग्रामीण जनता शहरी जनता से अपनी बातें मनवा सकती थी।

सामाजिक जीवन के किसी पहलू का शायद ही कोई मामला ग्राम-पंचायतों से अछूता बचता था, ग्राम जीवन की इस स्थिरता से पारस्परिक सम्मान, आपसी विश्वास और सुरक्षा की उत्कट भावना प्रवाहित होती थी। प्राचीन ग्राम पंचायत के महत्व का

* सहायक आचार्य, स्नातकोत्तर एवं शोध अध्ययन शिक्षा विभाग, स्वामी शुकदेवानन्द स्नातकोत्तर महाविद्यालय, शाहजहाँपुर, उ.प्र.

** शोध-छात्र, महात्मा ज्योतिबा फुले रुहेलखंड विश्वविद्यालय, बरेली

निरूपण करते हुए डॉ. अल्तेकर कहते हैं कि ***"प्राचीन भारत की ग्राम परिषदों की शक्तियां सम्भवत: इतनी व्यापक थीं, जितनी किसी पूर्वी अथवा पश्चिमी प्राचीन अथवा आधुनिक राजतंत्र के उन जैसे निकायों के पास नहीं थीं। वे केन्द्रीय सरकार की ओर से राजस्व वसूल करती थीं, दमनात्मक करों की वसूली करने से इन्कार कर देती थीं, ग्राम के विवादों का निपटारा करती थीं, सार्वजनिक उपयोगिता के कार्यों का आयोजन करती थीं। ग्राम परिषदों के सदस्य निर्वाचित नहीं किये जाते थे, बल्कि उन्हें यह पद जनता की सर्वसम्मति से प्राप्त होता था।"***

वैदिक काल के साहित्य में ग्रामीण स्वशासी राजकीय संस्थाओं की संगठित व्यवस्था के सम्बन्ध में कतिपय प्रसंग उपलब्ध है। उस समय का राज्य तात्विक रूप में देशीय राज्य (कंट्री स्टेट, आधुनिक युग में जिसे राष्ट्र राज्य ***"नैशन स्टेट"*** कहा जाता है) था, जिसके अन्तर्गत **'ग्राम'** प्रशासन की मूल इकाई था। ग्राम का एक महत्वपूर्ण अधिकारी होता था जिसे **'ग्रामिणी'** कहा जाता था। मनुस्मृति में उन्हें **'ग्रामिक'** कहा गया है।

रामायण, महाभारत, हितोपदेश, ऋग्वेद, मनुस्मृति तथा **कौटिल्य अर्थशास्त्र** में भी प्राचीन भारत में स्थानीय स्वशासन अर्थात् पंचायतों का उल्लेख मिलता है। बाल्मीकि रामायण में दो तरह के ग्रामों – **घोष** अथवा **दाणी** तथा ग्राम के दो तरह के पदाधिकारियों **घोष-मनहार** अथवा **ग्राम-मनहार** का वर्णन आता है।

जैन तथा बौद्ध साहित्य में ग्राम्य जीवन के विविध आयामों पर प्रकाश डाला गया है। ग्रामीण अपनी सार्वजनिक आवश्यकताओं के लिए सामूहिक रूप से श्रमदान करते थे। बुद्ध तथा महावीर द्वारा स्थापित धर्म संघों के अन्तर्गत महत्वपूर्ण निर्णयों हेतु अत्यन्त प्रजातांत्रिक पद्धति का प्रयोग किया जाता था।

चीनी यात्री फाह्यान ने भी प्राचीन ग्राम संगठन के सम्बन्ध में अपने वृत्तान्त में लिखा है – **"ग्राम का संगठन आर्थिक और रक्षात्मक स्वावलम्बन के विचारों पर आधारित होता है। यह ग्राम राज्य का ही प्रत्यक्ष फल है। वे लोग स्वेच्छा से बंधुता के नियमों का पालन करते हैं तथा शान्तिप्रिय और उन्नतिशील हैं।"**

सल्तनत एवं मुगल काल में गांवों की राजनीतिक स्थिति कुछ कम हुई, क्योंकि सल्तनतकालीन प्रशासन मुख्यत: सैनिक प्रशासन था। मुस्लिम सुल्तान कानून और सिद्धान्त के दृष्टिकोण से निरंकुश थे। इस काल में भी शासन विधान का सबसे अन्तिम

हिस्सा ग्राम ही समझा जाता था। ग्राम स्तर पर ग्राम का प्रधान होता था जो **'मुकद्दम'** कहलाता था।

ब्रिटिश काल में ग्राम पंचायत व्यवस्था

भारत में स्थानीय स्वशासन के आधुनिक काल का प्रारम्भ ब्रिटिश शासन से माना जाता है। ब्रिटिश शासन के दौरान ग्रामीण समुदायों का पार्थक्य पूर्ण रूप से समाप्त हो गया था तथा युगों से चली आ रही इनकी आत्म निर्भरता भी समाप्त हो गयी थी। क्योंकि अंग्रेज मानते थे कि भारतीय प्रजातांत्रिक संस्थाएं शासन चलाने के अयोग्य है। इसलिए वे आरम्भ से ही भारतीयों को कोई शक्ति एवं उत्तरदायित्व देने के पक्ष में नहीं थे। इस काल में भारत के परम्परागत स्थानीय स्वशासन के जो कुछ अवशेष मुगलकाल में बचे थे, वे भी समाप्त हो गये। लेकिन यह भी सही है कि ब्रिटिश काल में ही कुछ समय पश्चात् पंचायतों का नया रूप उभरकर आया, जिसे पंचायतों का पुनरोदय कहा जा सकता है और आधुनिक पंचायत व्यवस्था का आरम्भ भी।

लार्ड मेयो ने 1870 ई. में स्थानीय शासन में विकेन्द्रीकरण योजना प्रस्तुत की, जिससे नगरपालिकाओं की शक्तियों में वृद्धि हुई। 1873 में **मेयो** ने मनोनयन पद्धति की जगह निर्वाचन पद्धति की नींव डाली। लेकिन इस अवधि में जो भी प्रयास हु,वे सभी शहरी क्षेत्रों के स्थानीय शासन के सम्बन्ध में ही थे, ग्रामीण शासन के सम्बन्ध में नहीं।

इस अवधि में ग्रामीण स्थानीय शासन के संबंध में संभवत: 1802 ई. में पुन: ग्रामीण स्वायत्त संस्थाओं के पुनर्जन्म और उन्हें विकसित करने के प्रयास की एक शुरुआत 1802 ई. में डिसेन्ट्रलाइजेशन कमीशन की रिपोर्ट के आगमन से शुरू हुई। लेकिन अंग्रेजों का यह प्रयास इस मायने में ईमानदारीपूर्ण नहीं कहा जा सकता कि वे नहीं चाहते थे कि ग्रामीण स्वायत्त निकायों को वे सारे अधिकार दिये जाएँ जिसके उपयोग से वे विकसित हो रहे विश्व के अन्य देशों की तरह ग्रामीण व्यवस्था को दिशा प्रदान कर सकें, बल्कि वे इन्हें ब्रिटिश व्यापार की पूँजी, जिसका प्रतिनिधित्व भारत में ईस्ट इण्डिया कम्पनी करती थी, के हितों की गांव स्तर तक रक्षा कर सके। इस कारण 1802 ई. का प्रयास सफल न हो सका।

भारत में स्थानीय शासन का स्पष्ट विकास लॉर्ड रिपन के कार्यकाल में देखने को मिलता है। लार्ड रिपन एक उदार व्यक्ति था। उसका 18 मई 1882 ई. का स्वायत्त शासन के सम्बन्ध में प्रस्ताव युगान्तकारी था। जो स्थानीय शासन का एक नया दर्शन प्रस्तुत

करता था और इसलिए इस प्रस्ताव को भारत में स्थानीय शासन का **मैग्नाकार्टा** कहा जाता है तथा लार्ड रिपन को भारत में स्थानीय स्वशासन का जन्मदाता माना जाता है। सन् 1919 ई. में ब्रिटिश संसद ने भारत सरकार अधिनियम 1919 पारित किया जिसे **मान्टेग्यू चेम्सफोर्ड सुधार** के नाम से भी जाना जाता है। इस अधिनियम द्वारा स्थानीय स्वशासन को प्रान्तों का एक हस्तान्तरित विषय बनाया गया और उसे एक उत्तरदायी मंत्री की देख-रेख में सौंप दिया गया। प्रत्येक प्रान्त में स्थानीय स्वायत्त शासन-विभाग की स्थापना हुई। अगस्त 1947 को सदियों की दासता से भारत स्वतंत्र हुआ और इसके पश्चात् भारत में पंचायती राज के विकास में निर्णायक मोड़ आया। इसके पश्चात् भारतीय स्थानीय स्वशासन के इतिहास में एक नये युग का सूत्रपात हुआ। भारत में पंचायती राज के उद्‌भव एवं विकास के लिए कई ऐसे कारण जिम्मेदार रहे हैं जो समय के दौर के साथ एक ऐसी नयी संस्था का मार्ग प्रशस्त कर सके जो ब्रिटिश शासन काल की अपनी संरचना से बहुत अधिक भिन्न थी। चार प्रमुख कारक जो स्वतंत्र भारत के विकास के लिए उत्तरदायी हैं, वे हैं -

1. गाँधी जी की शिक्षाएँ और उपदेश
2. राज्य के नीति निर्देशक तत्व
3. पंचवर्षीय योजनाएँ जो कि जन सहयोग पर बल देती हैं
4. सामुदायिक विकास कार्यक्रम

- **बलवन्त राय मेहता समिति (1957)** - स्वतंत्रता के पश्चात पंचायती राज व्यवस्था की नींव बलवन्त राय मेहता समिति के द्वारा रखी गयी, जिसने अपनी रिपोर्ट 24 नवम्बर 1957 को सरकार के सम्मुख प्रस्तुत की इसके प्रमुख बिन्दु निम्न हैं-
  1. पंचायती राज का ढांचा त्रिस्तरीय होगा ग्राम स्तर पर ग्राम पंचायत, ब्लाक स्तर पर पंचायत समिति, जिला स्तर पर जिला परिषद।
  2. पंचायतें पूर्ण रुप से निर्वाचित ईकाइयां होनी चाहिए।
  3. सफाई, जल आपूर्ति प्रकाश व्यवस्था सड़कों का रख-रखाव तथा भूमि प्रबंधन ग्राम पंचायतों का अनिवार्य कर्तव्य निर्धारित किया जाना चाहिए।
- **अशोक मेहता समिति** - अशोक मेहता की अध्यक्षता में पंचायती राज समिति का गठन 12 दिसम्बर 1977 को हुआ। इस समिति की सिफारिशें निम्न हैं –
  1. पंचायत दो स्तर पर गठित होनी चाहिए– जिला स्तर पर जिला परिषद् तथा

ब्लॉक स्तर पर मण्डल परिषद् (इस समिति ने ग्राम स्तर पर पंचायत गठित करने की सिफारिश नहीं की)।

2. राज्य सरकार के कार्यों का विकेन्द्रीकरण करने के साथ-साथ सभी जिला स्तर के अधिकारियों को जिला परिषद् तथा उनके नीचे के स्तरों के अधीन रखना होगा।
3. जिला परिषदों का गठन प्रत्यक्ष निर्वाचनों के आधार पर ही होना चाहिए।
4. पंचायती राज संस्थाओं के माध्यम से समाज के कमजोर वर्गों को लाभान्वित करने के लिए कार्यक्रम तैयार करने होंगे।
5. पंचायती राज संस्थाओं को संवैधानिक दर्जा दिया जाना चाहिए।

- **जे.के.बी. राव समिति** - योजना आयोग ने 25 मार्च 1985 को ग्रामीण क्षेत्र में ग्रामीण विकास एवं गरीबी उन्मूलन से सम्बन्धित प्रशासनिक व्यवस्था की समीक्षा करने के लिए इस समिति का गठन किया, जिसने दिसम्बर 1985 में अपना प्रतिवेदन दिया। प्रतिवेदन में कहा कि राज्य सरकारें पंचायतों की आर्थिक स्थिति, उनके चुनाव और कार्यकलापों के प्रति लोकतांत्रिक विकेन्द्रीकरण की प्रक्रिया अपनाने में उदासीन रही हैं।

- **एल.एम. सिंधवी समिति** - राव समिति की रिपोर्ट के एक वर्ष बाद एल.एम. सिंधवी की अध्यक्षता में पंचायती राज सम्बन्धी प्रपत्र तैयार करने के लिए समिति गठित की गई जिसने अपनी रिपोर्ट 27 नबम्वर 1986 को प्रस्तुत की। सबसे प्रमुख सिफारिश यह थी पंचायती राज प्रणाली के कुछ पहलुओं को संवैधानिक दर्जा दिया जाना चाहिए। सरकार ने सिंधवी समिति की सिफारिशों के आलोक में पंचायतों को संवैधानिक दर्जा देने के उद्देश्य से 1992 में संविधान में 73वां संशोधन किया।

- **73वां संविधान संशोधन अधिनियम 1992** - जब 1991 में पी.बी. नरसिम्हा राव की सरकार केन्द्र में बनी तो उसमें मंत्रिस्तरीय सिफारिश के आधार पर 16 सितम्बर 1991 को संविधान (73वां) संशोधन विधेयक लोकसभा में प्रस्तुत किया। दिसम्बर 1991 में यह विधेयक संयुक्त संसदीय समिति को परीक्षण के लिए पेश किया। इस समिति की सिफारिश के आधार पर लोकसभा में 73वां संविधान संशोधन विधेयक पेश किया गया जो 22 दिसम्बर 1992 को संसद द्वारा पारित

किया गया। 24 अप्रैल 1993 को राष्ट्रपति के इस पर हस्ताक्षर हुए तब इस विधेयक को संविधान के 73वां संशोधन अधिनियम, 1992 के रूप में अंतिम रूप मिला। इस अधिनियम में यह प्रावधान किया गया कि इसके अस्तित्व में आने के एक वर्ष के अन्दर इस अधिनियम को ध्यान में रखकर सभी राज्य अपने पंचायती राज अधिनियमों को संशोधित करेंगे। तत्पश्चात् 24 अप्रैल 1994 से पहले राज्यों ने अपने पंचायत अधिनियम संशोधित किये।

इस संशोधन द्वारा संविधान में एक नया भाग (भाग–1) अंतत: स्थापित किया गया जिसमें **अनु. 243–क** से **243–च** समाहित हैं। संविधान में 11वीं अनुसूची को जोड़ा गया है जिसमें पंचायती राज से संबंधित **29** विषयों का समावेश है।

i. कृषि, जिसके अन्तर्गत कृषि का विस्तार भी है।
ii. भूमि विकास, भूमि सुधार का क्रियान्वयन, चकबन्दी और भूमि संरक्षण।
iii. लघु सिंचाई, जल प्रबन्ध और जल छांजन विकास
iv. पशुपालन, दुग्ध–उद्योग और कुक्कुट पालन
v. मत्स्य उद्योग
vi. सामाजिक वनोद्योग और फार्म वनोद्योग
vii. लघु वन उत्पाद
viii. लघु उद्योग, जिनके अन्तर्गत खाद्य प्रसंस्करण उद्योग भी है
ix. खादी, ग्राम और कुटीर उद्योग
x. ग्रामीण आवास
xi. पेयजल
xii. ईंधन और चारा
xiii. सड़कें, पुलिया, पुलघेरी, जलमार्ग तथा संचार के अन्य साधन
xiv. ग्रामीण विद्युतीकरण जिसके अन्तर्गत विद्युत वितरण भी है
xv. गैर पारम्परिक ऊर्जा स्रोत
xvi. गरीबी उपशमन कार्यक्रम
xvii. सांस्कृतिक क्रियाकलाप
xviii. बाजार और मेले

xix. स्वास्थ्य और स्वच्छता जिसके अन्तर्गत अस्पताल, प्राथमिक स्वास्थ्य केन्द्र और औषधालय भी हैं

xx. परिवार कल्याण

xxi. स्त्री और बाल विकास

xxii. समाज-कल्याण जिसके अन्तर्गत विकलांगों और मानसिक रूप से मंद व्यक्तियों का कल्याण भी है

xxiii. सार्वजनिक विवरण प्रणाली

xxiv. सामुदायिक परिसम्पत्तियों का अनुरक्षण

xxv. पुस्तकालय

xxvi. कमजोर वर्गों का और विशेषकर अनुसूचित जातियों और अनुसूचित जनजातियों का कल्याण

xxvii. पुस्तकालय

xxviii. प्रौढ़ और अनौपचारिक शिक्षा

xxix. शिक्षा जिसके अन्तर्गत प्राथमिक और माध्यमिक विद्यालय भी हैं।

किसी भी राष्ट्र की प्रगति की अनिवार्य शर्त के रूप में प्राथमिक शिक्षा सबसे महत्वपूर्ण है क्योंकि यह आने वाली पीढ़ियों का निर्माण करती है। भारत के **राष्ट्रपिता महात्मा गाँधी** ने भी इसकी महत्ता को रेखांकित करते हुए कहा है कि आज के बच्चे ही कल के राष्ट्र निर्माता हैं। भारत सरकार शिक्षा की सर्वजनसुलभता के लिए सक्रिय हैं, और उसकी यह मंशा समय-समय पर चलाये गये तमाम कार्यक्रमों और कई अग्रगामी योजनाओं में स्पष्ट रूप से दिखती है। सर्व शिक्षा अभियान, मध्याह्न भोजन योजना, शिक्षा गारंटी योजना, ऑपरेशन ब्लैकबोर्ड और ग्राम शिक्षा समितियों का गठन कुछ ऐसी ही प्रमुख परियोजनाएँ हैं जो धीमे-धीमे ही सही, प्राथमिक शिक्षा के विकास में अपना महत्वपूर्ण योगदान दे रही हैं।

भारत में प्राथमिक शिक्षा के सार्वजनीकरण के संदर्भ में अनेक प्रयास किये गये हैं। गाँव एवं नगरीय क्षेत्रों की शिक्षा व्यवस्था के लिए अधिक संख्या में स्कूल खोले गये हैं। बालिकाओं के लिए अलग विद्यालय खोलने की योजना बनायी गयी है। गाँव के समग्र विकास को ध्यान में रखकर संशोधित पंचायती राज अधिनियम लागू किया गया है। इसी क्रम में शिक्षा के विकेन्द्रीकरण को दृष्टिगत रखकर गाँव की शिक्षा को चुस्त एवं

दुरुस्त रखने की दृष्टि से प्रत्येक गाँव में 'ग्राम शिक्षा समितियों' का गठन किया गया है। गाँव की शैक्षिक योजना बनाने तथा प्राथमिक स्कूलों के संचालन में सहयोग प्रदान करने सम्बन्धी अनेक अधिकार इन समितियों को प्रदान किये गये हैं। ऐसी आशा की गयी है कि ग्राम शिक्षा समितियों के सहयोग से गाँव की शिक्षा योजना के प्रभावी क्रियान्वयन में पूरी सफलता मिल सकेगी। प्रस्तुत अध्ययन से पूर्व भी पंचायती राज व्यवस्था के सन्दर्भ में प्राथमिक शिक्षा के क्षेत्र में कई शोधकार्य हुए हैं। एच.आर. जोशी ने दक्षिणी गुजरात में पंचायती राज व्यवस्था के सन्दर्भ में प्राथमिक शिक्षा के प्रबन्ध पर, इकबाल नारायण ने राजस्थान के पंचायती राज के अन्तर्गत आने वाले प्राथमिक स्कूलों के प्रबन्ध के सन्दर्भ में, बी.ए. पटेल ने महेसना जिले के प्राथमिक शिक्षा के प्रबन्धन में पंचायती राज के प्रभाव के सन्दर्भ में, जी.बी. शिंदे ने पंचमहल जिला के प्राथमिक शिक्षा के विस्तार और विकास हेतु पंचायती राज नेतृत्व की भूमिका के सन्दर्भ में, ए. जैन ने महाराष्ट्र के स्थानीय निकायों के अन्तर्गत प्राथमिक शिक्षा के विकास के सन्दर्भ में, एस.पी. शर्मा ने मध्य दिल्ली की प्राथमिक शिक्षा के विकास के सन्दर्भ में, आर.एस. त्यागी ने प्राथमिक शिक्षा में स्थानीय पहल, बिहार की शिक्षा समितियों के सन्दर्भ में, एन. त्रिलोक धर ने शिक्षा के विकास में स्थानीय निकायों की भूमिका, व्यक्तिगत प्रयास तथा सामुदायिक सहभागिता का प्रभाव के सन्दर्भ, अश्वनी ने ग्रामीण शिक्षा में सामुदायिक सहभागिता के सन्दर्भ में अध्ययन किया। परन्तु किसी भी अनुसंधानकर्ता ने ग्राम शिक्षा समितियों की भूमिकाओं के निर्वहन स्थितियों और उनके प्रति सम्बन्धित पक्षों के दृष्टिकोण का अध्ययन नहीं किया है।

अतः यह आवश्यक हो जाता है कि इस बात की पड़ताल की जाए कि ग्राम शिक्षा समितियाँ ग्रामीण प्राथमिक विद्यालयों में प्राथमिक शिक्षा के विकास में अपनी भूमिकाओं का कितना सम्यक् निर्वाहन कर पा रही हैं। साथ ही यह भी जानना आवश्यक है कि शिक्षा से प्रत्यक्षतः जुड़े दो महत्वपूर्ण पक्ष अध्यापक और अभिभावक इनके प्रति क्या दृष्टिकोण रखते हैं? ग्राम शिक्षा समितियों की कार्यशैली और अध्यापकों तथा अभिभावकों का इनके प्रति दृष्टिकोण जानकर इनमें सुधार के उपाय सुझाये जा सकते हैं।

ग्राम शिक्षा समिति का संगठनात्मक स्वरूप निम्न है –

ग्राम शिक्षा समिति का स्वरूप

अध्यक्ष – ग्राम पंचायत का प्रधान

सदस्य सचिव – ग्राम पंचायत में स्थित बेसिक/उच्चतर माध्यमिक विद्यालय का ज्येष्ठतम प्रधानाध्यापक
– ग्राम पंचायत का एक अनुसूचित जाति का सदस्य
– ग्राम पंचायत से एक अन्य सदस्य (SC/ST से भिन्न)
– ग्राम की एक निर्वाचित महिला सदस्य

समस्या कथन

''ग्राम शिक्षा समितियों की भूमिका एवं इनके उत्तरदायित्वों की प्रतिपूर्ति का अध्ययन''

समस्या का परिभाषीकरण

प्रस्तुत शोध अध्ययन का परिभाषीकरण निम्नवत है–

1. **ग्राम शिक्षा समिति** – उत्तर प्रदेश बेसिक शिक्षा अधिनियम 1972 में निहित प्रावधानों के अन्तर्गत संशोधित अधिनियम असाधारण गजट दिनांक 05.05.2000 द्वारा प्रत्येक ग्राम पंचायत में प्राथमिक शिक्षा संबंधी कार्यों के प्रभावी संचालन हेतु एक समिति गठित की गयी है, जो ग्राम शिक्षा समिति कहलाती है।
2. **ग्राम शिक्षा समिति की भूमिका** – ग्राम शिक्षा समिति की भूमिका का अर्थ इसकी कार्य प्रणाली से है, जिसमें इनके प्रशासनिक, शैक्षिक तथा वित्तीय उत्तरदायित्वों का निर्वहन शामिल है।
3. **अध्यापक** – अध्यापकों से तात्पर्य ग्रामीण प्राथमिक विद्यालय में अध्यापन कार्य करने वाले पुरुष तथा महिला अध्यापकों से है।
4. **अभिभावक** – अभिभावकों से तात्पर्य उन माता–पिता तथा संरक्षकों से है जिनके बच्चे ग्रामीण प्राथमिक विद्यालयों में अध्ययनरत् हैं।
5. **दृष्टिकोण** – दृष्टिकोण से तात्पर्य उस संवेगात्मक प्रवृत्ति से है जो अनुभवों द्वारा व्यवस्थित होती है तथा किसी व्यक्ति, संस्था, वस्तु या विचार के प्रति सकारात्मक या नकारात्मक रूप से कार्य करती है।
6. **ददरौल विकास खंड** – ददरौल विकास खंड से तात्पर्य शाहजहाँपुर जनपद की सदर तहसील में स्थित उन ग्रामीण क्षेत्रों के भू–भाग से है, जो राजस्व ग्राम के रूप में सरकारी अभिलेखों में ददरौल विकास खंड में अभिलिखित है।

अध्ययन के उद्देश्य

प्रस्तुत शोध अध्ययन के निम्नलिखित उद्देश्य हैं–

1. ग्राम शिक्षा समितियों के प्रशासनिक उत्तरदायित्वों सम्बन्धी कार्य प्रणाली का अध्ययन करना।
2. ग्राम शिक्षा समितियों के शैक्षिक उत्तरदायित्वों सम्बन्धी कार्य प्रणाली का अध्ययन करना।
3. ग्राम शिक्षा समितियों के वित्तीय उत्तरदायित्वों सम्बन्धी कार्य प्रणाली का अध्ययन करना।
4. ग्राम शिक्षा समितियों के प्रति अध्यापकों तथा अभिभावकों के दृष्टिकोण का अध्ययन करना।
5. ग्राम शिक्षा समितियों के प्रति आरक्षित तथा अनारक्षित वर्ग के अध्यापकों के दृष्टिकोण का अध्ययन करना।
6. ग्राम शिक्षा समितियों के प्रति पुरुष तथा महिला वर्ग के अध्यापकों के दृष्टिकोण का अध्ययन करना।
7. ग्राम शिक्षा समितियों के प्रति 10 वर्ष तक तथा इससे अधिक शिक्षण अनुभव वाले अध्यापकों के दृष्टिकोण का अध्ययन करना।
8. ग्राम शिक्षा समितियों के प्रति आरक्षित तथा अनारक्षित वर्ग के अभिभावकों के दृष्टिकोण का अध्ययन करना।
9. ग्राम शिक्षा समितियों के प्रति 1 लाख रू. वार्षिक तक तथा इससे ऊपर वार्षिक आय वर्ग के अभिभावकों के दृष्टिकोण का अध्ययन करना।
10. ग्राम शिक्षा समितियों के प्रति शिक्षित तथा अशिक्षित वर्ग के अभिभावकों के दृष्टिकोण का अध्ययन करना।

अध्ययन की परिकल्पनाएँ

प्रस्तुत शोध की परिकल्पनाएँ निम्नवत हैं–

1. ग्राम शिक्षा समितियों के प्रति आरक्षित तथा अनारक्षित वर्ग के अध्यापकों के दृष्टिकोण में कोई सार्थक अन्तर नहीं है।
2. ग्राम शिक्षा समितियों के प्रति पुरुष तथा महिला वर्ग के अध्यापकों के दृष्टिकोण में कोई सार्थक अन्तर नहीं है।
3. ग्राम शिक्षा समितियों के प्रति 10 वर्ष तक तथा इससे अधिक शिक्षण अनुभव

वाले अध्यापकों के दृष्टिकोण में कोई सार्थक अन्तर नहीं है।

4. ग्राम शिक्षा समितियों के प्रति आरक्षित तथा अनारक्षित वर्ग के अभिभावकों के दृष्टिकोण में कोई सार्थक अन्तर नहीं है।
5. ग्राम शिक्षा समितियों के प्रति 1 लाख रु. वार्षिक तक तथा इससे ऊपर वार्षिक आय वर्ग के अभिभावकों के दृष्टिकोण में कोई सार्थक अन्तर नहीं है।
6. ग्राम शिक्षा समितियों के प्रति शिक्षित तथा अशिक्षित वर्ग के अभिभावकों के दृष्टिकोण में कोई सार्थक अन्तर नहीं है।
7. ग्राम शिक्षा समितियों के प्रति अध्यापकों तथा अभिभावकों के दृष्टिकोण में कोई सार्थक अन्तर नहीं है।

शोध प्रविधि एवं प्रक्रिया

प्रस्तुत शोध कार्य की समस्या का स्वरूप सर्वेक्षणात्मक है।

समष्टि (जनसंख्या)

प्रस्तुत शोध प्रबंध में शाहजहाँपुर जनपद के ददरौल विकास खंड के समस्त परिषदीय प्राथमिक विद्यालयों में शिक्षण कार्य करने वाले स्थायी शिक्षक (शिक्षामित्र शामिल नहीं हैं) तथा कक्षा 5 में अध्ययनरत् छात्रों के अभिभावक समष्टि हैं।

न्यादर्श

ददरौल विकास खंड के 131 परिषदीय प्राथमिक विद्यालयों में से 33 विद्यालयों का चयन न्यादर्श के रूप में किया गया। इन विद्यालयों में कार्यरत सभी स्थायी शिक्षकों को न्यादर्श में इकाई माना गया है। इस प्रकार इन 33 विद्यालयों में कार्यरत 52 शिक्षक तथा कक्षा 5 में अध्ययनरत् छात्रों के 10 प्रतिशत अर्थात् 74 अभिभावक न्यादर्श हैं।

प्रयुक्त उपकरण

प्रस्तुत शोधकार्य में प्रदत्तों के एकत्रीकरण के लिए दो स्वनिर्मित एवं मानकीकृत शोध उपकरणों (ग्राम शिक्षा समिति के उत्तरदायित्वों को जानने के लिए अनुसूची तथा ग्राम शिक्षा समिति दृष्टिकोण मापनी) का प्रयोग किया गया है।

अंकन प्रक्रिया

उत्तरदायित्व मापनी में **'हाँ'** के लिए 1 अंक तथा **'न'** के लिए 0 (शून्य) अंक प्रदान किया गया है। वहीं दृष्टिकोण मापनी में **'हाँ'** के लिए +1 तथा **'न'** के लिए –1 अंक प्रदान किया गया है। इससे दृष्टिकोण की मात्रा के साथ उसकी दिशा भी ज्ञात हो सकी है।

प्रयुक्त सांख्यिकीय तकनीक

आँकड़ों के विश्लेषण एवं निष्कर्ष प्राप्त करने हेतु प्रतिशत, माध्य, प्रमाप विचलन, प्रमाप विभ्रम तथा परिकल्पना परीक्षण हेतु क्रान्तिक अनुपात एवं टी–परीक्षण का प्रयोग किया गया है।

आँकड़ों का विश्लेषण एवं विवेचन

परीक्षण से प्राप्त आँकड़ों को वर्गीकृत करके प्रतिशत, माध्य, प्रमाप विचलन तथा प्रमाप विभ्रम की गणना कर क्रान्तिक अनुपात परीक्षण तथा टी–परीक्षण आदि सांख्यिकीय तकनीकों का प्रयोग करके प्रदत्तों का विश्लेषण एवं विवेचन कर निष्कर्ष निकाले गये हैं।

तालिका–1

ग्राम शिक्षा समितियों की प्रशासनिक दायित्वों की प्रतिपूर्ति के सन्दर्भ में स्थिति

	उत्तरदायित्व का सम्यक निर्वहन नहीं																
उत्तरदायित्व का सम्यक निर्वहन	**अंक**	0	1	2	3	4	5	6	7	8	9	10	11	12	13	14	**योग**
	0															0	**0**
	1														0		**0**
	2													0			**0**
	3												3				**3**
	4											1					**1**
	5										4						**4**
	6									2							**2**
	7								6								**6**
	8							3									**3**
	9						4										**4**
	10					5											**5**
	11				4												**4**
	12			0													**0**
	13		1														**1**
	14	0															**0**
	योग	**0**	**1**	**0**	**4**	**5**	**4**	**3**	**6**	**2**	**4**	**1**	**3**	**0**	**0**	**0**	**33**

ग्राम शिक्षा समिति के उत्तरदायित्वों का विश्लेषण

सर्वेक्षण से प्राप्त समंकों का विश्लेषण अध्ययन में प्रस्तुत चरों के आधार पर निम्नांकित तीन शीर्षकों में वर्गीकृत करके किया गया है–

1. प्रशासनिक उत्तरदायित्व
2. शैक्षिक उत्तरदायित्व
3. वित्तीय उत्तरदायित्व

तालिका–1 के अवलोकन से स्पष्ट है कि प्रशासनिक दायित्वों के रूप में ग्राम शिक्षा समितियों हेतु निर्धारित 14 प्रशासनिक दायित्वों में से न्यादर्श के रुप में चयनित 33 विद्यालयों की ग्राम समितियों में कोई भी ऐसी ग्राम शिक्षा समिति नहीं है जो निर्धारित प्रशासनिक दायित्वों का सम्यक निर्वाह करती हो। हालांकि ऐसी भी कोई ग्राम शिक्षा समिति नहीं है जो एक भी प्रशासनिक दायित्वों का निर्वाह न करती हो। सभी ग्राम शिक्षा समितियाँ कुछ न कुछ हद तक प्रशासनिक दायित्वों का निर्वाह करती हैं। 6 ग्राम शिक्षा समितियाँ ऐसी हैं जो सबसे अधिक 7 प्रशासनिक दायित्वों का निर्वाह करती हैं।

तालिका–2

ग्राम शिक्षा समितियों द्वारा शैक्षिक दायित्वों की प्रतिपूर्ति के सन्दर्भ में स्थिति

	उत्तरदायित्व का सम्यक निर्वहन नहीं										
उत्तरदायित्व का सम्यक निर्वहन	**अंक**	0	1	2	3	4	5	6	7	8	**योग**
	0									1	**1**
	1								10		**10**
	2							7			**7**
	3						8				**8**
	4					2					**2**
	5				3						**3**
	6			2							**2**
	7		0								**0**
	8	0									**0**
	योग	**0**	**0**	**2**	**3**	**2**	**8**	**7**	**10**	**1**	**33**

तालिका 2 के अवलोकन से यह तथ्य दृष्टव्य होता है कि न्यादर्श में चयनित कोई भी ग्राम शिक्षा समिति ऐसी नहीं है जो अनुसूची में बताये गये 8 शैक्षिक दायित्व का सम्यक निर्वाहन करती हो। निर्वहन का स्तर इतना निम्न पाया गया कि एक ग्राम शिक्षा समिति ऐसी है जो एक भी शैक्षिक दायित्व का निर्वहन नहीं करती है। न्यादर्श की संख्या के आधार पर सबसे अधिक 10 ग्राम शिक्षा समितियाँ दो शैक्षिक दायित्वों का निर्वाह ही कर पायी हैं।

तालिका–3

ग्राम शिक्षा समितियों द्वारा वित्तीय दायित्वों की प्रतिपूर्ति के सन्दर्भ में स्थिति

	उत्तरदायित्व का सम्यक निर्वहन नहीं										
उत्तरदायित्व का सम्यक निर्वहन	**अंक**	0	1	2	3	4	5	6	7	8	**योग**
	0									0	**0**
	1								0		**0**
	2							0			**0**
	3						3				**3**
	4					5					**5**
	5				3						**3**
	6			17							**17**
	7		5								**5**
	8	0									**0**
	योग	**0**	**5**	**17**	**3**	**5**	**3**	**0**	**0**	**0**	**33**

तालिका–3 के अवलोकन के पश्चात यह तथ्य उभरकर आये हैं कि न्यादर्श में सम्मिलित 33 ग्राम शिक्षा समितियों में कोई भी ऐसी ग्राम शिक्षा समिति नहीं है जो अनुसूची में उल्लेखित 8 वित्तीय दायित्वों का सम्यक निर्वहन करती हों। हालांकि ऐसी भी कोई ग्राम शिक्षा समिति नहीं है जो एक भी वित्तीय दायित्व का निर्वाह न करती हो। सबसे अधिक 17 ग्राम शिक्षा समितियाँ ऐसी हैं जो 6 वित्तीय दायित्वों का निर्वहन करती हैं।

तालिका–4

ग्राम शिक्षा समिति के उत्तरदायित्वों का निर्वहन स्तर के आधार पर विश्लेषण

प्रतिशत विस्तार	उत्तरदायित्व निर्वहन स्तर	उत्तरदायित्व		
		प्रशासनिक	शैक्षिक	वित्तीय
0–20	निम्नतम स्तर	0(0)	12(37)	0(0)
20–40	निम्न स्तर	08(24)	14(42)	03(10)
40–60	सामान्य स्तर	15(46)	03(09)	05(15)
60–80	उच्च स्तर	08(24)	04(12)	20(60)
80–100	उच्चतम स्तर	02(06)	0(0)	05(15)
	योग	**33(100)**	**33(100)**	**33(100)**

तालिका–4 में प्रदर्शित ग्राम शिक्षा समितियों के निर्धारित प्रशासनिक, शैक्षिक तथा वित्तीय उत्तरदायित्वों के निर्वहन स्तर को यदि पाई आरेख द्वारा प्रदर्शित किया जाए तो वह निम्न होगा–

तालिका–4 के निरीक्षण के उपरान्त निम्नांकित निष्कर्ष दृष्टिगोचर होते हैं।

1. न्यादर्श की संख्या के आधार पर 37 प्रतिशत ग्राम शिक्षा समितियाँ निम्नतम स्तर पर शैक्षिक दायित्वों का निर्वाह करती हैं।
2. 24 प्रतिशत ग्राम शिक्षा समितियाँ निम्न स्तर पर प्रशासनिक उत्तरदायित्वों की प्रतिपूर्ति करती हैं। वहीं 42 प्रतिशत ग्राम शिक्षा समितियाँ निम्न स्तर पर शैक्षिक तथा 10 प्रतिशत ग्राम समितियाँ निम्न स्तर पर अपने वित्तीय दायित्वों की प्रतिपूर्ति करती हैं।
3. न्यादर्श में चयनित 46 प्रतिशत ग्राम शिक्षा समिति सामान्य स्तर पर अपने प्रशासनिक दायित्वों का निर्वाह करती हैं। वहीं मात्र 9 प्रतिशत ग्राम शिक्षा समितियाँ ही सामान्य स्तर पर अपने शैक्षिक दायित्वों का निर्वहन तथा 15 प्रतिशत ग्राम शिक्षा समितियाँ अपने वित्तीय दायित्वों का निर्वाह करती हैं।
4. उच्च स्तर पर प्रशासनिक दायित्वों का निर्वहन 24 प्रतिशत ग्राम शिक्षा समितियाँ तथा शैक्षिक दायित्वों के निर्वहन पर नजर डालें तो मात्र 12 प्रतिशत ग्राम शिक्षा

समितियाँ ही इस स्तर पर पहुँची हैं। वित्तीय दायित्वों के निर्वहन की स्थिति अपेक्षाकृत अच्छी है। 60 प्रतिशत ग्राम शिक्षा समितियाँ उच्च स्तर पर अपने वित्तीय दायित्वों का निर्वहन करती हैं।

ग्राम शिक्षा समितियों के उत्तरदायित्व निर्वहन स्तर का चित्र रेखीय प्रदर्शन

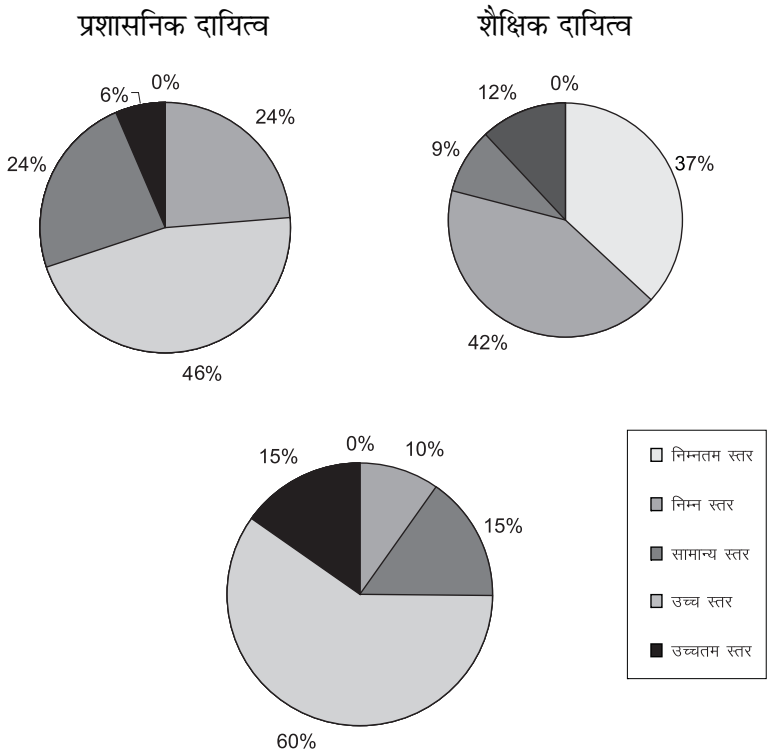

5. उत्तरदायित्वों के निर्वहन स्तर के चरमस्तर पर नजर डालें तो मात्र 6 प्रतिशत ग्राम शिक्षा समितियाँ उच्चतम स्तर पर प्रशासनिक दायित्व का निर्वाह करती हैं, शैक्षिक दायित्व की प्रतिपूर्ति स्थिति काफी निराशाजनक है। कोई भी शिक्षा समिति इस स्तर तक अपने शैक्षिक दायित्वों का निर्वहन करती हुई नहीं पायी गयी। वित्तीय दायित्वों की प्रतिपूर्ति की बात करें तो 15 प्रतिशत ग्राम शिक्षा समितियाँ इस स्तर को छू पायी हैं।

तालिका-5

ग्राम शिक्षा समितियों के प्रति अध्यापकों का दृष्टिकोण

वर्गीकरण		सकारात्मक	नकारात्मक	योग	
लिंग	पुरुष	13(54)	11(46)	24(100)	52
	महिला	14(50)	14(50)	28(100)	
जाति वर्ग	आरक्षित	15(75)	5(25)	20(100)	52
	अनारक्षित	12(37.5)	20(62.5)	32(100)	
शिक्षण अनुभव	10 वर्ष तक	12(48)	13(52)	25(100)	52
	10 वर्ष से अधिक	15(56)	12(44)	27(100)	

*कोष्ठक में प्रतिशत प्रदर्शित हैं।

1. तालिका-5 के अवलोकन से स्पष्ट है कि 54 प्रतिशत अध्यापक ग्राम शिक्षा समितियों के प्रति सकारात्मक तथा 46 प्रतिशत अध्यापक इसके प्रति नकारात्मक दृष्टिकोण प्रदर्शित करते हैं।
2. ग्राम शिक्षा समितियों के प्रति दृष्टिकोण के मामले में महिला अध्यापकों का प्रतिशत आधा आधा है। 50 प्रतिशत महिला अध्यापक सकारात्मक तथा 50 महिला अध्यापक नकारात्मक दृष्टिकोण प्रदर्शित करती हैं।
3. जाति वर्ग के आधार पर 75 प्रतिशत आरक्षित वर्ग के अध्यापक सकारात्मक तथा 25 प्रतिशत अध्यापक नकारात्मक दृष्टिकोण का प्रदर्शन करते हैं। मात्र 37.5 प्रतिशत अनारक्षित वर्ग के अध्यापक सकारात्मक तथा 62.5 प्रतिशत अध्यापक इसके प्रति नकारात्मक दृष्टिकोण का प्रदर्शन करते हैं।
4. अनुमान के आधार पर 10 वर्ष तक शिक्षण अनुभव रखने वाले 48 प्रतिशत अध्यापक सकारात्मक दृष्टिकोण तथा 52 प्रतिशत अध्यापक नकारात्मक दृष्टिकोण रखते हैं।
5. 10 वर्ष से अधिक शिक्षण अनुभव रखने वाले 56 प्रतिशत अध्यापक सकारात्मक तथा 44 प्रतिशत अध्यापक ग्राम शिक्षा समिति के प्रति नकारात्मक दृष्टिकोण प्रदर्शित करते हैं।

ग्राम शिक्षा समितियों के प्रति अध्यापकों के दृष्टिकोण प्राप्तांकों का चित्र रेखीय प्रदर्शन

तालिका-5 में प्रदर्शित ग्राम शिक्षा समितियों के प्रति अध्यापकों के दृष्टिकोण प्राप्तांकों को निम्न चित्र आरेख द्वारा प्रदर्शित किया जा सकता है-

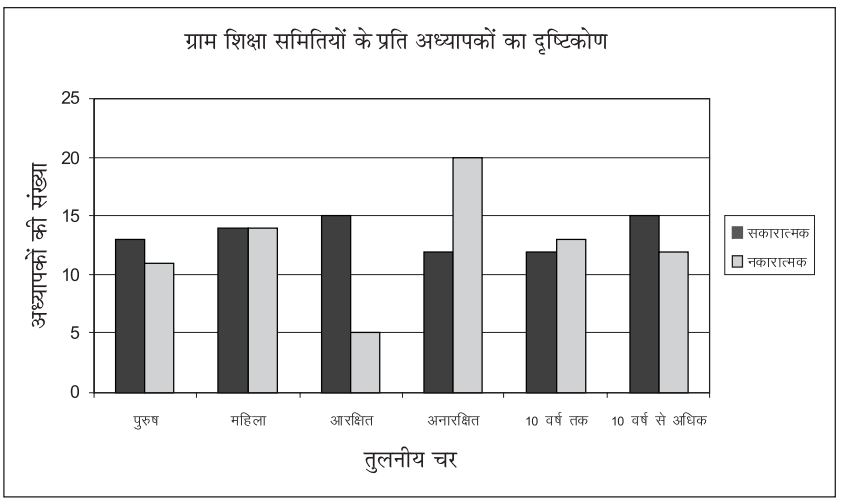

इस सन्दर्भ में विशेषीकृत निष्कर्ष प्राप्त करने के लिए अध्यापकों के दृष्टिकोण को जानने हेतु शून्य परिकल्पनायें निर्मित कर उनके परीक्षण के आधार पर निष्कर्ष स्थापित किये गये हैं।

तालिका-6 के अवलोकन से निम्न निष्कर्ष स्पष्ट होते हैं-

1. ग्राम शिक्षा समितियों के प्रति आरक्षित वर्ग के अध्यापकों के दृष्टिकोण प्राप्तांकों का माध्य +6.75 है। वहीं अनारक्षित वर्ग के अध्यापकों के दृष्टिकोण प्राप्तांकों का माध्य ऋणात्मक रूप से -0.46 प्राप्त हुआ है। सामान्य तौर पर देखने में अन्तर स्पष्ट होता है, परन्तु टी-परीक्षण के उपरान्त माध्य अन्तर निरर्थक मिला है। इसका कारण अनारक्षित वर्ग के अध्यापकों के प्राप्तांकों का औसत सूक्ष्म रूप से ऋणात्मक होना है। अत: दोनों वर्गों का दृष्टिकोण ग्राम शिक्षा समिति के बारे में एक जैसा ही है।
2. लिंग के आधार पर विश्लेषण करने पर ग्राम शिक्षा समिति के प्रति पुरुष वर्ग के अध्यापकों के दृष्टिकोण प्राप्तांकों का माध्य +2.70 प्राप्त हुआ तथा महिला वर्ग के

तालिका-6

परिगणित मूल्य	परिकल्पना संख्या					
	1		2		3	
	जाति वर्ग		लिंग		शिक्षण अनुभव	
	आरक्षित	अनारक्षित	पुरुष	महिला	10>	10<
संख्या	20	32	24	28	25	27
माध्य	+6.75	−0.46	+2.70	+1.96	+0.70	+3.79
प्रमाप विचलन (σ)	12.27	13.27	12.70	13.90	15.42	10.93
प्रमाप विभ्रम	3.69		0.374		3.808	
माध्य अन्तर	7.21		0.74		3.09	
टी-मूल्य	1.95		1.99		0.811	
स्वतंत्रयांश	50		50		50	
सारणी मूल्य	2.01		2.01		2.01	
अन्तर	1.95<2.01 (निरर्थक)		1.99<2.01 (निरर्थक)		.811<2.01 (निरर्थक)	
परिकल्पना स्थिति	स्वीकृत*		स्वीकृत*		स्वीकृत*	

* 5% सार्थकता स्तर पर

अध्यापकों का माध्य +1.96 है। टी-परीक्षण के उपरान्त माध्य अन्तर की सार्थकता साबित नहीं होती है। अत: पुरुष तथा महिला दोनों वर्गों के अध्यापकों के दृष्टिकोण में समानता दृष्टिगोचर होती है।

3. शिक्षण अनुभव के आधार पर प्राप्त आंकड़ों के विवेचन से यह ज्ञात हुआ कि 10 वर्ष तक का शिक्षण अनुभव रखने वाले अध्यापकों का माध्य +0.70 है तथा 10 वर्ष से अधिक शिक्षण अनुभव रखने वाले अध्यापकों का माध्य +3.79 है। टी-परीक्षण की कसौटी पर कसने के बाद यह पता चलता है कि माध्य अन्तर में सार्थकता नहीं है। अत: दोनों वर्गों का दृष्टिकोण ग्राम शिक्षा समिति के प्रति लगभग समान है।

तालिका–7

ग्राम शिक्षा समितियों के प्रति अभिभावकों का दृष्टिकोण

	वर्गीकरण	सकारात्मक	नकारात्मक	योग	
जातिवर्ग	आरक्षित	20(37)	34(63)	54(100)	74
	अनारक्षित	8(40)	12(60)	20(100)	
आय	1 लाख रु. तक	16(31)	35(69)	51(100)	74
	1 लाख रु. से अधिक	12(52)	11(48)	23(100)	
शिक्षा	शिक्षित	20(36)	35(64)	55(100)	74
	अशिक्षित	8(42)	11(58)	19(100)	

*कोष्ठक में प्रतिशत प्रदर्शित हैं।

ग्राम शिक्षा समितियों के प्रति अभिभावकों के दृष्टिकोण प्राप्तांकों का चित्र रेखीय प्रदर्शन

तालिका–7 में प्रदर्शित ग्राम शिक्षा समितियों के प्रति अभिभावकों के दृष्टिकोण प्राप्तांकों को निम्न चित्र आरेख द्वारा प्रदर्शित किया जा सकता है–

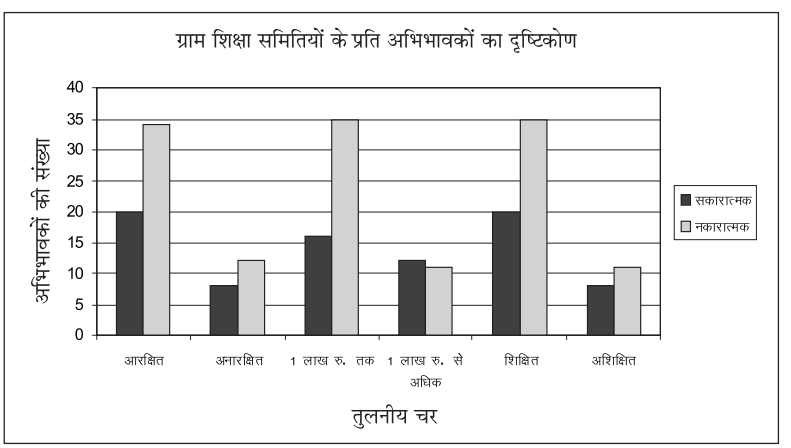

तालिका–7 के अवलोकन से स्पष्ट रूप से यह निष्कर्ष सामने आये कि–

1. आरक्षित वर्ग के 37% अभिभावक, 40% अनारक्षित वर्ग के अभिभावक ग्राम शिक्षा समिति के प्रति सकारात्मक दृष्टिकोण रखते हैं। वही आरक्षित वर्ग के 63%

अभिभावक तथा अनारक्षित वर्ग के 60% अभिभावक ग्राम शिक्षा समिति के प्रति नकारात्मक दृष्टिकोण प्रदर्शित करते हैं।

2. आय के आधार पर 1 लाख रु. आय वर्ग वाले 31 प्रतिशत अभिभावक तथा 1 लाख रु. से अधिक आय वर्ग वाले 52% अभिभावक शिक्षा समिति के प्रति नकारात्मक दृष्टिकोण प्रदर्शित करते हैं।

3. शैक्षिक स्तर के आधार पर शिक्षित वर्ग के 36% अभिभावक तथा अशिक्षित वर्ग के 42% अभिभावक ग्राम शिक्षा समिति के प्रति सकारात्मक तथा अपेक्षाकृत अधिक 55 प्रतिशत शिक्षित वर्ग के अध्यापक तथा 56% अशिक्षित वर्ग के अध्यापक ग्राम शिक्षा समिति के प्रति नकारात्मक दृष्टिकोण का प्रदर्शन करते हैं।

तालिका-8

परिगणित मूल्य	**परिकल्पना संख्या**					
	4		**5**		**6**	
	जाति वर्ग		**आय**		**शिक्षा**	
	आरक्षित	अनारक्षित	1 लाख $\geq$	1 लाख $<$	शिक्षित	अशिक्षित
संख्या	54	20	51	23	55	19
माध्य	-1.203	-4.00	-3.678	+1.196	-2.045	-1.711
प्रमाप विचलन (σ)	14.82	10.52	10.96	11.05	11.29	10.03
प्रमाप विभ्रम	3.15		2.82		2.820	
माध्य अन्तर	2.80		4.872		0.335	
टी. मूल्य	0.88		1.728		0.119	
स्वतंत्रयांश	72		72		72	
सारणी मूल्य	1.99		1.99		1.99	
अन्तर	0.88<1.99 (निरर्थक)		1.72<1.99 (निरर्थक)		.119<1.99 (निरर्थक)	
परिकल्पना स्थिति	स्वीकृत*		स्वीकृत*		स्वीकृत*	

* 5% सार्थकता स्तर पर

तालिका-8 के अवलोकन से निम्न परिणाम स्पष्ट होते हैं-

1. ग्राम शिक्षा समितियों के प्रति आरक्षित वर्ग के अभिभावकों के दृष्टिकोण प्राप्तांकों

का माध्य –1.203 है तथा अनारक्षित अभिभावकों के दृष्टिकोण प्राप्तांकों की औसत भी ऋणात्मक रूप से अपेक्षाकृत अधिक –4.00 प्राप्त हुआ। टी–परीक्षण के उपरान्त दोनों के दृष्टिकोण प्राप्तांकों के माध्य का अन्तर निरर्थक सिद्ध हुआ। अत: हम निष्कर्षत: कह सकते हैं कि दोनों वर्गों में ग्राम शिक्षा समिति के प्रति एक सी ही धाराणाएँ हैं।

2. आय के स्तर के आधार पर विश्लेषण करने पर यह ज्ञात होता है कि 10 लाख रु. तक वार्षिक आय रखने वाले अभिभावकों के दृष्टिकोण प्राप्तांकों का औसत –3.678 है तथा 10 लाख रु. से अधिक आय वाले अभिभावकों का औसत धनात्मक रुप से 1.196 प्राप्त होता है। सामान्यत: देखने पर अन्तर सार्थक प्रतीत होता है परन्तु टी–परीक्षण के उपरान्त अन्तर निरर्थक सिद्ध होता है। अत: दोनों वर्गों के दृष्टिकोणों में ग्राम शिक्षा समिति के प्रति सार्थक अन्तर नहीं है। दोनों वर्गों की सोच ग्राम शिक्षा समिति के कार्यों और उत्तरदायित्वों को लेकर एक जैसी ही है।

3. ग्राम शिक्षा समिति के प्रति शिक्षित तथा अशिक्षित वर्ग के अभिभावकों के दृष्टिकोण प्राप्तांकों का माध्य क्रमश: –2.045 तथा –1.711 प्राप्त हुआ। टी–परीक्षण के उपरान्त माध्य अन्तर की सार्थकता सिद्ध नहीं हो सकी। अत: निष्कर्ष में यही प्राप्त होता है कि शिक्षित तथा अशिक्षित दोनों वर्गों के अभिभावक ग्राम शिक्षा समिति के प्रति नकारात्मक नजरिया रखते हैं तथा इसके कार्यों से सन्तुष्ट नहीं हैं।

अध्यापकों व अभिभावकों के ग्राम शिक्षा समिति के प्रति दृष्टिकोण को जानने के उद्देश्य से परिकल्पना संख्या 7 को निर्मित कर टी–परीक्षण के आधार पर जाँचा गया है जिससे प्राप्त गणनाएँ तालिका–9 में प्रदर्शित हैं–

तालिका संख्या 9 के अवलोकन से स्पष्ट है कि ग्राम शिक्षा समितियों के प्रति अध्यापकों के दृष्टिकोण के प्राप्तांकों का औसत +2.30 है। वहीं अभिभावकों के दृष्टिकोण के प्राप्तांक का औसत ऋणात्मक रूप में –1.95 प्राप्त हुआ है। इनके प्रमाप विचलन (σ) क्रमश: 13.35 तथा 10.98 हैं। इस आधार पर परिगणित प्रमाप विभ्रम 2.24 है, माध्य अन्तर 4.25 है। दोनों समूहों के मध्य टी–मूल्य 1.89 प्राप्त हुआ जो कि 124 स्वतंत्रांश के लिए तालिका मूल्य 1.98 से कम है। अत: दोनों माध्यों के मध्य अन्तर निरर्थक है तथा परिकल्पना स्वीकृत हुई है। इस आधार पर कहा जा सकता है कि अध्यापकों तथा अभिभावकों के मध्य ग्राम शिक्षा समितियों के उत्तरदायित्वों की प्रतिपूर्ति के प्रति दृष्टिकोण में सार्थक अन्तर नहीं है।

तालिका संख्या 9

परिगणित मूल्य	दृष्टिकोण प्राप्तांक	
	अध्यापक	अभिभावक
माध्य (Mean)	+2.30	–1.95
प्रमाप विचलन (σ)	13.37	10.98
संख्या (N)	52	74
प्रमाप विभ्रम (SE_{-D})	2.24	
माध्य अन्तर ($M_1 \sim M_2$)	4.25	
क्रान्तिक अनुपात (C.R.)	1.89	
स्वतंत्रांश (df)	124	
सारणी मूल्य (5% सार्थकता स्तर)	1.98	
अन्तर	1.89 < 1.98 (निरर्थक)	
परिकल्पना	स्वीकृत	

* 5% सार्थकता स्तर पर

निष्कर्ष

आँकड़ों के विश्लेषण से प्राप्त निष्कर्षों को तीन भागों में बांटा गया है, जो निम्नलिखित हैं –

1. प्रतिशत के आधार पर प्राप्त निष्कर्ष
2. माध्य के आधार पर प्राप्त निष्कर्ष
3. परिकल्पना परीक्षण के आधार पर प्राप्त निष्कर्ष

1. प्रतिशत के आधार पर प्राप्त निष्कर्ष

चयनित न्यादर्श में ग्राम शिक्षा समितियों से सम्बन्धित अनुसूची के आधार पर प्राप्त सकारात्मक तथा नकारात्मक कथनों से उनके उत्तरदायित्वों के सम्बन्ध में प्रतिशत रूप में गणना की गयी। प्रतिशत विस्तार के आधार पर उत्तरदायित्व निवर्हन स्तर को पाँच भागों क्रमशः निम्नतम, निम्न, सामान्य, उच्च तथा उच्चतम स्तर में बाँटा गया। समग्र रूप से उत्तरदायित्वों को प्रतिशत रूप में परिगणित किया गया।

ग्राम शिक्षा समिति के उत्तरदायित्व सम्बन्धी निष्कर्ष

1. न्यादर्श के आधार पर 24% विद्यालयों की ग्राम शिक्षा समितियाँ अपने प्रशासनिक दायित्वों की प्रतिपूर्ति के आधार पर निम्न स्तर की हैं।
2. 46% विद्यालयों की ग्राम शिक्षा समितियाँ प्रशासनिक दायित्वों का निर्वाह सामान्य स्तर पर करती हैं।
3. 24% विद्यालयों की ग्राम शिक्षा समितियाँ उच्च स्तर तक अपने प्रशासनिक दायित्वों का निर्वहन करती हैं।
4. 6% विद्यालयों की ग्राम शिक्षा समितियाँ उच्चतम स्तर तक अपने प्रशासनिक दायित्वों का निर्वहन करती हैं।
5. शैक्षिक स्तर के आधार पर 37% विद्यालयों की ग्राम शिक्षा समितियाँ निम्नतम स्तर तक ही शैक्षिक दायित्वों का निर्वाह कर सकी हैं।
6. 42% विद्यालयों की ग्राम शिक्षा समितियाँ अपने शैक्षिक दायित्वों का निर्वाह निम्न स्तर पर करती हैं।
7. 10% विद्यालयों की ग्राम शिक्षा समितियाँ सामान्य स्तर पर शैक्षिक दायित्वों का निर्वहन करती हैं।
8. 12% विद्यालयों की ग्राम शिक्षा समितियाँ उच्च स्तर तक अपने शैक्षिक दायित्वों को निभाती हैं।
9. वित्तीय दायित्वों के संदर्भ में 10% विद्यालयों की ग्राम शिक्षा समितियाँ निम्न स्तर तक वित्तीय दायित्वों का निर्वाह करती हैं।
10. 15% विद्यालयों की ग्राम शिक्षा समितियाँ अपने वित्तीय दायित्वों का निर्वहन सामान्य स्तर तक करती हैं।
11. 60% विद्यालयों की ग्राम शिक्षा समितियाँ अपने वित्तीय दायित्वों का निर्वहन उच्च स्तर तक करती हैं।
12. 15% विद्यालयों की ग्राम शिक्षा समितियाँ अपने वित्तीय दायित्वों का निर्वहन उच्चतम स्तर तक करती हैं।
13. समग्रत: न्यादर्श में चयनित विद्यालयों की ग्राम शिक्षा समितियाँ औसत रूप से अपने प्रशासनिक दायित्व, शैक्षिक तथा वित्तीय दायित्वों की प्रतिपूर्ति क्रमश: 52.36%, 30.68% तथा 68.56% तक करती हैं।

ग्राम शिक्षा समिति के प्रति अध्यापकों के दृष्टिकोण सम्बन्धी प्राप्त निष्कर्ष

1. प्रतिनिधित्व प्रतिदर्श में पुरुष वर्ग के अध्यापकों में 54% अध्यापक ग्राम शिक्षा समिति के प्रति सकारात्मक दृष्टिकोण तथा 46% अध्यापक नकारात्मक दृष्टिकोण रखते हैं।
2. महिला वर्ग के अध्यापकों में 50% ग्राम शिक्षा समिति के प्रति सकारात्मक तथा इतने ही प्रतिशत शिक्षिकाएँ ग्राम शिक्षा समिति के प्रति नकारात्मक दृष्टिकोण रखती हैं।
3. जाति वर्ग के आधार पर आरक्षित वर्ग के 75% अध्यापक ग्राम शिक्षा समिति के प्रति सकारात्मक दृष्टिकोण तथा 25% अध्यापक नकारात्मक दृष्टिकोण प्रदर्शित करते है।
4. अनारक्षित वर्ग के अध्यापकों में 35.7% अध्यापक सकारात्मक तथा 62.5% अध्यापक नकारात्मक दृष्टिकोण को प्रदर्शित करते हैं।
5. शिक्षण अनुभव के आधार पर 10 वर्ष तक शिक्षण अनुभव रखने वाले अध्यापकों में से 48% अध्यापक सकारात्मक तथा 52% अध्यापक नकारात्मक दृष्टिकोण रखते हैं।
6. 10 वर्ष से अधिक शिक्षण अनुभव रखने वाले अध्यापकों में से 56% सकारात्मक तथा 44% अध्यापक नकारात्मक दृष्टिकोण रखते हैं।

ग्राम शिक्षा समिति के प्रति अभिभावकों के दृष्टिकोण सम्बन्धी प्राप्त निष्कर्ष

1. प्रतिदर्श के आधार पर चयनित आरक्षित वर्ग के 37% अभिभावक ग्राम शिक्षा समिति के प्रति सकारात्मक तथा 63% अभिभावक नकारात्मक दृष्टिकोण प्रदर्शित करते हैं।
2. अनारक्षित वर्ग के 40% अभिभावक सकारात्मक तथा 60% अभिभावक नकारात्मक दृष्टिकोण प्रदर्शित करते हैं।
3. आय के आधार पर 1 लाख रु. तक वार्षिक आय वाले अभिभावकों में से 31% अभिभावक सकारात्मक दृष्टिकोण तथा 69% अभिभावक नकारात्मक दृष्टिकोण रखते हैं।
4. 1 लाख रु. से अधिक वार्षिक आय वाले अभिभावकों में से 52% सकारात्मक तथा 48% नकारात्मक दृष्टिकोण रखते हैं।

5. शिक्षा स्तर के आधार पर चयनित शिक्षित वर्ग के 36% अभिभावक सकारात्मक तथा 64% अभिभावक नकारात्मक दृष्टिकोण को इंगित करते हैं।
6. अशिक्षित वर्ग में से 42% अभिभावक सकारात्मक दृष्टिकोण तथा 58% अभिभावक नकारात्मक दृष्टिकोण प्रदर्शित करते हैं।

2. माध्य के आधार पर प्राप्त निष्कर्ष

माध्य के आधार पर निष्कर्ष प्राप्त करने हेतु सम्बन्धित चरों को दृष्टिगत रखते हुए प्राप्तांकों को सारणीबद्ध किया गया तथा प्राप्तांक समूहों का माध्य प्राप्तांक प्राप्त किया गया। अध्यापकों तथा अभिभावकों के विभिन्न समूहों से प्राप्त माध्य प्राप्तांकों की तुलना करके निष्कर्ष प्राप्त किये गये।

ग्राम शिक्षा समिति के प्रति अध्यापकों तथा अभिभावकों के दृष्टिकोण की तुलना सम्बन्धी निष्कर्ष

ग्राम शिक्षा समिति के प्रति अध्यापकों तथा अभिभावकों के दृष्टिकोण प्राप्तांकों के माध्य का अवलोकन करने पर ज्ञात होता है कि अध्यापकों का माध्य +2.30 है वहीं अभिभावकों का माध्य ऋणात्मक रूप से -1.96 है। अत: अभिभावकों की अपेक्षा अध्यापकों का ग्राम शिक्षा समिति के प्रति दृष्टिकोण सकारात्मक है। इसका कारण यह है कि चूंकि अध्यापक इससे जुड़े होते हैं तथा कुछ उदार नजरिया रखते हैं, परन्तु अभिभावकों की अपेक्षाएं इससे कहीं ज्यादा हैं। जो यह पूरी कर पाने में असमर्थ साबित हो रही हैं। अत: इनका मानना है कि इनको और अधिकार एवं वित्तीय साधन देकर मजबूत बनाया जाए जिससे ये अपने कर्तव्यों का निर्वहन समर्थ होकर कर सकें।

ग्राम शिक्षा समिति के प्रति अध्यापकों के दृष्टिकोण सम्बन्धी निष्कर्ष

1. आरक्षित वर्ग के अध्यापकों के दृष्टिकोण के प्राप्तांकों का माध्य +6.75 है तथा अनारक्षित वर्ग के अध्यापकों के दृष्टिकोण के प्राप्तांकों का माध्य ऋणात्मक रूप से -0.46 प्राप्त हुआ। इसका कारण यह है कि आरक्षित वर्ग पिछड़े वर्ग से आता है। अत: इनकी अपेक्षाएँ कम होती हैं। अनारक्षित वर्ग अधिकतर समृद्ध वर्ग होता है। अत: इनकी अपेक्षाएँ अधिक होती हैं। इसलिए यह अधिक सुधार की आशा रखते हैं।
2. महिला अध्यापकों के दृष्टिकोण के प्राप्तांकों का माध्य +1.96 तथा पुरुष अध्यापकों के दृष्टिकोण के प्राप्तांक का माध्य +2.70 प्राप्त हुआ। महिला अध्यापकों की अपेक्षा पुरुष अध्यापकों का दृष्टिकोण अधिक सकारात्मक है।

3. शिक्षण अनुभव के आधार पर 10 वर्ष तक का शिक्षण अनुभव रखने वाले अध्यापकों के दृष्टिकोण प्राप्तांकों का माध्य +0.7 तथा इससे अधिक शिक्षण अनुभव रखने वाले अध्यापकों के दृष्टिकोण प्राप्तांकों का माध्य +3.79 प्राप्त हुआ। स्पष्टत: 10 वर्ष से अधिक शिक्षण अनुभव रखने वाले अध्यापकों का दृष्टिकोण ग्राम शिक्षा समिति के प्रति अधिक सकारात्मक है। इसका कारण है कि जो अध्यापक अपेक्षाकृत कम अनुभव वाले हैं, उन्हें जल्दी सुधार की अपेक्षा है जिन पर ग्राम शिक्षा समिति सम्भवत: खरी नहीं उतर पा रही है। वहीं अधिक शिक्षण अनुभव रखने वाले अध्यापक ज्यादा अपेक्षाएँ नहीं रखते क्योंकि वह व्यवस्था की समस्याओं को समझ रहे हैं।

ग्राम शिक्षा समिति के प्रति अभिभावकों के दृष्टिकोण सम्बन्धी निष्कर्ष

1. आरक्षित वर्ग के अभिभावकों के दृष्टिकोण के प्राप्तांकों का माध्य ऋणात्मक रूप से −1.20 प्राप्त हुआ है तथा अनारक्षित वर्ग के अभिभावकों के दृष्टिकोण के प्राप्तांकों का माध्य ऋणात्मक रूप से −4.0 प्राप्त हुआ। अत: निष्कर्षत: कहा जा सकता है कि आरक्षित वर्ग की अपेक्षा अनारक्षित वर्ग के अध्यापकों का दृष्टिकोण ग्राम शिक्षा समिति के प्रति अधिक नकारात्मक है। इसका कारण यह है कि अनारक्षित वर्ग की अपेक्षाएँ आरक्षित वर्ग से अधिक होती हैं। वह अधिक सुविधायें व सुधार की अपेक्षा रखते हैं, जिसे यह समितियाँ सुचारु रूप से पूरा नहीं कर पा रही हैं। अत: उनका दृष्टिकोण इनके प्रति नकारात्मक है।
2. आय वर्ग के आधार पर रु. 1 लाख तक वार्षिक आय वाले अभिभावकों के दृष्टिकोण प्राप्तांकों का माध्य −3.67 है तथा इससे ऊपर आय वर्ग वाले अभिभावकों के दृष्टिकोण प्राप्तांकों का औसत 1.19 प्राप्त हुआ है। इससे ज्ञात होता है कि रु. 1 लाख आय वर्ग वाले अभिभावकों का ग्राम शिक्षा समिति के क्रियान्वयन के प्रति दृष्टिकोण नकारात्मक है। इसका कारण यह है कि उच्च आय वर्ग के बच्चे इन स्कूलों में कम पढ़ते हैं। अत: इनकी अपेक्षाएँ कम हैं, परन्तु अपेक्षाकृत निम्न आय वर्ग वाले अभिभावकों के बच्चे इन स्कूलों में पढ़ते हैं तथा यह अधिक सुचारु व्यवस्था चाहते हैं। जहाँ पर ग्राम शिक्षा समिति इनकी अपेक्षाओं को पूरा नहीं कर पा रही हैं।
3. शिक्षा स्तर के आधार पर शिक्षित वर्ग के अभिभावकों के दृष्टिकोण प्राप्तांकों का माध्य −2.04 तथा अशिक्षित वर्ग के अभिभावकों के दृष्टिकोण के प्राप्तांकों का माध्य −1.71 प्राप्त हुआ। स्पष्टत: दृष्टिगोचर होता है कि ग्राम शिक्षा समिति के प्रति शिक्षित वर्ग का दृष्टिकोण अशिक्षित वर्ग की अपेक्षा अधिक नकारात्मक है।

इसका कारण है कि शिक्षित वर्ग अधिक जागरुक होता है। वह विद्यालय स्तर पर व्याप्त कमियों को अधिक गहराई से समझता है। उसे नियमों व कानूनों की अपेक्षाकृत अधिक जानकारी होती है। अत: वह इस पर होने वाले व्यय धन तथा समय का सही सदुपयोग चाहता है। वह यह भी चाहता है कि शिक्षण स्तर तथा गुणवत्ता स्तर में गुणात्मक रूप से सुधार हो। अत: वह सुधार के प्रति अधिक आशावान होता है।

3. परिकल्पना परीक्षण के आधार पर प्राप्त निष्कर्ष

परिकल्पना परीक्षण से निष्कर्ष प्राप्त करने के लिए टी-परीक्षण तथा क्रान्तिक अनुपात का प्रयोग किया गया है। चरों के आधार पर विभिन्न चरों में से दो-दो समूहों के माध्य प्राप्तांकों के अन्तर की सार्थकता की जाँच की गयी है।

ग्राम शिक्षा समिति के प्रति अध्यापकों एवं अभिभावकों के दृष्टिकोण की तुलना सम्बन्धी निष्कर्ष

ग्राम शिक्षा समिति के प्रति अध्यापकों तथा अभिभावकों के दृष्टिकोण के मध्य सार्थक अन्तर नहीं है। अत: अध्यापकों तथा अभिभावकों का दृष्टिकोण ग्राम शिक्षा समिति के प्रति समान है।

ग्राम शिक्षा समिति के प्रति अध्यापकों के दृष्टिकोण सम्बन्धी निष्कर्ष

1. आरक्षित वर्ग के अध्यापक तथा अनारक्षित वर्ग के अध्यापकों के ग्राम शिक्षा समिति के प्रति दृष्टिकोण में कोई सार्थक अन्तर नहीं है। अर्थात् आरक्षित तथा अनारक्षित वर्ग के अध्यापकों का दृष्टिकोण ग्राम शिक्षा समिति के प्रति समान है।
2. लिंग के आधार पर महिला अध्यापक तथा पुरुष अध्यापक के ग्राम शिक्षा समिति के प्रति दृष्टिकोण के मध्य सार्थक अन्तर नहीं है। अर्थात् दोनों वर्ग के अध्यापक ग्राम शिक्षा समिति के प्रति एक तरह की सोच रखते हैं।
3. शिक्षण अनुभव के आधार पर 10 वर्ष तक शिक्षण अनुभव व इससे अधिक अनुभव रखने वाले अध्यापकों के दृष्टिकोण के मध्य सार्थक अन्तर नहीं प्राप्त हुआ। अत: दोनों वर्ग के अध्यापक एक ही दृष्टिकोण को प्रदर्शित करते हैं।

ग्राम शिक्षा समिति के प्रति अभिभावकों के दृष्टिकोण सम्बन्धी निष्कर्ष

1. जाति वर्ग के आधार पर आरक्षित वर्ग के अभिभावकों तथा अनारक्षित वर्ग के अभिभावकों के ग्राम शिक्षा समिति के प्रति दृष्टिकोण में कोई सार्थक अन्तर नहीं है।

अर्थात् आरक्षित तथा अनारक्षित वर्ग के अभिभावकों का दृष्टिकोण ग्राम शिक्षा समिति के प्रति-समान है।

2. आय वर्ग के आधार पर रु. 1 लाख वार्षिक आय वाले तथा इससे अधिक आय वर्ग वाले अभिभावकों के ग्राम शिक्षा समिति के प्रति दृष्टिकोण में कोई सार्थक अन्तर नहीं है। अर्थात् रु. 1 लाख वार्षिक आय वाले तथा इससे अधिक आय वर्ग वाले अभिभावकों का दृष्टिकोण ग्राम शिक्षा समिति के प्रति समान है।
3. शिक्षा स्तर के आधार पर शिक्षित वर्ग के अभिभावकों तथा अशिक्षित वर्ग के अभिभावकों के ग्राम शिक्षा समिति के प्रति दृष्टिकोण में कोई सार्थक अन्तर नहीं है। अर्थात् शिक्षित वर्ग के अभिभावकों तथा अशिक्षित वर्ग के अभिभावकों का दृष्टिकोण ग्राम शिक्षा समिति के प्रति एक समान है।

सुझाव

अध्ययन से प्रकट समस्याओं को दूर करने के लिए निम्न उपाय किये जा सकते हैं -

1. ग्राम शिक्षा समिति में पढ़े-लिखे जागरुक व्यक्तियों को शामिल करना चाहिए, जिससे वह अधिक बुद्धिमत्ता तथा तार्किक क्षमता से कार्यों का क्रियान्वयन कर सकें।
2. ग्राम शिक्षा समिति के गठन में आरक्षण की वजह से कहीं-कहीं योग्य व्यक्ति न मिलने पर मजबूरी वश अयोग्य व्यक्तियों को स्थान देना पड़ता है। अत: इनके गठन में लचीलापन होना चाहिए।
3. ग्राम शिक्षा सिमिमियों को और अधिक अधिकार देने चाहिए।
4. ग्राम शिक्षा समितियों को सरकार से यथा उचित तथा समय वित्तीय सहायता उपलब्ध होनी चाहिए।
5. ग्राम शिक्षा समितियों के सदस्यों की प्रशिक्षण व्यवस्था शासन द्वारा की जानी चाहिए।
6. ग्राम शिक्षा समिति के सदस्यों को शिक्षा सम्बन्धी नये-नये कानूनों की पूरी जानकारी शासन द्वारा उपलब्ध करायी जानी चाहिए।
7. ग्राम शिक्षा समिति के सदस्यों को ग्रामीण अभिभावकों से मिलकर उनके बच्चों की शिक्षा सम्बन्धी समस्याओं को दूर करने के प्रयास करने चाहिए।
8. प्रधानाचार्य जो कि ग्राम शिक्षा समिति का सचिव होता है, उसे विद्यालय के प्रशासन तथा व्यवस्था के सन्दर्भ में निर्णय लेने से पहले अध्यापकों से राय लेनी चाहिए जिससे वह भी अपने को इससे जुड़ा हुआ महसूस कर सके।
9. ग्राम शिक्षा समितियों के सदस्यों को ग्रामीणों से मिलकर विद्यालय की समस्याओं

से अवगत करना चाहिए तथा उनसे सहयोग की अपील करना चाहिए, जिससे वह भावनात्मक रूप से इसके साथ जुड़ेंगे और शिक्षा व्यवस्था का समुचित सर्वांगीण विकास हो सकेगा।

10. ग्राम शिक्षा समिति के सदस्यों को सरकार द्वारा कुछ न कुछ मानदेय तथा सुविधायें देनी चाहिए जिससे उनकी इन कार्यों में रुचि तथा प्रतिस्पर्धा बढ़ सके।

11. समय-समय पर सरकार द्वारा इनका औचक निरीक्षण कराया जाना चाहिए।

सन्दर्भ

अश्वनी; *ग्रामीण शिक्षा में सामुदायिक सहभागिता*, परिप्रेक्ष्य, (न्यूपा), वर्ष 16, अंक 1, अप्रैल, 2009

अग्रवाल, प्रमोद; *भारत में पंचायती राज*, ज्ञानगंगा, दिल्ली 2003

उ.प्र. बेसिक शिक्षा के लिए टॉनिक बनीं ग्राम समितियाँ, नवभारत टाइम्स, 5 अप्रैल, 2003

ग्राम शिक्षा समिति कार्य पुस्तिका, राज्य परियोजना कार्यालय, निशात गंज, लखनऊ

चौधरी, डॉ. विश्वनाथ; *भारत में पंचायती राज का उद्भव एवं विकास*, साधना एण्ड संस, दिल्ली 2009

जोशी, एच.आर.; *ए क्रिटिकल स्टडी ऑफ प्राब्लम्स ऑफ एडमिनिस्ट्रेशन एण्ड फाइनेन्स इन प्राइमरी एजूकेशन इन द गुजरात स्टेट विद स्पेशल रिफरेन्श टू द प्रेजेन्ट वर्किंग एण्ड द रोल ऑफ पंचायती राज बाडीज् इन सर्दन गुजरात*, पी.एच.-डी. एजूकेशन, एम.एस.यू. 1973

तीर्थ प्रकाश व सिंह सन्तोष कुमार; *पंचायती राज : यथार्थ के आइने में*, कुरूक्षेत्र अगस्त, 2007

धर, त्रिलोक एन.; *शिक्षा के विकास में स्थानीय निकायों की भूमिका, व्यक्तिगत प्रयास तथा सामुदायिक सहभागिता का प्रभाव*, परिप्रेक्ष्य, (नीपा), वर्ष 10, अंक 3, दिसम्बर 2003

पटेल, वी.ए.; *इम्पैक्ट ऑफ पंचायती राज ऑन द एडमिनिस्ट्रेशन ऑफ प्राइमरी एजूकेशन* महसाना डिस्ट्रिक्ट, पी.एच.-डी. एजूकेशन, एम.एस.यू. 1975

निशान्त सिंह; *पंचायती राज का इतिहास*, राधा पब्लिकेशन, नई दिल्ली, 2007

सिंह, डा. महिपाल; *पंचायती राज चुनौती एवं संभावनाएँ*, नेशनल बुक ट्रस्ट, इण्डिया, नई दिल्ली, 2005

यादव, सरिता; *गाँवों में शैक्षिक विकास एवं चुनौतियाँ*, कुरूक्षेत्र, प्रकाशन विभाग, सूचना एवं प्रसारण मंत्रालय, भारत सरकार, वर्ष 57, अंक 7 मई 2011.

विकास प्रशासन (EPA03) : विकेन्द्रीकरण एवं विकास खण्ड-5, एन.सी.ई.आर.टी., नई दिल्ली, प्रकाशक जनवरी, 1992

सहयोग (ग्राम शिक्षा समिति हेतु निर्देशिका)

उ.प्र. सभी के लिए शिक्षा परियोजना परिषद्, राज्य परियोजना कार्यालय, लखनऊ

परिप्रेक्ष्य
वर्ष 18, अंक 3, दिसम्बर 2011

शोध टिप्पणी/संवाद

समेकित बाल विकास परियोजना और बाल स्वास्थ्य

राजमती वर्मा* और **वीनू नागर****

सारांश

'यथावत रहने की अपेक्षा परिवर्तन' एवं 'स्वस्थ्य शरीर में स्वस्थ मस्तिष्क का विकास' जैसी उक्तियाँ सफल पारिवारिक एवं सामाजिक जीवन के लिए आदर्श वाक्य बन गयी हैं, क्योंकि प्रत्येक व्यक्ति में स्वस्थ मस्तिष्क का होना बहुत आवश्यक है, और इसके लिए उत्तम स्वास्थ्य होना चाहिए। स्वस्थ व्यक्ति किसी भी समाज, राज्य एवं राष्ट्र की शक्ति के लिए प्राथमिक जरूरत है। स्वास्थ्य का तात्पर्य है – शरीर के सभी अंग एवं स्नायु में पूर्ण सामंजस्य रखते हुए अपनी अपेक्षित क्षमता के अनुरूप कार्य कर सके। इसकी पहचान साफ-सुथरी त्वचा, चमकदार आँखें, कान्तिमय चेहरा, सन्तुलित सुगठित शरीर, पर्याप्त भूख लगना, मलाशय एवं मूत्राशय की नियमित रूप से कार्य करना तथा ज्ञानेन्द्रियों द्वारा शरीर की क्रियाओं का सही ढंग से क्रियान्वयन से होती है। चरक संहिता में भी लिखा है कि ''सर्वमन्यत् परित्यज्य शरीरमनुपालयेत तदभावे हि भवानां सर्वाभाव: शरीरिणाम।'' अर्थात् सभी सांसारिक कामों को छोड़कर पहले शरीर का पालन-पोषण करना चाहिए, क्योंकि शरीर है तो सब कुछ है और शरीर ही न रहे तो सबका अभाव हो जाता है। स्वास्थ्य के महत्व को संयुक्त राष्ट्र संघ और विश्व स्वास्थ्य संगठन जैसी संस्थाएँ भी प्रदान की हैं। तभी 7 अप्रैल, 1948 को विश्व स्वास्थ्य संगठन की स्थापना की गयी तथा प्रत्येक वर्ष 7 अप्रैल को 'विश्व स्वास्थ्य दिवस' के रूप में मनाने का निर्णय लिया गया था।

* प्रवक्ता गृह विज्ञान, रामपाल मौर्य महाविद्यालय, सुल्तानपुर घोष, फतेहपुर
** एसोसिएट प्रोफेसर एवं प्रभारी, गृह विज्ञान, एन.के.बी.एम.जी.पी.जी.कालेज, चन्दौसी, मुरादाबाद

आजादी के समय भारत के अधिकांश लोग गरीब थे। अपने आय का 80 प्रतिशत भाग भोजन पर खर्च करने के बाद भी उनके आहार में पर्याप्त पोषक तत्वों का अभाव रहता था। चूंकि इन लोगों के गन्दे परिवेश में निवास करने के कारण इनमें सक्रमण की दर उच्च रहती थी। माताओं द्वारा कुपोषण तथा स्वास्थ्य की सही देख-रेख न कर पाने के कारण भी रोग से संक्रमित होने का खतरा ज्यादा रहता था। परिणाम स्वरूप भारतीय, विशेष कर बच्चे कुपोषण के शिकार रहते थे। इसलिए भारत में ऐसे कार्यक्रम चलाये गये जिनसे आर्थिक विकास किया जा सके, गरीबी को कम किया जा सके, घर-गृहस्थी के खाद्य सुरक्षा तथा लोगों के पोषण स्तर में सुधार किया जा सके, विशेषकर महिलाओं और बच्चों के। इसके बाद भी भारत के लगभग 15.90 करोड़ बच्चों में से आधी संख्या में बच्चे अपर्याप्त पोषण के शिकार हैं जो 0-6 वर्ष आयु समूह के हैं। ये बच्चे भारत के सम्पूर्ण आबादी में 13.01% स्थान रखते हैं। रामचन्द्रन के अनुसार, गरीबी और मृत्युदर घटकर 50% से भी कम रह गयी है, शिशु जन्मदर घटकर 40% रह गया है परन्तु बच्चों में अपर्याप्त पोषण दर 20% ही घट पायी है।

शोध की आवश्यकता एवं महत्व

2 अक्टूबर 1975 को 'बच्चे ही भावी युवा एवं परिवार समाज तथा राष्ट्र के कर्णधार होते हैं।' इस बचपन को बचाने के लिए तथा उन्हे उचित पोषक तत्व उपलब्ध कराने के लिए पूरे भारत के 33 सामुदायिक विकास खंड़ों (CDB) में समेकित बाल विकास परियोजना (ICDS) आरम्भ किया गया। सम्पूर्ण भारत के 590 जनपदों में विस्तृत 12 लाख स्थापित तथा 2 लाख प्रस्तावित आंगनबाड़ी केन्द्रों से लाभान्वित पूर्व-विद्यालयीय बच्चों (3-6 वर्ष) की संख्या 7 करोड़ से अधिक है। केवल उत्तर प्रदेश के 71 जिलों में 835 CDB के अन्तर्गत लगभग 1,38,299 ICDS केन्द्र संचालित हो रहे थे, जब कि बलिया जनपद के सीयर CDB में 204 ICDS केन्द्र संचालित किये जा रहे हैं। इससे लाभान्वित पूर्व-विद्यालयीय बच्चों की कुल संख्या 16,685 थी। वर्ष 2007 से पूर्व सभी विद्यालयीय बच्चों को केवल विनिंग फुड के तहत दरिया 80 ग्राम प्रतिछात्र, प्रतिदिन उपलब्ध कराया जाता था, परन्तु 3 मई 2007 के शासनादेश के तहत बलिया जनपद के 18 CDB में से केवल पाँच में एमाइलेज रिच इनर्जी फूड (Hot Cooked Food) दिये जाने का निर्णय लिया गया।

उपरोक्त तथ्यों के परिप्रेक्ष्य में इस विचार का उद्‌भव हुआ कि महिलाओं एवं बच्चों के जीवन-स्तर को सुधारने तथा उन्हें पर्याप्त पोषण प्रदान करने हेतु सरकार द्वारा विभिन्न

प्रयास किये जा रहे हैं। खासतौर पर ICDS विश्व के सबसे वृहद भारतीय जन कल्याणकारी योजना होने के बाद भी शिशुओं एवं बालकों की मृत्युदर में कमी एवं पोषण-स्तर में सुधार क्यों नहीं हो पा रहा है? गर्भवती माताओं द्वारा अविकसित तथा कम भार के बच्चों को जन्म दिया जाना, अनीमिया से पीड़ित होना, धातृ माताओं को अनीमिया तथा पीलिया से पीड़ित होना इत्यादि बातों ने ही शोध कार्य के लिए अभिप्रेरित किया कि, क्यों न इस तरह की समस्या का चयन किया जाए जो जन सामान्य के जीवन से जुड़ा हो।

वर्तमान शोध कार्य का महत्व इस बात में निहित है कि प्राप्त परिणाम के फलस्वरूप सरकारी तथा गैर-सरकारी एजेन्सियों को नई दिशा प्राप्त हो सकेगी; माता-पिता बच्चों के आहार पर पर्याप्त ध्यान दे सकेंगे; आहार सम्बन्धी ज्ञान होने पर माताएँ स्वस्थ शिशु को जन्म दे सकेंगी; विद्यालयों के परिवेश में जागरुकता आ सकेगी; अभिभावक ICDS सेवा केन्द्रों तथा पूरक-आहार के प्रति जागरुक हो सकेंगे; ICDS केन्द्रों पर पूरक आहार की गुणवत्ता एवं उपलब्धता सुनिश्चित हो सकती है; ICDS केन्द्रों पर बच्चों के साथ लिंगीय भेद-भाव पर विराम लग सकता है; दिये गये सुझावों के आधार पर सरकार/प्रशासन, अपने नीति-निर्माण में संशोधन कर सकेंगी; पूर्व-विद्यालयीय बच्चों के आहार पर परिवेश का प्रभाव ज्ञात हो जाने से अभिभावक उपयुक्त परिवेश का निर्माण कर सकेंगे; ICDS योजना का लाभ पूर्व-विद्यालयीय बच्चों के स्वास्थ्य पर पड़ रहा है या नहीं, यह ज्ञात हो सकेगा तथा इसी परिप्रेक्ष्य में पूरक आहार की मात्रा उपलब्धता तथा गुणवत्ता में सुधार किया जा सकेगा।

प्रयुक्त पदों की संक्रियात्मक परिभाषाएँ

प्रस्तुत शोध शीर्षक में प्रयुक्त तकनीकी शब्दों का स्पष्टीकरण निम्नवत् है-

समेकित बाल विकास सेवा 2 अक्टूबर सन् 1975 को प्रारम्भ की गयी, वह जन कल्याणकारी योजना जो स्कूल पूर्व बच्चों और उनकी माताओं की जीवित रहने की दर को बढ़ाने और उन्हें पौष्टिक भोजन एवं सीखने के अवसर प्रदान करने वाली एक महत्वाकांक्षी योजना है, जिसे केन्द्र पर समन्वित रूप में उपलब्ध कराना है। इसे एकीकृत बाल विकास सेवा या समेकित बाल विकास परियोजना भी कहा जाता है। इसकी समस्त सेवाएँ आँगनबाड़ी नामक केन्द्र पर उपलब्ध करायी जाती हैं।

समेकित बाल विकास परियोजना के अन्तर्गत पूर्व-विद्यालयीय बच्चों की उम्र 3-6

वर्ष की मानी गयी है। प्रस्तुत अध्ययन में पूर्व विद्यालयीय बच्चों से तात्पर्य 3–6 वर्ष की आयु वर्ग के बच्चों से है।

आहार कोई भी खाद्य–पदार्थ जो भूख को मिटाने के लिए खायी जाए और जिससे हमें ऊर्जा की आपूर्ति होती है, शरीर का निर्माण होता है, शरीर की सुरक्षा एवं शारीरिक क्रियाकलापों को सुचारु रूप से संचालित करता है। साथ ही हमें मानसिक स्थिति जैसे– आनन्द, प्रसन्नता, संतुष्टि व सुरक्षा भी प्रदान करता है।

प्रस्तुत अध्ययन में आहार से आशय समेकित बाल विकास परियोजना (ICDS) के अन्तर्गत प्राप्त होने वाले आहार से है।

शोध उद्देश्य

समेकित बाल विकास परियोजना केन्द्रों पर उपलब्ध आहार का पूर्व–विद्यालयीय बच्चों (3–6 वर्ष) के स्वास्थ्य पर पड़ने वाले प्रभाव का अध्ययन करना।

सहायक उद्देश्य

1.1 विभिन्न आयु समूह के लड़कियों के भार के मध्य स्थापित मानक से परस्पर तुलना करना।

1.2 विभिन्न आयु समूह के लड़कियों की ऊँचाई के मध्य स्थापित मानक से परस्पर तुलना करना।

1.3 विभिन्न आयु समूह के लडकों के भार के मध्य स्थापित मानक से परस्पर तुलना करना।

1.4 विभिन्न आयु समूह के लड़कों की ऊँचाई के मध्य स्थापित मानक से परस्पर तुलना करना।

1.5 विभिन्न आयु समूह के लडकियों का BMI के मध्य स्थापित मानक से परस्पर तुलना करना।

1.6 विभिन्न आयु समूह के लडकों का BMI के मध्य स्थापित मानक से परस्पर तुलना करना।

शोध सीमांकन

1. प्रस्तुत अध्ययन बलिया जनपद के ग्रामीण अंचलों तक ही सीमित है।

2. प्रस्तुत अध्ययन में बलिया जनपद के केवल एक ही सामुदायिक विकास खंड सीयर को लिया गया है।
3. प्रस्तुत अध्ययन ICDS लाभान्वित पूर्व-विद्यालयीय बच्चों तक ही सीमित है।
4. पूरक आहार के प्रभाव के अध्ययन हेतु सम्बन्धित विकास खण्ड के 500 लाभान्वित पूर्व-विद्यालयीय बच्चों को ही चुना गया है।

शोध विधि

प्रस्तुत शोध में 'वर्णनात्मक सर्वेक्षण विधि'' का प्रयोग किया गया है जिसके माध्यम से एक ही समय में, तुलनात्मक रूप से एक बड़ी संख्या से प्रदत्त संकलन किया जाता है तथा व्यक्तिगत विशेषताओं पर ध्यान नहीं दिया जाता है।

जनसंख्या

प्रस्तुत शोध कार्य हेतु बलिया जनपद के ग्रामीण अंचल में ICDS केन्द्रों में सत्र 2008-2009 में नामांकित पूर्व-विद्यालयीय बच्चों (3-6 वर्ष) को जनसंख्या के रूप में सम्मिलित किया गया है।

न्यादर्श एवं न्यादर्शन तकनीक

सीयर ब्लाक के 204 ICDS केंद्रों से लाभान्वित 500 पूर्व-विद्यालयीय बच्चों (3-6 वर्ष) का चयन 'पुंजानुसार प्रतिचयन' तकनीक द्वारा 12 ICDS केन्द्रों (सोनाडीह, गौरीताल घोसा, चरौवां, भिण्डकुण्ड, पिपरौली, बड़ागाँव, फरसाटार, रामपुर चन्देला, एक्सार, इन्दौली, दोथ, पशुहारी एवं राजपुर) से किया गया है, जिसमें 211 बालक तथा 289 बालिकाएँ सम्मिलित हैं।

उपकरण

शोध उद्देश्य की पूर्ति हेतु ICDS से पूरक आहार प्राप्त करने वाले पूर्व-विद्यालयीय बच्चों (3-6 वर्ष) आयु वर्ग के शारीरिक भार एवं लम्बाई को माप कर दिये गये मानक से तुलना किया गया है, जिससे पूरक-आहार प्राप्त करने वाले बच्चों पर, पूरक–आहार से उनके शरीर पर पड़ने वाले प्रभाव को ज्ञात किया जा सके। पूर्व–विद्यालयीय बच्चों में पोषण–स्तर जानने हेतु BMI (Body Mass Index) ज्ञात किया गया है जो प्रत्येक बच्चों के शारीरिक भार में लम्बाई के वर्ग से भाग देने पर प्राप्त होता है। इसका भी Ghai Essential Stander से तुलना किया गया है।

चरों का स्पष्टीकरण

स्वतंत्र चर : समेकित बाल विकास सेवा (ICDS) केंद्रों पर प्राप्त आहार को स्वतंत्र चर के रूप में लिया गया है।

आश्रित चर : पूर्व-विद्यालयीय बच्चों पर पड़ने वाले पूरक आहार के प्रभाव को आश्रित चर के रूप में लिया गया है।

बाह्य चर : प्रायोगिक स्थिति में स्वतंत्र चर के अतिरिक्त कुछ वाह्य कारक भी आश्रित चर को प्रभावित करते हैं, जो निम्नवत हैं-

1. समय 2. व्यक्तिगत परेशानी 3. ICDS केन्द्र का वातावरण 4. सहयोग की स्थिति, 5. मन:स्थिति

प्रयुक्त सांख्यिकीय विधियाँ

मध्यमान, मानक विचलन तथा टी-परीक्षण द्वारा आंकड़ो का विश्लेषण किया गया है। इसके अतिरिक्त Statistical Package for Social Science सॉफ्टवेयर का भी प्रयोग किया गया है।

परिणाम

शोध उद्देश्य को प्राप्त करने हेतु ICDS से पूरक आहार प्राप्त करने वाले पूर्व-विद्यालयीय

तालिका-1

विभिन्न आयु समूह (3-6 वर्ष) की लड़कियों के भार के मध्य मानक से परस्पर तुलना

आयु वर्ग (माह)	संख्या	माध्य ± मा.वि. (बालिका) भार		सांख्यिकीय मान	सार्थकता स्तर
		अध्ययन समूह	नियंत्रित समूह		
36-48	92	13.55±2.51	14.63±2.43	t=2.909; df=91	0.01
48-60	96	13.62±2.58	16.86±3.09	t=7.890; df=95	0.01
60-72	101	13.37±2.79	19.14±3.64	t=11.939;df=100	0.01
Total	**289**	**13.51±2.62**	**16.95±3.61**	**t=12.68;df=288**	**0.01**

बच्चों (3–6) आयु वर्ग के शारीरिक भार एवं लम्बाई को माप कर उसे Ghai Essential Pediatrics' (2006) में दिये गये मानक से तुलना किया गया है।

तालिका संख्या 1.1 के निरीक्षण से ज्ञात होता है कि अध्ययन में सम्मिलित 36 माह से 48 माह आयु वर्ग के लड़कियों के भार का मध्यमान 13.55 प्राप्त हुआ है तथा इसी आयु वर्ग हेतु स्थापित भार सम्बन्धी मानक में लड़कियों का मध्यमान 14.63 दिया गया है। इससे स्पष्ट होता है कि स्थापित मानक की तुलना में 36 माह से 48 माह आयु वर्ग की लड़कियां कम भार की हैं। साथ ही 'टी' मूल्य के अवलोकन से भी ज्ञात होता है कि सार्थकता के 0.01 स्तर पर दोनों समूह पर्याप्त अन्तर रखते हैं।

इसी प्रकार 48 माह से 60 माह आयु समूह की लड़कियों के भार का मध्यमान 13.62 प्राप्त हुआ है जबकि निर्धारित मानक मध्यमान 16.86, इसी आयु समूह की लड़कियों हेतु दिया गया है। जिससे स्पष्ट होता है कि स्थापित मानक की तुलना में 48 माह से 60 माह आयु वर्ग की पूर्व–विद्यालयीय लड़कियां कम भार रखती हैं। उपर्युक्त तालिका के निरीक्षण से यह भी स्पष्ट होता है कि निर्धारित मानक समूह एवं प्रतिचयनित समूह विश्वसनीयता के 0.01 स्तर पर सार्थक अन्तर प्रदर्षित करते हैं।

60 माह से 72 माह आयु वर्ग की लड़कियों के भार का मध्यमान 13.37 तथा स्थापित भार सम्बन्धी मानक मध्यमान 19.14 है। इन मध्यमानों के दृश्यावलोकन से स्पष्ट होता है कि स्थापित मानक की तुलना में 60 माह से 72 माह आयु वर्ग की लड़कियां कम भार की हैं। इसी तालिका के 'टी' मूल्य से भी स्पष्ट होता है कि दोनों समूह की लड़कियां 0.01 स्तर के सार्थकता स्तर पर भार में पर्याप्त अन्तर रखती हैं।

3 से 6 वर्ष की सभी लड़कियों के भार का संयुक्त मध्यमान 13.51 प्राप्त हुआ है तथा प्राप्त मानक मध्यमान 16.95 है। इन मध्यमानों के अवलोकन से स्पष्ट होता है कि 3 से 6 वर्ष आयु की लड़कियाँ स्थापित मानक से कम भार की हैं। 'टी' मूल्य से भी ज्ञात होता है कि 0.01 सार्थकता स्तर पर दोनों समूह की लड़कियां पर्याप्त अन्तर रखती हैं। इस आधार पर कहा जा सकता है कि ICDS लाभान्वित पूर्व–विद्यालयीय लड़कियां भार के सन्दर्भ में समुचित मात्रा में पूरक आहार नहीं प्राप्त कर पा रहीं हैं।

तालिका-2

विभिन्न आयु समूह (3-6 वर्ष) की लड़कियों की ऊँचाई के मध्य मानक से परस्पर तुलना

आयु वर्ग (माह)	संख्या	माध्य ± मा.वि. (बालिका) भार		सांख्यिकीय मान	सार्थकता स्तर
		अध्ययन समूह	नियंत्रित समूह		
36-48	92	103.13± 9.30	96.28±5.61	t=6.099; df=91	0.01
48-60	96	102.61± 8.13	103.27±6.08	t= 0.650; df=95	N.S.
60-72	101	102.74± 9.19	110.15±6.33	t= 6.541; df=100	0.01
Total	**289**	**102.82± 8.86**	**103.45±8.26**	**t=0.871;df=288**	**N.S.**

उपरोक्त तालिका के अवलोकन से ज्ञात होता है कि 36 माह से 48 माह आयु वर्ग की लड़कियों की ऊँचाई का मध्यमान 103.13 प्राप्त हुआ है और इसी आयु वर्ग की लड़कियों का निर्धारित मानक मध्यमान 96.28 ज्ञात है। इससे स्पष्ट होता है कि 3 से 4 वर्ष की पूर्व-विद्यालयीय लड़कियां, निर्धारित मानक की तुलना में अधिक ऊँचाई रखती हैं। इसी तालिका के 'टी' मूल्य से भी ज्ञात होता है कि 0.01 स्तर पर दोनों समूह आपस में सार्थक अन्तर रखते हैं।

विभिन्न आयु समूह की लड़कियों में 48 माह से 60 माह आयु समूह की तालिका के दृश्यावलोकन से स्पष्ट होता है कि इनका ऊँचाई सम्बन्धी मध्यमान 102.61 प्राप्त हुआ है जबकि इसी आयु समूह की लड़कियों का मानक मध्यमान 103.27 ज्ञात है। इन मध्यमानों के अवलोकन से स्पष्ट होता है कि दोनों मध्यमानों के मध्य आपस में बहुत अन्तर नहीं है। अर्थात् निर्धारित मानक को 4 से 5 वर्ष की लड़कियां लगभग पूरा करती हैं। 'टी' मूल्य से भी ज्ञात होता है कि दोनों समूह आपस में कोई सार्थक अन्तर इंगित नहीं कर रहे हैं।

60 माह से 72 माह आयु वर्ग की लड़कियों का ऊँचाई सम्बन्धी स्थापित मानक मध्यमान 110.15 दिया हुआ है तथा इसी आयु वर्ग की ICDS लाभान्वित लड़कियों का मध्यमान 102.74 प्राप्त हुआ है। इसके आधार पर हम कह सकते हैं कि स्थापित मानक

की तुलना में, अध्ययन में सम्मिलित लड़कियां कम ऊँचाई की हैं। इन दोनों समूह की लड़कियां 'टी' मूल्य के 0.01 विश्वसनीयता स्तर पर भी सार्थक अन्तर प्रदर्शित करती हैं। इस व्याख्या के आधार पर हम कह सकते हैं कि 3 से 4 एवं 5 से 6 वर्ष आयु समूह की पूर्व-विद्यालयीय लड़कियां निर्धारित मानक की तुलना में कम ऊँचाई की हैं जबकि 4 से 5 वर्ष आयु समूह की लड़कियां निर्धारित मानक को लगभग पूरा करती हैं। पूर्व-विद्यालयीय लड़कियों की ऊँचाई का संयुक्त मध्यमान 102.82 प्राप्त हुआ है तथा निर्धारित मानक मध्यमान 103.45 है जिससे ज्ञात होता है कि 3 से 6 वर्ष की लड़कियाँ निर्धारित मानक को लगभग पूरा कर रही हैं। 'टी' मूल्य के अवलोकन से भी स्पष्ट होता है कि दोनों समूह के मध्य कोई सार्थक अन्तर नहीं है। उपर्युक्त व्याख्या के आधार पर कहा जा सकता है कि 3 से 4 वर्ष आयु समूह की लड़कियाँ निर्धारित मानक से अधिक ऊँचाई रखती हैं तथा 4 से 5 वर्ष की लड़कियाँ निर्धारित मानक के लगभग बराबर हैं, परन्तु 5 से 6 वर्ष की लड़कियाँ निर्धारित मानक से कम ऊँचाई की हैं। अर्थात् 3 से 5 वर्ष की आयु समूह की लड़कियाँ ऊँचाई के परिप्रेक्ष्य में पूरक आहार का लाभ प्राप्त कर रही हैं जबकि 5 से 6 वर्ष आयु समूह की लड़कियाँ ऊँचाई के परिप्रेक्ष्य में पूरक आहार का समुचित लाभ प्राप्त कर रही हैं।

तालिका-3

विभिन्न आयु समूह (3-6 वर्ष) के लड़कों का भार के मध्य मानक से परस्पर तुलना

आयु वर्ग (माह)	संख्या	माध्य ± मा.वि. (बालक) भार		सांख्यिकीय मान	सार्थकता स्तर
		अध्ययन समूह	नियंत्रित समूह		
36-48	93	12.57±2.31	14.99±0.75	t= 9.780; df=92	0.01
48-60	67	15.08±1.95	17.47±0.67	t=15.201; df=66	0.01
60-72	51	15.88±2.14	19.78±0.72	t= 7.771; df=50	0.01
Total	**211**	**14.17±2.59**	**16.94±2.06**	**t=17.567; df=210**	**0.01**

तालिका-3 के अवलोकन से स्पष्ट होता है कि 36 माह से 48 माह आयु समूह के लड़कों

का भार सम्बन्धी मध्यमान 12.57 प्राप्त हुआ है जबकि इसी आयु समूह के लड़कों का निर्धारित मानक मध्यमान 14.99 है। इससे ज्ञात होता है कि निर्धारित मानक की तुलना में न्यादर्श में सम्मिलित लड़के कम भार के हैं। दोनों समूह के मध्यमानों के मध्य 'टी' मूल्य से भी स्पष्ट होता है कि 0.01 विश्वसनीयता स्तर पर सार्थक अन्तर रखते हैं।

48 माह से 60 माह आयु वर्ग के लड़कों के भार का मध्यमान उपर्युक्त तालिका में 15.08 ज्ञात हुआ है तथा इसी आयु वर्ग के लिए स्थापित भार सम्बन्धी मानक मध्यमान 17.47 निर्धारित किया हुआ है। इन दोनों मध्यमानों के अवलोकन से इंगित होता है कि 48 से 60 माह आयु वर्ग के लड़के स्थापित मानक से कम भारत रखते हैं। 'टी' मूल्य के दृश्यावलोकन से भी स्पष्ट होता है कि 0.01 स्तर पर दोनों समूह सार्थक अन्तर प्रदर्शित करते हैं।

उपर्युक्त तालिका से यह भी प्रदर्शित होता है कि 60 माह से 72 माह आयु समूह के लड़कों का भार सम्बन्धी मध्यमान 15.88 तथा निर्धारित भार सम्बन्धी मानक मध्यमान 19.78 है जिससे ज्ञात होता हैं कि 60 से 72 माह अर्थात् 5 से 6 वर्ष आयु समूह के लड़के निर्धारित मानक से कम भार के हैं। इन मध्यमानों के 'टी' मूल्य से भी दृष्टिगत होता है कि दोनों समूह के लड़के 0.01 विश्वसनीयता स्तर पर सार्थक अन्तर रखते हैं।

सभी आयु वर्ग के लड़कों का भार सम्बन्धी प्राप्त मध्यमान 14.17 प्राप्त हुआ

तालिका-4

विभिन्न आयु समूह (3-6 वर्ष) के लड़कों की ऊँचाई के मध्य मानक से परस्पर तुलना

आयु वर्ग (माह)	संख्या	माध्य ± मा.वि. (बालक) भार		सांख्यिकीय मान	सार्थकता स्तर
		अध्ययन समूह	नियंत्रित समूह		
36-48	93	98.30±7.95	97.85±2.44	t=3.143; df=92	0.01
48-60	67	105.59±6.37	106.02±1.85	t=2.063; df=66	0.05
60-72	51	111.12±5.05	112.62±2.43	t=0.403; df=50	NS
Total	**211**	**103.71±8.60**	**104.02±42**	**t=0.615;df=210**	**NS**

है तथा मानक मध्यमान 16.94 दिया गया है, जिससे ज्ञात होता है कि 3 से 6 आयु समूह के लड़के भार सम्बन्धी मानक को पूरा नहीं करते हैं। 'टी' से भी ज्ञात होता है कि 0.01 स्तर पर दोनों समूह सार्थक अन्तर रखते हैं। उपर्युक्त व्याख्या के आधार पर कहा जा सकता है कि 3-6 वर्ष के पूर्व-विद्यालयीय लड़के भार के परिप्रेक्ष्य में पूरक आहार का लाभ प्राप्त नहीं कर पा रहे हैं।

तालिका-4 से ज्ञात होता है कि 36 माह से 48 माह आयु समूह के छात्रों का ऊँचाई सम्बन्धी मध्यमान 98.30 प्राप्त हुआ है, जबकि इसी आयु समूह के पूर्व-विद्यालयीय लड़कों का निर्धारित ऊँचाई सम्बन्धी मानक मध्यमान 97.85 है। इससे ज्ञात होता है कि निर्धारित ऊँचाई सम्बन्धी मानक की तुलना में अध्ययन में सम्मिलित लड़के अधिक ऊँचाई रखते हैं। यह अन्तर 'टी' मूल्य से भी दृष्टिगत होता है जो विश्वसनीयता के 0.01 स्तर पर सार्थक अन्तर प्रदर्शित करते हैं।

48 माह से 60 माह आयु वर्ग के लड़कों के लिए ऊँचाई सम्बन्धी मध्यमान 106.02 मानक के रूप में निर्धारित है तथा शोध में चयनित इसी आयु समूह के लड़कों का ऊँचाई मध्यमान 105.59 प्राप्त हुआ है। इससे स्पष्ट होता है कि न्यादर्श में सम्मिलित लड़के, निर्धारित ऊँचाई सम्बन्धी मानक की तुलना में कम ऊँचाई के हैं। 'टी' मूल्य के अवलोकन से भी स्पष्ट होता है कि दोनों समूह, 0.05 विश्वसनीयता स्तर पर सार्थक अन्तर रखते हैं।

111.12 ऊँचाई सम्बन्धी मध्यमान रखने वाले 60 माह से 72 माह आयु वर्ग के लड़के, स्थापित ऊँचाई सम्बन्धी मानक मध्यमान 112.62 की तुलना में कम ऊँचाई रखते हैं। परन्तु यह अन्तर विश्वसनीयता स्तर पर कोई सार्थक अन्तर इंगित नहीं करता है। अर्थात् 5 से 6 वर्ष आयु समूह के लड़के ऊँचाई के सम्बन्ध में मानक को पूरा करते हैं।

उपर्युक्त सभी समूह के छात्रों का संयुक्त मध्यमान 103.71 ज्ञात हुआ है और मानक मध्यमान 104.02 निर्धारित है, जिससे स्पष्ट होता है कि 3 से 6 वर्ष पूर्व-विद्यालयीय लड़के स्थापित ऊँचाई सम्बन्धी मानक को पूरा कर रहे हैं। दोनों समूहों के 'टी' मूल्य से ज्ञात होता है कि वे आपस में सार्थक अन्तर नहीं रखते हैं। इस आधार पर हम कह सकते हैं कि 3 से 4 वर्ष आयु समूह के लड़के स्थापित मानक से अधिक ऊँचाई के हैं अर्थात् इन्हें पूरक-आहार का समुचित लाभ प्राप्त हो रहा है। जबकि 4 से 5 वर्ष आयु समूह के लड़के स्थापित ऊँचाई सम्बन्धी मानक को नहीं पूरा कर रहे हैं अर्थात् वे पूरक आहार का

तालिका-5
विभिन्न आयु समूह (3-6 वर्ष) के लड़कियों की ऊँचाई के मध्य मानक से परस्पर तुलना

आयु वर्ग (माह)	संख्या	माध्य ± मा.वि. (बालिका) भार		सांख्यिकीय मान	सार्थकता स्तर
		अध्ययन समूह	नियंत्रित समूह		
36-48	92	12.74± 2.15	15.49± 0.13	t=12.280; df=91	0.01
48-60	96	12.88± 1.61	15.24± 0.08	t=14.420;df=95	0.01
60-72	101	12.60± 1.80	15.18± 0.07	t=14.453;df=100	0.01
Total	**289**	**12.74±1.86**	**15.30±0.17**	**t=23.456;df=288**	**0.01**

समुचित लाभ नहीं प्राप्त कर रहे हैं। 5 से 7 आयु वर्ग के लड़के स्थापित ऊँचाई सम्बन्धी मानक पूरा कर रहे हैं अर्थात् इन्हें भी पूरक आहार का समुचित लाभ प्राप्त हो रहा है।

BMI (Body Mass Index) के अन्तर्गत् पोषण स्तर जानने हेतु 3 से 6 वर्ष के प्रत्येक पूर्व-विद्यालयीय बच्चों के शारीरिक भार में लम्बाई के वर्ग से भाग देने पर प्राप्त BMI के मान का निर्धारित मानक से तुलना किया गया है। तालिका संख्या 5 में 36 माह से 48 माह आयु वर्ग के पूर्व-विद्यालयीय लड़कियों का BMI मध्यमान 12.74 तथा इसी आयु वर्ग हेतु स्थापित मानक मध्यमान 15.49 दिया गया है। इससे स्पष्ट होता है कि 36 से 48 माह आयु वर्ग की लड़कियों का मध्यमान निर्धारित BMI मानक की तुलना में कम है। 'टी' मूल्य के अवलोकन से भी ज्ञात होता है कि विश्वसनीयता के 0.01 स्तर पर दोनों समूह पर्याप्त सार्थक अन्तर रखते हैं।

उपर्युक्त वर्तमान तालिका के निरीक्षण से ज्ञात होता है कि 48 माह से 60 माह आयु वर्ग की लड़कियों का निर्धारित BMI मानक मध्यमान 15.24 और इसी आयु वर्ग हेतु प्राप्त BMI मानक मध्यमान 12.88 है। इससे ज्ञात होता है कि 48 से 60 माह आयु वर्ग की लड़कियां निर्धारित BMI मानक को पूर्ण नहीं करती हैं। यह तथ्य 'टी' मूल्य के निरीक्षण से भी स्पष्ट होता है, जो 0.01 सार्थकता स्तर पर अन्तर प्रदर्शित करता है।

इसी प्रकार, 60 माह से 72 माह आयु समूह की लड़कियों हेतु स्थापित BMI मानक मध्यमान 15.18 निर्धारित किया गया है तथा इसी आयु समूह के पूर्व-विद्यालयीय लड़कियों का BMI मध्यमान 12.60 प्राप्त हुआ है। इन मध्यमानों से ज्ञात होता है कि 60 से 72 माह आयु समूह की लड़कियां निर्धारित भार एवं लम्बाई सम्बन्धी BMI मानक को पूरा नहीं कर रही हैं। साथ ही दोनों समूह 0.01 विश्वसनीयता स्तर पर सार्थक अन्तर इंगित करते हैं।

तीनों आयु वर्ग की लड़कियों का संयुक्त मध्यमान 12.74 तथा स्थापित मानक मध्यमान 15.30 उपर्युक्त तालिका में दिया गया है। इससे स्पष्ट होता है कि 3 से 6 वर्ष आयु समूह की लड़कियां मानक के सम्बन्ध में पर्याप्त ऊँचाई एवं भार को पूर्ण नहीं करती हैं। इस आधार पर कहा जा सकता है कि 3-6 वर्ष की पूर्व-विद्यालयीय लड़कियों को ICDS द्वारा प्रदत्त पूरक आहार का लाभ नहीं मिल पा रहा है।

तालिका-6

विभिन्न आयु समूह (3-6 वर्ष) के लड़कों का BMI के मध्य मानक से परस्पर तुलना

आयु वर्ग (माह)	संख्या	माध्य ± मा.वि. (बालक) भार		सांख्यिकीय मान	सार्थकता स्तर
		अध्ययन समूह	नियंत्रित समूह		
36-48	93	13.04 ± 2.25	15.50 ± 0.72	t= 9.895; df=92	0.01
48-60	67	13.56 ± 1.66	15.47 ± 0.12	t= 9.384; df=66	0.01
60-72	51	12.83 ± 1.08	15.47 ± 0.12	t=16.816; df=50	0.01
Total	**211**	**13.16± 1.85**	**15.47± 0.49**	**t=17.34;df=210**	**0.01**

उपर्युक्त तालिका से ज्ञात होता है कि 36 माह से 48 माह आयु समूह के पूर्व-विद्यालयीय लड़कों का निर्धारित BMI मानक मध्यमान 15.50 ज्ञात है, जबकि अध्ययन से इसी आयु समूह हेतु प्राप्त BMI मध्यमान 13.04 प्राप्त हुआ है, जिससे स्पष्ट होता है कि निर्धारित मानक की तुलना में 36 से 48 माह आयु समूह के लड़के कम भार व ऊँचाई रखते हैं।

'टी' मूल्य के अवलोकन से भी स्पष्ट होता है कि 0.01 स्तर पर दोनों समूह के लड़के आपस में सार्थक अन्तर प्रदर्शित करते हैं।

तालिका-6 के अवलोकन से ज्ञात होता है कि 48 माह से 60 माह आयु वर्ग के लड़कों का BMI मध्यमान 13.56 प्राप्त हुआ है एवं इसी आयु वर्ग हेतु निर्धारित BMI मानक मध्यमान 15.47 ज्ञात हुआ है। इन दोनों मध्यमानों से स्पष्ट होता है कि स्थापित BMI मानक की तुलना में न्यादर्श में चयनित लड़के कम मध्यमान के हैं। 'टी' मूल्य से भी दृष्टिगोचर होता है कि सार्थकता के 0.01 स्तर पर दोनों समूह के मध्य पर्याप्त अन्तर है।

उपर्युक्त तालिका के निरीक्षण से यह भी स्पष्ट होता है कि 60 माह से 72 माह आयु वर्ग के पूर्व-विद्यालयीय लड़कों का BMI मध्यमान 12.83 प्राप्त हुआ है और निर्धारित BMI मानक मध्यमान 15.40 ज्ञात है। इससे स्पष्ट होता है कि निर्धारित BMI मानक की तुलना में 60 से 72 माह आयु वर्ग के लड़के कम BMI मध्यमान रखते हैं। 'टी' मूल्य के अवलोकन से भी दृष्टिगत होता है कि दोनों समूह के लड़के 0.01 विश्वसनीयता स्तर पर सार्थक अन्तर रखते हैं अर्थात् निर्धारित मानक की तुलना में 5 से 6 वर्ष के बच्चे कम भार व ऊँचाई के हैं।

उपरोक्त तथ्यों के आधार पर हम कह सकते हैं कि 3 वर्ष से 6 वर्ष आयु समूह के पूर्व-विद्यालयीय लड़के ऊँचाई एवं भार के सम्बन्ध में निर्धारित मानक से कम मान रखते हैं अर्थात् ICDS परियोजना के पूरक आहार का समुचित लाभ इन्हें नहीं प्राप्त हो रहा है।

शोध का निहितार्थ

आहार प्रत्येक प्राणी के लिए अति आवश्यक तत्व है। आहार से शरीर को जहाँ ऊर्जा मिलती है, वहीं वह शरीर को स्वस्थ व सुन्दर बनाये रखता है। आहार की आवश्यकता प्रत्येक शिशु, बच्चे, वयस्क, प्रौढ़ तथा बूढ़ों को होती है। प्रस्तुत शोध के प्राप्त परिणाम से सरकारी तथा गैर-सरकारी एजेंसियों को नयी दिशा प्राप्त हो सकती है। साथ ही ICDS परियोजना से जुड़े कार्यकर्ता/कार्यकर्त्रियाँ अपने निष्पादन-स्तर में सुधार करने को प्रेरित हो सकेंगे। पूरक आहार लाभान्वितों के BMI पर दृष्टिपात करने से निराशाजनक तस्वीर सामने आती है कि ICDS विश्व की सबसे बड़ी एवं वृहद परियोजना होने के बाद भी भार एवं लम्बाई सम्बन्धी कुछ आयु वर्ग के बच्चों के परिणामों को छोड़ दिया जाए तो

किसी भी आयु वर्ग के पूर्व-विद्यालयीय बच्चे मानवमितिक मानक (Anthropometric standards) को पूरा नहीं करते, जिसका मुख्य कारण बढ़ती महँगाई के अनुरूप ICDS केन्द्रों को पर्याप्त धनराशि की अनुपलब्धता हो सकता है। ICDS कार्यकर्त्रियाँ वर्तमान धनराशि में खाद्य-सामग्री को क्रय कर लेती हैं परन्तु बच्चों को आयु के अनुरूप पर्याप्त मात्रा में गुणवत्तायुक्त आहार उपलब्ध कराने में असमर्थ होती हैं। अधिकांश केन्द्रों पर अलग से ICDS केन्द्र का भवन तथा डिब्बे एवं कन्टेनर की अनुपलब्धता का भी खा़द्य-सामग्री की गुणवत्ता पर विपरीत प्रभाव पड़ता है। अधिकांश केन्द्रों पर परम्परागत ईंधन ही उपयोग में लाया जाता है जिससे खाद्य-सामग्री जैसे-तैसे पक तो जाती है, परन्तु राख एवं धुएँ से खाद्य-सामग्री प्रभावित होती है। इसके लिए गैर-परम्परागत वैकल्पिक ईंधन के साधनों पर बल दिये जाने की आवश्यकता है। समय-समय पर सभी ICDS केन्द्रों के आकस्मिक निरीक्षण को और प्रभावशाली बनाने से पूरक-आहार की उपलब्धता एवं गुणवत्ता को कुछ हद तक बनाये रखा जा सकता है। पूरक आहार का बच्चों पर होने वाले लाभ को ज्ञात करने हेतु पर्याप्त उपकरण/यंत्र उपलब्ध कराये जाने चाहिए जिससे बच्चों को शारीरिक आवश्यकता के अनुरूप खाद्य-सामग्री की मात्रा घटायी या बढ़ायी जा सके। मातृ-समितियों को पुनर्संगठित एवं प्रभावी बनाने की आवश्यकता है जिससे वे इस योजना में रुचि लेकर पारदर्शितापूर्वक कार्य सम्पादित करने में सहयोग प्रदान कर सकें। खाद्य-सामग्री की कालाबाजारी रोकने, बच्चों की संख्या के अनुपात में पोषाहार उपलब्ध कराकर तथा उसे स्वादिष्ट एवं गुणवत्ता को बनाये रखकर बच्चों की पलायन दर को रोका जा सकता है एवं ICDS के प्रति अभिभावकों के विश्वास को बनाये रखा जा सकता है। आँगनबाड़ी कार्यकर्ताओं/कार्यकर्त्रियों एवं उससे जुड़े सरकारी एवं गैर-सरकारी एजेंसियों को अपने निष्पादन-स्तर में सुधार करने की आवश्यकता है जिससे पूर्व-विद्यालयी बच्चों को पर्याप्त गुणवत्तायुक्त पोषाहार मिल सके तथा बच्चे ICDS केन्द्र पर लम्बे समय तक रुककर लाभ प्राप्त कर सकें। व्यक्ति/समुदाय/ग्राम पंचायतों/ऐच्छिक संस्थाओं को भी जागरुक करने की आवश्यकता है जिससे 'बच्चे ही भावी युवा एवं समाज के कर्णधार होते हैं' को सार्थक सिद्ध किया जा सके।

सन्दर्भ

चरक संहिता निदान; 6-7

योजना; जुलाई 2011, 538 योजना भवन, संसद मार्ग नई-दिल्ली-110001

रामचन्द्रन पी.; *पावर्टी न्यूट्रीशियन लिंकेज; रिव्यू आर्टिकल,* इंडियन जे. मेड. 126, अक्टूबर 2007, पीपी 246–261

निदेशालय बाल विकास सेवा एवं पुष्टाहार, उत्तर प्रदेश, लखनऊ, पत्रांक 17271/ बा.वि.परि./277 ज.सू./2009–10, 10 मार्च, 2010.

जिला कार्यक्रम कार्यालय/बाल विकास परियोजना, सीयर, बलिया/सूचना का अधिकार/पत्रांक 69, 2009–10, 15 सितम्बर 2009.

शासन के पत्र सं. 1952/6–02–07/06, दिनांक 03 मई 2007, उत्तर प्रदेश सरकार, साभार–जिला कार्यक्रम कार्यालय बलिया, 12 जून 2009.

कोठारी, सी.आर. (2001); *रिसर्च मैथोडोलॉजी–मैथड एंड टैक्नोलॉजी*, विश्व प्रकाशन, नई दिल्ली–39

सिंह, डी.आर. (2004); *इन्साइक्लोपीडिया डिक्शनरी आफ एजुकेशन*, वाल्यूम–2, नई दिल्ली, 555

घई, एस.पी., गुप्ता पीयूष एंड पॉल वी.के.; *घई इसैनसियल पैडिएट्रिक*, 6 संस्करण, 2006

सिंह, अनीता एंड विनीता; *''हाईट एंड वेट प्रोफाइल आफ प्रे–स्कूल चिल्ड्रन इन वाराणसी डिस्ट्रिक''* इंडियन जनरल आफ कम्यूनिटी साइकोलॉजी, 2009. 5 (1)

हीथर ए. हैन्डरशन, पीटर जे. मार्शल, नाथन ए. फॉक्स एंड केनेथ एच. रूबिन; *''साइको–फिजियोलॉजीकल एंड विहेवियरल इविडेन्स फॉर वेरिंग फार्म्स एंड फंक्शन आफ नॉन सोशियल विहेवियर इन प्रेस्कूलर''* चाइल्ड डवलपमेंट, जनवरी/फरवरी 2004, वाल्यूम 75।

परिप्रेक्ष्य
वर्ष 18, अंक 3, दिसम्बर 2011

शोध टिप्पणी/संवाद

उच्च प्राथमिक स्तर के पाठ्यक्रम में लैंगिक समानता संबंधी परिवर्तन

प्रतीक्षा वर्मा*

प्रत्येक समाज, राज्य और राष्ट्र की अपनी मान्यताएँ, विश्वास, आदर्श, मूल्य और आवश्यकताएँ होती हैं। इनकी पूर्ति के लिए वह शिक्षा का विधान करता है और शिक्षा के उद्देश्य निश्चित करता है। इन उद्देश्यों की प्रापित हेतु जिन विषयों का ज्ञान एवं क्रियाओं का प्रशिक्षण आवश्यक समझा जाता है, उन्हें पाठ्यक्रम में स्थान दिया जाता है। इस प्रकार पाठ्यक्रम शिक्षक व शिक्षार्थी के सामने वह निश्चित लक्ष्य रखता है।

कनिंघम महोदय ने माना है – ''पाठ्यक्रम कलाकार (शिक्षक) के हाथ में एक साधन है, जिससे वह मूल वस्तु (शिक्षार्थी) को अपने आदर्श (उद्देश्य) के अनुसार अपने कलागृह (विद्यालय) में कोई रूप दे सके।''

पाठ्यक्रम ही वह साधन है, जिसमें समस्त शैक्षिक अनुभव सम्मिलित होते हैं, जो बालक की आवश्यकताओं के अनुसार शिक्षा के उद्देश्य को प्राप्त करने में सहायता देते हैं। पाठ्यक्रम सामाजिक-सांस्कृतिक परिस्थितियों से प्रभावित होता है। प्राचीन तथा मध्यकाल में बौद्धिक विषयों का अध्ययन व कला कौशल प्रशिक्षण विद्यालय की परिधि ा में ही सीमित था। 'विद्या के लिए विद्या' के सिद्धान्त को अपनाया गया, किन्तु धीरे-धीरे इस दृष्टिकोण में परिवर्तन होने लगा। नवीन दृष्टिकोण के अनुसार, पाठ्यक्रम व्यापक, लचीला तथा समाज की आवश्यकताओं, बालकों की रुचि एवं योग्यता के अनुसार निर्धारित होना चाहिए। इस प्रकार पाठ्यक्रम ऐसा हो जो बच्चों को यथा ज्ञान

* प्राध्यापिका (बी.एड.) एल.एम.पी.वी. गर्ल्स पी.जी. कॉलेज गोसाईगंज, लखनऊ (उ.प्र.)

और क्रियाओं की ओर आकर्षित करे। जिसे पूरा करने के बाद बच्चे वास्तविक जीवन में सफल हो सकें। पाठ्यविषय समाज का प्रतिबिम्ब होते हैं तथा यह विषय सामग्री समाज को निर्देशित करती है।

यदि पाठ्यक्रम स्त्री-पुरुष लिंगभेद पर आधारित होगा तो समाज का चिन्तन भी विरोधी व भेदभाव पूर्ण होगा। इसी सामाजिक विभेदकारी नीति का परिणाम है गिरता लैंगिक अनुपात। स्त्री-पुरुष लिंगभेद से ही असन्तोषजनक लिंगानुपात का जन्म हुआ है। लिंगानुपात के अधिकांशत: कारण पितृसत्तात्मक रूढ़िवादी सोच को पुष्ट करने वाले हैं। अत: महिलाओं के प्रति समानता व उनकी स्थिति में सुधार हेतु बेसिक शैक्षिक पाठ्यक्रम लैंगिक समानता पर आधारित होना चाहिए।

लैंगिक समानता से अभिप्राय है – भारत में सभी स्त्रियों को पुरुषों के समान सभी क्षेत्रों – राजनैतिक, सामाजिक, आर्थिक, शैक्षिक एवं सांस्कृतिक में समस्त अधिकार व स्वतंत्रता प्रदान की जाएगी। साथ ही स्त्री विकास और प्रोन्नति को सुनिश्चित करने के लिए विधि निर्माण सहित सभी आवश्यक कदम उठाये जाएँगे।

अन्तर्राष्ट्रीय स्तर पर महिलाओं के विरुद्ध होने वाले भेदभाव की समाप्ति की दिशा में सर्वाधिक महत्वपूर्ण पहल उस समय हुई जब 18 दिसम्बर 1979 को संयुक्त राष्ट्र संघ (यू.एन.ओ.) की महासभा ने 'महिलाओं के विरुद्ध सभी प्रकार के भेदभाव की समाप्ति पर अभिसमय' को सर्वसम्मति से स्वीकार किया। इस अभिसमय को 'महिलाओं के लिए अधिकारों का विलेख पत्र' कहा जाता है।

30 अनुच्छेदों वाला यह अभिसमय अन्तर्राष्ट्रीय रूप से स्वीकार सिद्धान्तों एवं सभी जगहों पर महिलाओं को समान अधिकार प्रदान करने के उपायों को सभी देशों द्वारा वैधानिक रूप से स्वीकृति प्राप्त एवं बाध्यतापूर्ण अभिसमयात्मक अभिलेख हैं।

इस अभिसमय में वर्णित कुल 30 अनुच्छेदों में से 16 अनुच्छेदों को भारत सरकार ने अपने यहाँ आर्थिक, सामाजिक, धार्मिक, भाषायी व राजनैतिक स्थितियों के मद्देनजर स्वीकार किया और इसे व्यवहार में कार्यान्वित करने हेतु अनेक संवैधानिक व विधि सम्मत उपाय किये हैं।

भारतीय संविधान में अनुच्छेद 14, अनु. 15 व अनु. 15(3) में राज्य को यह शक्ति प्रदान की गयी है कि वह स्त्रियों व बच्चों के लिए विशेष विधि बना सके। लिंग पर

आधारित विभेदकारी कानून बनाने की शक्ति राज्य को इस अनुच्छेद में इसलिए दी गयी है ताकि स्त्रियाँ मातृत्व रूपी प्राकृतिक दायित्व को निभा सकें तथा सदियों से इन पर हो रहे शारीरिक, मानसिक, आर्थिक व सामाजिक शोषण का सामना कर सके। इसके लिए भारतीय दण्ड संहिता 1860(ए.बी.) व दण्ड प्रक्रिया संहिता (1973) का प्रावधान किया गया है। प्रसव पूर्व परीक्षण तकनीकी (1994) बच्चे पर माँ का अधिकार, विधवा पुत्री गुजारा भत्ता की हकदार, राष्ट्रीय महिला आयोग 1990, बिहार राज्य महिला आयोग, महिला नीति घोषणा मार्च 1999, मानव संसाधन विकास मंत्रालय द्वारा 26 सितम्बर 1996 की अधिसूचना द्वारा स्कूल कॉलेजों व सभी शैक्षिक कार्यों में माँ का नाम शमिल करना होगा।

यह सभी कल्याणकारी कार्य सरकार द्वारा किये जा रहे हैं। परन्तु जब तक समाज के चिन्तन में परिवर्तन नहीं होगा, तब तक महिलाओं को मानता मिलना मुश्किल है। इसके लिए हमारी पाठ्य सामग्री में समयानुसार परिवर्तन होना चाहिए।

90 से पूर्व दशकों में पाठ्यक्रम लैंगिक विभेद पर आधारित था, जिसमें बालिकाओं को घरेलू कार्यों व बालकों को पढ़ने, खेलने आदि से जोड़कर दर्शाते थे। जैसे-

कमला पनघट से पानी भर कर ला।
श्याम बस्ता लेकर स्कूल जा।

सन् 1986 की राष्ट्रीय शिक्षा नीति ने पाठ्यक्रम में लिंगभेद की ओर विद्वानों का ध्यान आकृष्ट किया। इस नीति का सुझाव था – पाठ्यक्रम तथा पुस्तकों में जो लिंगमूल भेद दिखाई देता है उसे समाप्त करना। इस सुझाव के प्रभावी क्रियान्वयन के लिए राष्ट्रीय शैक्षिक अनुसंधान एवं प्रशिक्षण परिषद नई दिल्ली (एन.सी.ई.आर.टी) ने 'स्त्री शिक्षा एकांक' खोला। यह एकांक स्त्री शिक्षा से जुड़े समस्त पक्षों - पाठ्यक्रम, शिक्षण-प्रशिक्षण, अनुसंधान व सर्वेक्षण आदि को लागू व मूल्यांकित करता है। शिक्षा से लिंगभेद संबंधी अवधारणाओं को समाप्त करने के लिए राज्य सरकारों के मानकीकृत पाठ्यक्रमों का विश्लेषण व पुनर्निरीक्षण करता है। राष्ट्रीय शिक्षा नीति के अन्तर्गत स्त्री शिक्षा को उन्नत बनाने के लिए निम्न विचार दिये गये हैं– ''महिलाओं में साक्षरता प्रसार तथा उन रुकावटों को दूर करने के लिए जिनके कारण बालिकायें प्रारम्भिक शिक्षा से वंचित रह जाती हैं।, सर्वोपरि प्राथमिकता दी जाएगी। इस कार्य के लिए विशेष व्यवस्थाएँ की

जाऐंगी, विभिन्न स्तरों पर तकनीकी और व्यावसायिक शिक्षा में महिलाओं की भागीदारी पर विशेष जोर दिया जाएगा। बालक एवं बालिकाओं में किसी प्रकार का भेद-भाव न बरतने की नीति पर पूरा जोर देकर अमल किया जाएगा। ताकि तकनीकी और व्यावसायिक पाठ्यक्रमों में पारम्परिक रवैये के कारण चले आ रहे लिंग मूलक भेद को समाप्त किया जा सके तथा गैर पारम्परिक आधुनिक काम धन्धों में महिलाओं की भागीदारी बढ़ायी जएगी।''

इसके अतिरिक्त एन.पी.ई.आर.सी. में कहा गया है कि समस्त पाठ्यक्रम के साथ हिडेन पाठ्यक्रम (कक्षा शिक्षण संबंधी) में भी लिंगभेद नहीं किया जाना चाहिए।

(एन.सी.एफ.एफ.ई. 2000) ने सुझाव दिया कि बालिका व महिला सशक्तिकरण में बाधित पाठ्यक्रम की शैली व प्रमुख कथन हटा देने चाहिए। भारत में लैंगिक समानता व लैंगिक संवेदनशीलता पर आधारित पाठ्यक्रम की व्यावहारिक रणनीति बने जो बालक-बालिका को बराबर योग्य व संवेदनशील बनाये। दोनों को बिना किसी मामले में विरोधी हुए केयरिंग व शेयरिंग विधि द्वारा विकसित करे।

इस प्रकार शोधकर्त्री ने भी उ.प्र. बेसिक शिक्षा परिषद द्वारा संचालित कक्षा 6 से कक्षा 8 तक की इतिहास व नागरिक शास्त्र तथा मंजरी (हिन्दी भाषा) पाठ्यपुस्तक का लैंगिक समानता व महिला सशक्तीकरण जैसे बिन्दुओं को ध्यान में रखकर अध्ययन किया। अध्ययन के उपरान्त ज्ञात हुआ कि इन पुस्तकों की विषय सामग्री में लैंगिक समानता के अनुसार कई परिवर्तन होने चाहिए। परिवर्तन किस प्रकार के हों इससे संबंधित समस्त निम्नलिखित सुझाव दिये गये हैं–

हिन्दी भाषा संबंधी सुझाव

1. कक्षा 6, कक्षा 7 व कक्षा 8 की भाषा पुस्तक मंजरी में कक्षा 6 में 20 पाठ, कक्षा 7 में 21 अध्याय व कक्षा 8 में 22 पाठ वर्णित हैं। जिनमें से कक्षा 6 में मात्र एक लेखिका महाश्वेता देवी, पाठ का नाम (क्यों, क्यों लड़की)। कक्षा 7 में दो लेखिका आशापूर्णा देवी, पाठ (भविष्य का भय)। लेखिका तेत्सुको कुरोयानागी पाठ (स्कूल मुझे अच्छा लगा)। कक्षा 8 में लेखिका शिवानी, पाठ का नाम (अपराजिता) व महादेवी वर्मा की रचना (सोना) को पाठ्यक्रम में सम्मिलित किया गया है। जो कि लैंगिक समानता के प्रतिकूल है। पुरुष लेखकों के बराबर ही महिला रचनाकारों को

भाषा पाठ्यक्रम में स्थान मिलना चाहिए जिन्होंने प्राचीन हिन्दी भाषा व साहित्य से लेकर आधुनिक हिन्दी भाषा के विकास में कहानी, नाटक, उपन्यास आदि विधाएँ लिखकर साहित्य को समृद्ध बनाया है। जैसे– शशिप्रभा शास्त्री, शिवानी, कृष्णा सोबती, मृणाल पाण्डे, मन्नू भण्डारी, उषा प्रियंवदा, मृदुला गर्ग, चित्रा मुद्गल, मालती जोशी, नासिरा शर्मा, इन्दुबाली, सुधा अरोड़ा, मैत्रेयी पुष्पा, सारा राय, अलका सरावगी आदि।

2. महिला सशक्तिकरण से संबंधित पाठ्यसामग्री का पाठों की संख्या के अनुरूप अभाव है। उदाहरण स्वरूप कक्षा 6 की भाषा पुस्तक मंजरी में 20 पाठ में से मात्र 2 पाठ महिलाओं से संबंधित है। कक्षा 7 की भाषा पुस्तक मंजरी में 21 पाठों में से मात्र एक पाठ ही स्त्री विमर्श से संबंधित है। विद्यार्थियों को वीर, साहसी, परिस्थितियों से संघर्ष करके विजय पाने वाली नारियों के व्यक्तित्व व कृतित्व के बारे में जानकारी देनी चाहिए। जैसे – इंदिरा गांधी, कल्पना चावला, किरण बेदी, भारतीय प्रशासन में पदासीन महिलाओं के संबंध में, खेलों से संबंधित महिलायें, व्यापार जगत में महिलाएं, महिला सामाख्या कार्यक्रमों द्वारा सशक्त हुई महिलायें आदि विषय को पाठ्यक्रम में शामिल करना चाहिए जिससे बालिकाओं में शिक्षित, आत्मनिर्भर बनने की भावना का विकास हो। सहपाठी बालकों में भी स्त्री शक्ति का सम्मान करने की सोच विकसित हो। स्त्री-पुरुष दोनों को समाज में एक साथ ही रहना है। अत: दोनों एक-दूसरे के अस्तित्व का सम्मान करना प्रारम्भ से ही सीखें।

इतिहास व नागरिक शास्त्र संबंधी सुझाव

1. कक्षा 6 की ही पुस्तक इतिहास व नागरिक शास्त्र पुस्तक के पृ.सं. 34 में वर्णित है कि वैदिक काल में स्त्रियों की स्थिति पुरुषों के समान नहीं थी। जबकि उनको पाठ्य सामग्री में लिंग समानता व सशक्तीकरण को ध्यान में रखकर यह लिखना चाहिए था कि वैदिक काल दो भागों में बँटा है – ऋगुवैदिक काल व उत्तर वैदिक काल। ऋगुवैदिक काल में स्त्रियों को पुरुषों के समान अधिकार थे। उनको शिक्षा प्राप्ति व यज्ञ करने का बराबर अधिकार था। उस समय अपाला, घोषा, मैत्रेयी, गार्गी आदि विदुषी नारियाँ हुई हैं। जिनके न तो नाम का उल्लेख किया गया है, न ही चित्र का। उत्तर वैदिक काल में स्त्रियों की सम्माननीय स्थिति में कमी हुई। इस प्रकार वैदिक काल व उत्तर वैदिक काल में अंतर करते हुए स्त्रियों की सामाजिक स्थिति का

वर्णन करना चाहिए।

2. कक्षा 6 की ही पुस्तक में पृ. सं. 89 पर बालक को स्कूल जाते व बालिका को घरेलू कार्य करते चित्र में अंतर एक साथ दिखाया गया है। इसके साथ ही पेज में नीचे मदर टेरेसा का चित्र बना है। समाज में भेदभाव शीर्षक को समझाने के लिए इन दोनों चित्रों को तुलनात्मक रूप में बना होना चाहिए। एक ओर प्राचीन समाज में स्त्री की दशा, दूसरी ओर आधुनिक समाज में स्त्रियाँ।

3. कक्षा 6 की ही पुस्तक में पृ.सं. 95 से 105 तक पंचायत व्यवस्था का वर्णन है, जिसमें ग्राम सभा, क्षेत्र पंचायत व जिला पंचायत के गठन का वर्णन है। इसमें महिला आरक्षण हेतु मात्र इतना लिखा है कि कुछ पद महिला आरक्षित हैं। परन्तु यह स्पष्ट नहीं किया गया है कि उत्तर प्रदेश पंचायती राज में कितने प्रतिशत पद आरक्षित हैं। महिला समानता को दर्शान हेतु यह स्पष्ट लिखा होना चाहिए कि पंचायतों में महिलाओं के लिए (अनुसूचित जाति व जनजाति को मिलाकर) प्रत्यक्ष निर्वाचन द्वारा भरे जाने वाले स्थानों की कुल संख्या के एक तिहाई (33 प्रतिशत) स्थान आरक्षित हैं।

4. कक्षा 6 की ही पुस्तक में पृष्ठ 115 पर जिला न्यायाधीश, बेसिक शिक्षा अधिकारी, जिला विद्यालय निरीक्षक, मु. विकास अधिकारी आदि पदाधिकारियों को समझाने के लिए पुरुषों को ही चित्र में अधिकारी के रूप में प्रस्तुत किया गया है। जबकि महिला समानता के लिए कम से कम दो महिलाओं के चित्र पदाधिकारी के रूप में होने चाहिए।

5. कक्षा 7 की पुस्तक इतिहास और नागरिक जीवन की पृ. सं. 81 से 86 के अन्तर्गत मुगलकालीन समाज व संस्कृति शीर्षक में मुगलकालीन शिक्षा व्यवस्था व उसमें स्त्रियों का योगदान का वर्णन नहीं किया गया है। जबकि इस काल में उच्च कोटि के मकतब और मदरसों की स्थापना की गयी थी। मुगलकालीन शाही महिलओं ने शिक्षा व साहित्य में योगदान दिया – गुलबदन बेगम ने हुमायूँनामा की रचना फारसी भाषा में की। माहम अनगा नामक स्त्री के सहयोग से हुमायूँ ने 'मदरसा-ए-बेगम' की स्थापना की। अकबर की माँ ने पुराने किले में 'खेर-दल-मंजिल' मदरसे की स्थापना करवाई। औरंगजेब की पुत्री जेबुन्निसा ने

दिल्ली में 'बैतूल-उल-उलूम' नामक स्कूल की स्थापना की, जिसमें उच्च व मध्यम दोनों वर्गों के लोग शिक्षा प्राप्त कर सकते थे। इस प्रकार लैंगिक समानता की दृष्टि से चित्रों सहित इनका वर्णन करना श्रेयस्कर होगा।

6. कक्षा 7 की उक्त पुस्तक में पृ.सं. 107-108 में लोकसभा के स्पीकर के संबंध में जानकारी है, परन्तु इसमें वर्तमान लोकसभा स्पीकर का नाम अंकित नहीं है। लैंगिक समानता के दृष्टिकोण से तो लोकसभा अध्यक्ष मीरा कुमार के बारे में चित्र के साथ संक्षिप्त परिचय अवश्य दिया जाना चाहिए क्योंकि वह भारत की पहली महिला लोकसभा स्पीकर हैं।

7. कक्षा 7 की ही उक्त पुस्तक में पृ. सं. 114 व 115 से राष्ट्रपति का गठन व उनके कार्यकाल का वर्णन है, परन्तु वहाँ भी वर्तमान राष्ट्रपति का नाम लिखित नहीं है। वर्तमान राष्ट्रपति चूंकि प्रथम महिला राष्ट्रपति हैं अतएव उनका संक्षिप्त परिचय चित्र के साथ प्रदर्शित करना चाहिए।

8. कक्षा 8 की भाषा पुस्तक तथा इतिहास व नागरिक जीवन पुस्तक में लैंगिक समानता का ध्यान रखा गया है। हिन्दी की पुस्तक में कुल 22 अध्यायों में से महिला विमर्श से संबंधित 7 अध्याय दिये गये हैं। इतिहास व नागरिक जीवन में भी लैंगिक समानता चित्रों व पाठ्य सामग्री द्वारा प्रदर्शित होती है।

अत: कक्षा 6 व कक्षा 7 की हिन्दी भाषा पुस्तक मंजरी तथा इतिहास व नागरिक जीवन पुस्तक में सुझाव के अनुसार यदि संशोधन किये जाएँ तो पाठ्यसामग्री में व्याप्त लैंगिक असमानता को दूर किया जा सकता है, जिससे भारतीय समाज समतामूलक बन सके। स्त्री-पुरुष एक दूसरे के व्यक्तित्व व कृतित्व का सम्मान कर एक दूसरे की प्रगति में सहायक हों, तभी लिंगानुपात भी संतुलित हो सकेगा। जिससे समाज में सामाजिक न्याय व सामाजिक समरसता की स्थापना हो पाएगी।

संदर्भ

एन.पी.ई.आर.सी.; पृ. सं. 44-45।

एन.सी.एफ.एस.ई. 2000; पृ. सं. 16-17।

कुमारी सीमा; *महिला अधिकार और भारतीय प्रावधान,* उपकार प्रकाशन पृ. सं. 4-10।

मंजरी (2009-2010); उ.प्र. बेसिक शिक्षा परिषद कक्षा 6 पृ. सं. 10-104

मंजरी (2009–2010); उ.प्र. बेसिक शिक्षा परिषद कक्षा 7 पृ. सं. 9–101

मंजरी (2009–2010); उ.प्र. बेसिक शिक्षा परिषद कक्षा 8 पृ. सं. 10–103

नेशनल फोकस ग्रुप पोजीशन पेपर (एन.सी.ई.आर.टी.); पृ. सं. 8–25।

सारस्वत मालती; *शिक्षा दर्शन,* एच.एम. पब्लिकेशन पृ. सं. 15, 348।

हमारा इतिहास और नागरिक जीवन, (2009–2010); उ.प्र. बेसिक शिक्षा परिषद, कक्षा 6 पृ. सं. 34, 89, 95–115।

हमारा इतिहास और नागरिक जीवन, (2009–2010); उ.प्र. बेसिक शिक्षा परिषद, कक्षा 7 पृ. सं. 81, 86, 107, 108–115।

हमारा इतिहास और नागरिक जीवन, (2009–2010); उ.प्र. बेसिक शिक्षा परिषद, कक्षा 8 पृ. सं. 10–103।

राष्ट्रीय शिक्षा नीति 1986; चौथा अध्याय।

परिप्रेक्ष्य
वर्ष 18, अंक 3, दिसंबर 2011

शोध टिप्पणी/संवाद

शिक्षक अध्यापकों के मूल्यों का तुलनात्मक अध्ययन

लिंग, क्षेत्र और संवर्ग के संदर्भ में

राकेश राय* और **अनीता राय****

सारांश

प्रस्तुत शोध पत्र में शिक्षक अध्यापक के मूल्यों का तुलनात्मक अध्ययन किया गया। अध्ययन हेतु गाजियाबाद शहर के 170 पुरुष एवं 180 महिला शिक्षक अध्यापकों को प्रतिदर्श के रूप में चुना गया। प्रदत्तों के संग्रह एवं विश्लेषण के आधार पर निष्कर्ष यह इंगित करती है कि पुरुष एवं महिला शिक्षक अध्यापक के मूल्यों में सार्थक अन्तर है। मूल्य विश्लेषण हेतु 'अध्यापक मूल्य सूची' (सिंह एवं अहलुवालिया 1981) के उपकरण का प्रयोग किया गया। प्रपत्र में मूल्यों को कहीं उच्च एवं कहीं निम्न पाया गया। शिक्षक अध्यापक के मूल्यों में सार्थक अन्तर उसके लिंग, क्षेत्र तथा संवर्ग के संदर्भ में पाया गया। सौन्दर्यात्मक मूल्य के संबंध में महिला एवं कला संवर्ग के शिक्षक अध्यापक का मूल्य पुरुष एवं विज्ञान संवर्ग शिक्षक अध्यापक से उच्च पाया गया। दूसरी तरफ धार्मिक मूल्यों के संदर्भ में, कला संवर्ग पुरुष एवं महिला शिक्षक अध्यापक का मूल्य उच्च पाया गया। केवल सौन्दर्यात्मक मूल्य के लिए ग्रामीण एवं शहरी के बीच से समान शिक्षक अध्यापक का मूल्य समान पाया गया।

शिक्षा समाज के विकास का प्रबल साधन है, समाज सामाजिक संबंधों का जाल है– मैकाइवर के इस कथन से स्पष्ट है कि सामाजिक संबंध का अर्थ है समाज की संरचना का अन्तर्निहित संबंध मानना। बालक की प्रथम पाठशाला परिवार है जो बालक का

* (वरिष्ठ प्रवक्ता), शिक्षा विभाग, एस.आर.एम. विश्वविद्यालय, मोदीनगर, गाजियाबाद (उ.प्र.)
* (प्रवक्ता), शिक्षा विभाग, एस.आर.एम. विश्वविद्यालय, मोदीनगर, गाजियाबाद (उ.प्र.)

मानसिक, शारीरिक तथा सामाजिक विकास करता है। अत: शिक्षा एक उद्देश्यपूर्ण प्रक्रिया है। शिक्षा के उद्देश्य देश, काल और परिस्थितियों के अनुसार परिवर्तित होते रहे हैं जो समाज की परिवर्तित आवश्यकताओं के पूरक होते हैं। वस्तुत: उच्चतम विकल्प के चुनाव की प्रक्रिया ही मूल्य प्रक्रिया है। मूल्यों के विकास में माता-पिता, शिक्षकों, समाज सुधारकों तथा साहित्यकारों की भूमिका को नकारा नहीं जा सकता, परन्तु शिक्षक की भूमिका उच्च मानी जाती है। भारतीय समाज में शिक्षक का स्थान सर्वोच्च है। यह कबीर ने भी प्रमाणित कर दिया।

आज के बदलते परिप्रेक्ष्य में समाज में जहाँ अधिक तीव्र गति से परिवर्तन हो रहे हैं तथा उत्तम सांस्कृतिक विरासत के संरक्षण व हस्तान्तरण पर ध्यान दिया जा रहा है, वहीं दूसरी ओर भौतिकता के इस युग में हम अपने आदर्शों तथा मूल्यों को भूलते जा रहे हैं। भौतिक सभ्यता ने हमारे समाज एवं संस्कृति को सनातन मूल्यों एवं आदर्शों को सही मार्ग से दिग्भ्रमित करने में कोई प्रयास अधूरा नहीं छोड़ा है। ऐसी स्थिति में प्रयास करना चाहिए कि छात्रों में मूल्यों का विकास किया जा सके, क्योंकि ये छात्र ही कल के भविष्य हैं। अत: भविष्य का निर्माण, भारत के शिक्षक अपने कक्षा की प्रयोगशाला में कर सकते हैं। इसलिए मूल्यों को अपने सही पाठ शिक्षक अध्यापक को पढ़ाना चाहिए क्योंकि शिक्षक ही छात्रों के बीच आदर्श प्रतिमान के रूप में प्रस्तुत हो सकता है।

इस समस्या का चुनाव करने से पहले कुछ साहित्य का अध्ययन किया गया, जैसे- चौधरी (1776), वर्मा (1978), गोस्वामी (1979), बाजपेई (1999), सक्सेना एवं सिंह (2001) आदि के परिणाम किसी न किसी रूप में मूल्यों के उच्च तथा निम्न से संबंधित हैं। परन्तु शिक्षक अध्यापक के मूल्यों के संदर्भ में व्यापक अध्ययन नहीं किया गया। इसलिए शिक्षकों में मूल्यों के प्रति आस्था जानने एवं कैसे तथा किस तरह के मूल्य का विकास करना चाहिए, इन्हीं तथ्यों को ध्यान में रखते हुए शोधकर्ता ने अपने अध्ययन की समस्या - ''लिंग क्षेत्र एवं संवर्ग के संदर्भ में शिक्षक अध्यापक के मूल्यों का तुलनात्मक अध्ययन'' प्रकरण का चयन किया है।

समस्या कथन- ''शिक्षक अध्यापकों के मूल्यों का तुलनात्मक अध्ययन: लिंग, क्षेत्र एवं संवर्ग के संदर्भ में''।

अध्ययन का उद्देश्य

प्रस्तुत अध्ययन के निम्नांकित प्रमुख उद्देश्य हैं-

(1) पुरुष एवं महिला शिक्षक अध्यापकों के सौन्दर्यात्मक धार्मिक मूल्यों का अध्ययन करना।

(2) ग्रामीण एवं शहरी शिक्षक अध्यापकों के सौन्दर्यात्मक धार्मिक मूल्यों की जानकारी प्राप्त करना।

(3) कला एवं विज्ञान वर्ग के शिक्षक अध्यापक के सौन्दर्यात्मक धार्मिक मूल्यों का वर्णन करना।

अध्ययन की परिकल्पना

प्रस्तुत अध्ययन में अधोलिखित शून्य परिकल्पनाओं का परीक्षण किया गया–

(1) पुरुष एवं महिला शिक्षक अध्यापकों के सौन्दर्यात्मक मूल्यों में सार्थक अन्तर नहीं है।

(2) पुरुष एवं महिला शिक्षक अध्यापकों के धार्मिक मूल्यों में सार्थक अन्तर नहीं है।

(3) ग्रामीण एवं शहरी शिक्षक अध्यापकों के सौन्दर्यात्मक मूल्यों में सार्थक अन्तर नहीं है।

(4) ग्रामीण एवं शहरी शिक्षक अध्यापकों के धार्मिक मूल्यों में सार्थक अन्तर नहीं है।

(5) कला एवं विज्ञान संवर्ग शिक्षक अध्यापकों के सौन्दर्यात्मक मूल्यों में सार्थक अन्तर नहीं है।

(6) कला एवं विज्ञान संवर्ग शिक्षक अध्यापकों के धार्मिक मूल्यों में सार्थक अन्तर नहीं है।

प्रत्ययों की व्याख्या – आलपोर्त– व्यक्ति की रुचि का सापेक्षित महत्व अथवा –

(1) मूल्य – मूल्य को आचार्य सौन्दर्य, कुशलता महत्व का मापदण्ड दिया जाता है। मूल्य किसी वस्तु या स्थिति का वह गुण है जो समालोचना व वरीयता को प्रकट करती है। यह एक आदर्श या इच्छा है जिसे पूरा करने के लिए व्यक्ति जीता है तथा आजीवन प्रयास करता है।

आत्मपोर्त के अनुसार – ''व्यक्ति की रुचि का सापेक्षिक महत्व अथवा व्यक्तित्व की प्रबल इच्छा ही मूल्य कहलाता है।''

(2) सौन्दर्यात्मक मूल्य – सुन्दरता, कला, संगीत, योग आदि ये मूल्य सौन्दर्यात्मक मूल्य के अन्तर्गत आते हैं। अर्थात सौन्दर्यात्मक मूल्यों का संबंध मूल्य मीमांसा से

है, जो मूल्यों की सामंजस्य, प्रेम, कला, संगीत, नृत्य पर बल देती है।

(3) धार्मिक मूल्य – यह मूल्य तत्वमीमांसा पर अधारित है। इसके अन्तर्गत आस्था, उपासना, स्वीकृति, सहयोग, विश्वास, ईश्वर के प्रति भय तथा आस्था आदि धार्मिक मूल्य हैं जो प्रव्ययात्मक हैं।

(4) शिक्षक अध्यापक – शिक्षक अध्यापक वे अध्यापक हैं जो शिक्षक प्रशिक्षण विद्यालय में शिक्षण कार्य करते है अर्थात बी.एड. कालेज में प्रशिक्षण कार्य करने वाले अध्यापक ही शिक्षक अध्यापक कहलाते हैं।

(5) लिंग – जन्म के आधार पर कार्य करने वाले पुरुष एवं महिला दो प्रकार लिंग के होते हैं। मानव उत्पादन की दृष्टि से दो समूह में बाँटा है– एक पुरुष तथा दूसरी महिला।

(6) क्षेत्र – आवासीय स्थिति के आधार को क्षेत्र कहते हैं। यह दो रूप में होते है- ग्रामीण तथा शहरी क्षेत्र।

(7) संवर्ग – विषय के आधार पर वर्गीकृत पाव्यवुम संवर्ग है। सामाजिक विषय पढ़ने वाले - कला संवर्ग तथा विज्ञान विषय को पढ़ने वाले विज्ञान संवर्ग के अन्तर्गत आते हैं।

शोध अभिकल्प

प्रस्तुत अध्ययन हेतु सर्वेक्षण प्रणाली का चयन, शिक्षक अध्यापक के मूल्यों के अध्ययन के लिए किया गया है, क्योंकि सर्वेक्षण के आधार पर मूल्यों का अध्ययन अपेक्षित है। इस तरह के शोध हेतु सर्वेक्षण विधि शोध अभिकल्प उपयुक्त है।

जनसंख्या एवं न्यायदर्श

अध्ययन में शोधकर्ता गाजियबााद के 20 बी.एड. महाविद्यालय एवं मेरठ के 20 महाविद्यालय के शिक्षक अध्यापकों का चयन किया गया।

इस अध्ययन में गाजियाबाद एवं मेरठ शहर के शिक्षक अध्यापक को, स्तरीकृत यादृच्छिक विधि, न्यायदर्श विधि से प्रयोज्यों के रूप में चयनित किया गया है। न्यायदर्श की संख्या 550 है जिसमें पुरुष (170) तथा महिला (180) है।

उपकरण का प्रयोग

प्रस्तुत अध्ययन में मूल्यों के मापन के लिए सिंह एवं अहलुवालिया राय विकसित

मापन अध्यापक मूल्य सूची (1481) का प्रयोग किया गया है जो शिक्षक के मूल्यों को मापने के लिए बनाया गया है।

सांख्यिकी तकनीकी का प्रयोग

प्रस्तुत अध्ययन में प्रदत्तों के विश्लेषण हेतु शोधकर्ता से मध्यमान, प्रामाणिक विचलन, क्रान्तिक अनुपात (टी. मूल्य) और एनोवा का प्रयोग किया है।

तालिका–1

पुरुष एवं महिला शिक्षक अध्यापकों के सौन्दर्यात्मक मूल्य के प्राप्तांकों की तुलना

लिंग	संख्या	मध्यमान	प्रामाणिक विचलन	क्रान्तिक अनुपात
पुरुष	170	30.58	4.01	2.00**
महिला	180	31.42	4.08	

**सार्थक अन्तर है।

तालिका–2

पुरुष एवं महिला शिक्षक अध्यापकों के धार्मिक मूल्य के प्राप्तांकों की तुलना

लिंग	संख्या	मध्यमान	प्रामाणिक विचलन	क्रान्तिक अनुपात
पुरुष	170	30.79	3.74	5.27**
महिला	180	33.11	4.65	

**सार्थक अन्तर है।

विश्लेषण व व्याख्या

तालिका–1 को दृष्टिगत करने से विदित होता है कि पुरुष शिक्षक अध्यापकों की अपेक्षा महिला शिक्षक अध्यापकों की सौन्दर्यात्मक मूल्य के प्राप्तांक उच्च हैं तथा प्राप्त क्रान्तिक अनुपात (टी. मूल्य) का मान (2.00) है जो .05 विश्वास स्तर पर सार्थक है। अतः प्रस्तुत अध्ययन की परिकल्पना नं.–1 पुरुष एवं महिला शिक्षक अध्यापकों के सौन्दर्यात्मक मूल्यों में सार्थक अन्तर नही हैं, अस्वीकृत होती है। अर्थात महिला शिक्षक का सौन्दर्यात्मक मूल्य पुरुष की अपेक्षा अधिक होती है।

कारण कला, संगीत आदि के प्रति महिला का आकर्षण ज्यादा होता है। प्रस्तुत परिणाम रेड्डी (1980), वाजपेई (1977), जैन (1982) के अध्ययन से प्रमाणित होती है। इन्होंने भी महिला शिक्षक का मूल्य पुरुष से उच्च माना था।

तालिका–2 का अवलोकन करने से ज्ञात होता है कि महिला शिक्षक अध्यापक का धार्मिक मूल्य पुरुष अध्यापक के प्राप्तांक से उच्च है, जिसका क्रान्तिक अनुपात (टी. मूल्य) का मान (5.27) है जो प्राप्त टी. मूल्य 0.01 तथा 0.05 दोनों विश्वास स्तर पर सार्थक है। अत: परिकल्पना संख्या–2 ''पुरुष एवं महिला शिक्षक अध्यापक के धार्मिक मूल्यों में कोई सार्थक अन्तर नहीं है'' अस्वीकृत होती है। अर्थात् धार्मिक के क्षेत्र में महिलाओं का झुकाव ज्यादा होता है। इसलिए परिणाम महिला के पक्ष में आया है। परिणाम की विवेचना करते हुए कहा जा सकता है कि महिला शिक्षक अध्यापिकाओं की धार्मिक प्रवृत्ति पुरुष शिक्षक अध्यापक की प्रवृत्ति से अत्यधिक होती है।

तालिका–3

ग्रामीण एवं शहरी शिक्षक अध्यापक के सौन्दर्यात्मक मूल्यों के प्राप्तांकों की तुलना

क्षेत्र	संख्या	मध्यमान	प्रामाणिक विचलन	क्रान्तिक अनुपात
ग्रामीण	160	30.78	3.98	.976**
शहरी	190	31.20	4.13	

**सार्थक अन्तर नहीं है।

तालिका–4

ग्रामीण एवं शहरी शिक्षक अध्यापक के धार्मिक मूल्यों के प्राप्तांकों की तुलना

क्षेत्र	संख्या	मध्यमान	प्रामाणिक विचलन	क्रान्तिक अनुपात
ग्रामीण	160	34.01	3.68	2.39**
शहरी	190	32.96	4.61	

**सार्थक अन्तर है।

उपर्युक्त तालिका-3 से इंगित होती है कि ग्रामीण व शहरी शिक्षक अध्यापक में शहरी अध्यापक के प्राप्तांक कुछ उच्च हैं परन्तु दोनों समूहों के मध्यमान प्राप्तांक में सार्थक अन्तर नहीं है। अत: परिकल्पना-3 ''ग्रामीण एवं शहरी शिक्षक अध्यापकों के सौन्दर्यात्मक मूल्यों में कोई अन्तर नही है।'' स्वीकृत होती है क्योंकि इसका क्रान्तिक अनुपात टी. मूल्य (.976) है जो दोनों विश्वास स्तर (.01 और .05) पर सार्थक अन्तर नहीं है। परिणाम से ज्ञात होता है सौन्दर्यात्मक मूल्य के संदर्भ में ग्रामीण तथा शहरी दोनों क्षेत्रों के शिक्षक अध्यापक समान मूल्य रखते हैं अर्थात दोनों में सार्थक नहीं है। सौन्दर्य, मुक्ति तथा योग भाव समान हैं।

तालिका-4 को अध्ययन करने के पश्चात परिणाम विदित होता है कि धार्मिक मूल्य ग्रामीण शिक्षक अध्यापक का उच्च है अपेक्षा शहरी शिक्षक अध्यापक के। अत: प्रस्तुत अध्ययन की परिकल्पना नं.-4 ''ग्रामीण एवं शहरी शिक्षक अध्यापक के धार्मिक मूल्यों में सार्थक अन्तर नही है'' अस्वीकृत होती है क्योंकि इसका क्रान्तिक अनुपात (टी. मूल्य) 2.39 है जो .05 विश्वास स्तर पर सार्थक है।

अर्थात ग्रामीण शिक्षक अध्यापक की धार्मिक आस्था शहरी शिक्षक से उच्च होती है। कारण – परम्परा, संस्कृति, धर्म के प्रति ग्रामीण अंचल में लोगों की ज्यादा आस्था होती है। अत: धार्मिक मूल्य की वरीयता ग्रामीण की अपेक्षा शहरी शिक्षकों को देनी चाहिए।

तालिका-5

कला एवं विज्ञान संवर्ग शिक्षक अध्यापक के सौन्दर्यात्मक मूल्यों के प्राप्ताकों की तुलना

संवर्ग	संख्या	मध्यमान	प्रामाणिक विचलन	क्रान्तिक अनुपात
कला	185	35.14	3.82	5.19**
विज्ञान	165	32.87	4.32	

**सार्थक अन्तर है।

तालिका-5 को दृष्टिगत करने से ज्ञात होता है कि परिकल्पना नं.-5 ''कला एवं विज्ञान संवर्ग संबंधी शिक्षक अध्यापकों के सौन्दर्यात्मक मूल्यों में सार्थक अन्तर नहीं

है।'' अस्वीकृत होती है क्योंकि इसका क्रान्तिक अनुपात 5.19 है। जो .01 तथा .05 दोनों विश्वास स्तर पर सार्थक है अर्थात परिणाम यह है कि कला संवर्ग के शिक्षक का सौन्दर्यात्मक मूल्य विज्ञान संवर्ग के शिक्षक से उच्च है। कला संवर्ग के शिक्षक की आस्था, कला, योग, संस्कृति तथा नृत्य में ज्यादा होती है, इसलिए यह परिणाम कला संवर्ग शिक्षक अध्यापक के पक्ष में विद्यमान है।

तालिका-6

कला एवं विज्ञान संवर्ग शिक्षक अध्यापक के धार्मिक मूल्यों के प्राप्ताकों की तुलना

संकाय	संख्या	मध्यमान	प्रामाणिक विचलन	क्रान्तिक अनुपात
कला	185	35.48	4.11	4.6**
विज्ञान	165	33.39	4.40	

**सार्थक अन्तर है।

तालिका-6 का अवलोकन करने के बाद विदित होता है कला वर्ग के शिक्षक अध्यापक के धार्मिक मूल्य ज्यादा प्रबल हैं, अपेक्षा विज्ञान संवर्ग के शिक्षक की तुलना में प्रस्तुत सारणी में परिकल्पना नं.-6 ''कला एवं विज्ञान संवर्ग के शिक्षक अध्यापक के धार्मिक मूल्यों में कोई सार्थक अन्तर नही है'' अस्वीकृत होती है।

अत: ज्ञात क्रान्तिक अनुपात (टी. मूल्य) 4.6 है जो .01 तथा .05 विश्वास स्तर पर सार्थक है अर्थात धार्मिक क्षेत्र में कला संवर्ग के शिक्षक अध्यापक की धार्मिक प्रवृत्ति उच्च पायी गयी। इसका अर्थ यह है कि कला संवर्ग के विषयों में संस्कार, आस्था, नीति, संस्कृति आदि बातों का अध्ययन किया जाता है, इसलिए इस विषय वर्ग में अध्यापक को धार्मिक मूल्य प्राप्त हैं।

निष्कर्ष

उपर्युक्त विवरण से निष्कर्ष रूप से कहा जा सकता है कि इस अध्ययन में केवल सारणी-3 की परिकल्पना ''ग्रामीण तथा शहरी शिक्षक अध्यापकों के सौन्दर्यात्मक मूल्य में कोई अन्तर नही है'' स्वीकृत होती है। अर्थात दोनों पक्ष का मूल्य समान है।

परन्तु शेष परिकल्पनाएँ अस्वीकृत पायी गयी हैं। अस्वीकृत परिकल्पनाओं का निष्कर्ष निम्न है–

(1) पुरुष एवं महिला शिक्षक अध्यापक के सौन्दर्यात्मक मूल्य में सार्थक अन्तर पाया गया, जिसमें महिला का सौन्दर्यात्मक मूल्य उच्च है। उसे अधिक सौन्दर्यात्मक का प्रतीक माना गया।

(2) धार्मिक मूल्य के संदर्भ में महिला शिक्षक अध्यापक का स्थान पुरुष शिक्षक अध्यापक से उच्च पाया गया।

(3) धार्मिक मूल्य के संबंध में ग्रामीण शिक्षक का स्थान शहरी शिक्षक अध्यापक से उच्च पया गया है।

(4) कला संवर्ग के शिक्षक अध्यापक का सौन्दर्यात्मक पक्ष विज्ञान संवर्ग के शिक्षक अध्यापक से उच्च पाया गया।

(5) कला संवर्ग के शिक्षक अध्यापक ने विज्ञान संवर्ग के शिक्षक अध्यापक से धार्मिक मूल्य के क्षेत्र में उच्च स्थान प्राप्त किया।

सुझाव

अध्ययन के निष्कर्ष यह इंगित करते हैं कि शिक्षकों का आपसी मूल्य प्रत्येक पक्ष के आधार पर उच्च एवं निम्न है। इसके लिए निम्न सुझाव है–

(1) पुरुष शिक्षक अध्यापक के अन्तर्गत सौन्दर्यात्मक तथा धार्मिक प्रवृत्ति का विकास किया जाय। पुरुष शिक्षक के अध्यापक को संगीत, कला, संस्कृति एवं धर्म के पाठ्यक्रम के प्रति रुचि उत्पन्न किया जाना चाहिए जिससे उनके अन्तर्गत सौन्दर्यात्मक तथा धार्मिक मूल्यों का विकास हो सके।

(2) ग्रामीण शिक्षकों की अपेक्षा शहरी शिक्षकों के अन्तर्गत धार्मिक मूल्यों की कमी है। अत: शहरी शिक्षक अध्यापकों के अन्तर्गत धार्मिक मूल्यों का विकास किया जाना चाहिए।

(3) विज्ञान संवर्ग के शिक्षक अध्यापक के सौन्दर्यात्मक एवं धार्मिक पक्ष दोनों निम्न पाया गया, अपेक्षा कला संवर्ग के शिक्षकों के तुलना में। अत: विज्ञान संवर्ग के शिक्षक अध्यापकों को कला व धर्म के प्रभावों का अध्ययन कराना चाहिए।

शैक्षिक उपयोगिता

शोधकर्ता के अध्ययन का समाज में काफी महत्व है, जिसमें निम्न शैक्षिक उपयोगिता का वर्णन किया गया है–

(1) समाज को सभ्य सुसंगत बनाने में सहायक।

(2) मानवीय मूल्यों का विकास करने में।

(3) बालक के अन्दर शारीरिक, आत्मिक एवं मानसिक शक्ति विकास करने में।

(4) शिक्षक के संवेगों तथा मूल प्रवृत्तियों के विकास में सहायक ।

(5) शिक्षक के ज्ञान सद्भावना, व्यक्तित्व का विकास करने में।

(6) शिक्षक अध्यापकों के सर्वांगीण विकास में सहायक।

परिप्रेक्ष्य
वर्ष 18, अंक 3, दिसम्बर 2011

चिंतक/चिंतन

शंकराचार्य का शिक्षा दर्शन

सुमित्रा सिंह

प्रस्तावना

जीवन के सभी सिद्धान्तों का निर्धारण दर्शन के माध्यम से प्रस्तुत किया जाता है तथा सिद्धान्तों का व्यावहारिक प्रयोग शिक्षा द्वारा सम्पन्न होता है। अत: दर्शन एवं शिक्षा का सम्बन्ध अन्योन्याश्रित है। मानव का स्वार्थी स्वभाव तथा पाश्चात्य सभ्यता-संस्कृति के अत्यधिक प्रभाव के कारण शिक्षा-दर्शन सम्बन्ध नष्ट होता प्रतीत हो रहा है। पाश्चात्य पृष्ठभूमि पर आधारित मान्यताएं जहाँ एक ओर हमारी प्राचीन सभ्यता एवं संस्कृति को नष्ट करने पर तुली हुई हैं, वहीं दूसरी ओर समस्त मानव समाज अनिश्चित लक्ष्य के कारण अशान्त है। परिणामत: हमारी सम्पूर्ण व्यवस्था उन घिसी-पिटी मान्यताओं द्वारा संचालित हो रही हैं जो युग सापेक्ष न होकर व्यक्ति की प्रगतिशीलता में बाधक सिद्ध हो रही हैं। आज समाज का प्रत्येक वर्ग एक तरफ जहाँ आध्यात्मिक चिन्तन से उत्पन्न संस्कारों से जुड़ा है, वहीं दूसरी ओर वैज्ञानिक खोजों के आधार पर उत्पन्न भौतिकता की ओर आकृष्ट हो रहा है। फलत: देश में मौलिकता का पतन हो रहा है, सभ्यता एवं संस्कृति का ह्रास हो रहा है, मानवीय चिन्तन में भौतिकता का आधिक्य हो गया है, मानवीय मूल्यों का हनन हो रहा है। ऐसी स्थिति में आज समस्या यह है कि राष्ट्रीय शिक्षा प्रयासों की स्थापना किस तरह की जाए?

यद्यपि मानव अनेक वैज्ञानिक सिद्धान्तों द्वारा असम्भव कार्य को भी सम्भव बनाने में समर्थ हो गया है, तथापि जीवन शैली में जटिलताएं और क्लिष्टताएं बढ़ती जा रही हैं। मानव अपने स्वार्थपरता के वशीभूत होकर अपने प्राचीन ऋषियों-महाऋषियों द्वारा

* शिक्षा विभाग, दीनदयाल उपाध्याय गोरखपुर विश्वविद्यालय, गोरखपुर, उत्तर प्रदेश

दिये गये ज्ञान एवं नैतिक मूल्यों का अनुसरण करने में असमर्थ है। समाज में प्राचीन समय से स्थापित जो परम्परागत उचित-अनुचित की कसौटियाँ हैं, मानव में निहित स्वार्थ के अनुसार परिवर्तित हो रही हैं। फलतः सामाजिक व्यवस्थाएँ बाधित हो रही हैं। सभी सामाजिक इकाइयों का सन्तुलन अस्थिर सा प्रतीत हो रहा है। दर्शनविहीन शिक्षा अब वैज्ञानिक शिंकजों में कैद होकर रह गयी हैं जिसका लक्ष्य मात्र पुस्तकों के माध्यम से शाब्दिक ज्ञान प्राप्त कर उपाधि धारण करना रह गया है और जीवन का लक्ष्य किसी तरह जीवन यापन करना।

भारत के इतिहास ने कई मोड़ लिये, उसके मार्ग में कई पड़ाव आए, फलतः विभिन्न कालों में जीवन दृष्टि की वैभिन्यता ने शिक्षा को प्रभावित किया। आजादी के बाद भी शैक्षिक संदर्भ में सुधार हेतु विभिन्न आयोगों का गठन हुआ, किन्तु आज भी हमारे देश में कोई सुसंगठित शिक्षा प्रणाली नहीं है, जो राष्ट्र के भावी निर्माताओं का अपनी राष्ट्रीय संस्कृति के संरक्षण, संवर्धन एवं विकास के लिए तैयार करे। भारतीय समाज में मूल्य के ह्रास का कारण शिक्षा का गिरता स्तर है। जबकि शिक्षा व्यवस्था का प्रमुख कर्तव्य उन प्रथागत विधियों तथा क्षमताओं के ज्ञान को सम्प्रेषित करना है, जिसकी समाज को दीर्घ जीवन एवं प्रगति के लिए आवश्यकता है। ज्ञान एवं क्षमताएँ प्रदान करने के साथ-साथ शिक्षा नैतिक, सामाजिक और सांस्कृतिक महत्वों को भी सम्प्रेषित करती है। शिक्षा का उद्देश्य व्यक्ति को जीवन के लिए इस प्रकार तैयार करना है जिससे मानव हित तथा समाज हित में न्यूनतम संघर्ष हो, और जो शिक्षा मानव के व्यक्तित्व का सर्वांगीण विकास करती है और उसे निश्चित रूप से विवेचन की शक्ति प्रदान करती है। ऐसी शिक्षा व्यवस्था मस्तिष्क में उन रूढ़िगत तथा अनुदार विचारों की उत्पत्ति नहीं होने देती है, जो सामाजिक, राजनीतिक तथा चारित्रिक क्षेत्रों में नवीन धारणाओं को अंगीकार करने में संकोच करते हैं।

अनेक उच्चकोटि के दार्शनिकों की भाँति आचार्य शंकर ने भी आध्यात्मिक पक्ष और व्यवहारिक पक्ष के अतिरिक्त शैक्षिक संदर्भ में अपने मौलिक विचार दिये जिनका यदि वर्तमान शिक्षा प्रणाली में अनुपालन किया जाए तो भारतीय शिक्षा को एक नयी व्यवस्था व दिशा-निर्देश प्राप्त हो सकता है। शंकर का शिक्षा दर्शन चिन्तन के भारतीयकरण, राष्ट्रीयकरण एवं पुनर्निर्माण की दृष्टि से व्यावहारिक एवं प्रासंगिक है।

आचार्य श्री शंकर ने विद्या एवं बोध दोनों की व्याख्या करते हुए कहा है : ''विद्यादि का ब्रह्मातिप्रदा या बोधो, दि कोयस्तु विमुक्ति हेतु।''

अर्थात् विद्या ब्रह्मगति प्रदायिनी होती है, आत्मज्ञान प्रदान करती है, बोध से विमुक्ति प्राप्त होती है। इससे मानव को सम्यक दृष्टि एवं आत्मानुभूति मिलती है। विद्या बोध के अधिक समीप है।

भारतीय वाङ्मय में विद्या के अपरा और परा दो भेद मिलते हैं। अपरा विद्या जो लौकिक जगत् से सम्बद्ध है। परा विद्या ब्रह्म विद्या है, जो अध्यात्म जगत् सम्बन्धी ज्ञान है। यह मानवात्मा का विकास करती है, उसके ज्ञान चक्षु का उन्मेष करती है। इससे मानव में सत्यासत्य विवेक प्रदायिनी बुद्धि विकसित होती है। उपनिषदों के अनुसार ज्ञान ही शक्ति है, ज्ञान विहीन मनुष्य दुर्बल है।

महर्षि नारद सर्वशास्त्र के निष्णात महापंडित थे। उन्हें अनेक कलाओं, विद्याओं आदि में दक्षता प्राप्त थी, फिर भी असन्तुष्ट थे और अपनी इस चिन्तनीय दशा का वर्णन उन्होंने ज्ञान शिरोमणि महात्मा श्री सनतकुमार से इस प्रकार किया ''हे महात्मन्! मैंने ऋग्वेद, यजुर्वेद, सामवेद, अथर्ववेद, इतिहास, पुराण, व्याकरण शास्त्र, श्रुतिविद्या, कल्पविद्या, देवविद्या, ब्रह्मविद्या अनेक विद्याएँ प्राप्त किया, किन्तु आत्म ज्ञान अब तक नहीं पाया। मैं दु:खों से घिरा हुआ हूँ, उद्धार कीजिए।'' नारद की यह स्थिति सम्पूर्ण मानव की स्थिति है। नारद के प्रश्नों का ऊत्तर जो सनत कुमार ने दिया वह आचार्य के दृष्टिकोण से गम्भीर है, विचारणीय है एवं अनुपालनीय है। वे कहते हैं– नारद! आपने अब तक जो कुछ पढ़ा वह सब केवल शब्द ज्ञान है, परम सत्य का ज्ञान आत्मज्ञान नहीं है।''

शंकराचार्य ने प्रत्येक दार्शनिक प्रत्यय का अध्ययन दो रूपों में किया है - व्यावहारिक या लौकिक एवं परमार्थिक या पारलौकिक। उनका मत है कि एकमात्र सत्य आत्मा ही है, वे ईश्वर, जीव एवं जगत् तीनों को मानते हैं। ईश्वर और ब्रह्म से भेद किया है। ईश्वर को केवल व्यावहारिक दृष्टिकोण से सत्ता दी है। शंकराचार्य के वेदान्त दर्शन और तत्सम्बन्धी शिक्षा विषयक विचारों का विवेचन करने पर उनके दर्शन के दो मूल सिद्धान्त परिलक्षित होते हैं - पहला ब्रह्म सत्यं जगत्मिथ्या (ब्रह्म ही सत्य है जगत् मिथ्या), दूसरा ब्रह्मा के दो स्वरूप – सगुण और निर्गुण है। माया विशिष्ट ब्रह्म सगुण हैं और यही ईश्वर है। निर्गुण ब्रह्म सगुण हैं और यही ईश्वर है। निर्गुण ब्रह्म परम सत्य, माया रहित, व्यापक सर्वश्रेष्ठ, अखण्ड और सच्चिदानन्द स्वरूप है। यही उनके दर्शन का आधारभूत विचार है। उनके दर्शन में सम्पूर्ण शिक्षा का सम्बन्ध ब्रह्मज्ञान की प्राप्ति

से है। यद्यपि यह बात अटपटी अवश्य लगती है कि जिन वस्तुओं को जुटाने में हम अपना सब कुछ अर्पित कर देते हैं, जिन्हें हम किसी भी आध्यात्मिक सत्य से अधिक सत्य, मूल्यवान, उपयोगी और आवश्यक मानते हैं, उन विषयों के प्रति केवल एक आत्मतत्व का ज्ञान हो जाने पर हमारी सारी दृष्टि ही बदल जाती है। ऐसा नहीं है कि आत्म ज्ञान प्राप्त हो जाने के बाद जगत् की सारी वस्तुएँ समाप्त हो जाती हैं और हमारा सम्पूर्ण लोक व्यवहार बन्द हो जाता है, बल्कि आत्म ज्ञान के बाद भी वे वस्तुएँ उसी तरह रहती हैं, केवल वस्तुओं के प्रति हमारा दृष्टिकोण बदल जाता है, आत्म चिन्तन सर्वप्रमुख बन जाता है तथा सम्पूर्ण लोक व्यवहार, व्यवहार मात्र रह जाता है। यही गीता का कर्मयोग भी है। गीता यह नहीं कहती कि कर्म ही बन्द कर दो बल्कि यह कहती है कि कर्म को मात्र कर्त्तव्य मानकर करो, उससे किसी प्रकार की आसक्ति और फल की कामना मत रखो।

आचार्य के अनुसार मनुष्य अज्ञानता के कारण ही वास्तविक ब्रह्म की स्ाा को न देखकर उसके विकृत रूप को देखता है जबकि शिक्षा का लक्ष्य ऐसे ज्ञान से है जो मानव को इस प्रकार प्रेरित करे कि वह अपनी सीमित दृष्टि से ऊपर उठकर व्यापक दृष्टि का अनुसरण करते हुए ब्रह्म के वास्तविक रूप को समझने योग्य बन सके, ब्रह्म साक्षात्कार कर मोक्ष प्राप्ति कर सके, जिससे जीवन के विभिन्न अपवादों एवं कष्टों का निवारण सम्भव हो सकें।

ज्ञान प्राप्ति की प्रक्रिया

शंकर दर्शन में विभिन्न दु:खों के निवारण एवं ब्रह्म ज्ञान की प्राप्ति हेतु साधन चतुष्टय का वर्णन है। ज्ञान प्राप्ति की प्रक्रिया में इन चार साधनों से युक्त होना चाहिए– पहला साधन है नित्यानित्य वस्तु का विवेक अर्थात् ब्रह्म ही केवल नित्य है, इससे भिन्न समस्त पदार्थ अनित्य हैं इसका विवेक ही जगत् और ब्रह्म के बीच भेद, शरीर और आत्मा के बीच भेद, साधन और साध्य के मध्य भेद तथा आत्मा–परमात्मा की एकता आदि विवेकों का इसके अन्तर्गत समावेशित हैं। दूसरा साधन – इहामुत्रफलभोग विराग: अर्थात् यह जगत् अनित्य या मिथ्या है। इस लोक की वस्तुएँ भी असत्य हैं, भोग विलास संबंधी सभी पदार्थ अनित्य हैं, यह भाव सांसारिक वस्तुओं से घृणा उत्पन्न करता है और यही विराग है। ''**द सिस्टम ऑफ वेदान्त**'' में वर्णित डा. डायसन की दृष्टि में यह भारतीय चिन्तन की सच्चाई का प्रमाण है। उनके विचार से दार्शनिक साधना तभी तक सार्थक

है जब तक मानव भौतिक फलाकांक्षा को त्याग कर उसमें लीन है, वह ऐसी सीढ़ी है, जो हृदय की आशा आकांक्षाओं से ऊपर उठकर शुद्ध अध्यात्म भाव तक पहुँचा सकती है। अतः नित्यानित्य विवेक के पश्चात् तृष्णा का त्याग आवश्यक है। तीसरा साधन है – शम, दमादि साधनअष्ट् सम्पत्ति–शम अर्थात् मन की एकाग्रता, दम अर्थात् कर्मेन्द्रियों एवं ज्ञानेन्द्रियों पर नियंत्रण, उपरति अर्थात् यज्ञादि कर्मों का त्याग करके आत्मज्ञान के अंगभूत संन्यास को स्वीकार कर लेना और बाह्य विषयों का आश्रय न लेना। तितिक्षा अर्थात् सर्दी–गर्मी, मान–अपमान, चिन्ता और शोक से रहित दुःखों एवं कष्टों को बिना कोई प्रतिकार किये सहन करना। समधान अर्थात् वशीभूत मन को श्रवण मनन में लगाना, तदनुकूल चिन्तन करना, बुद्धि को सब प्रकार शुद्ध ब्रह्म में स्थिर रखना एवं गुरू सुश्रुषा आदि समाधान है। श्रद्धा अर्थात् गरु और वेदान्त सम्बन्धी वाक्यों में अटूट विश्वास और चतुर्थ साधन है मुमुक्षा अर्थात् मोक्ष प्राप्त करने की इच्छा।

उपरोक्त साधनों की प्राप्ति के उपरान्त साधक को लक्ष्य प्राप्ति हेतु दृढ़संकल्प होना चाहिए, क्योंकि बिना संकल्प के अध्यवसाय नहीं होता और अध्यवसाय के अभाव में लक्ष्य प्राप्ति सम्भव नहीं हो सकती। अतः इन समस्त साधनों से सम्पन्न साधक गुरु के शरण में जाता है तथा गुरु अध्यारोप एवं अपवाद विधि से ब्रह्मोपदेश देता है। अध्यारोप अर्थात् वस्तु में अवस्तु का आरोप, रस्सी में साँप का आरोप या ब्रह्म में जगत् का आरोप दर्शाते हुए तार्किक क्रम से अपवाद विधि द्वारा क्रमशः सभी आरोपित वस्तुओं का निराकरण करते हुए (ब्रह्म वस्तु हो जाता है, जगत् अवस्तु) वस्तु अर्थात् सत्य का दर्शन कराता है। इस विधि में युक्तियों एवं तर्कों का महत्व है। शरीर के अन्नमय, प्राणमय, मनोमय, विज्ञानमय एवं आनन्दमय कोषों ने आत्मा को आरोपित कर लिया है। अनुभव, ज्ञान, युक्ति और तर्क द्वारा गुरु आत्मा के इन आरोपों का निराकरण करके शिष्य को निर्गुण, निर्विकार, अखण्ड, अद्वितीय आत्मा का बोध कराता है।

शिष्य ज्ञान प्राप्ति की इस प्रक्रिया में श्रवण, मनन, निदिध्यासन इन तीन साधनों का अनुसरण करता है। श्रवण अर्थात् सुनना, मनन् अर्थात् शब्द ज्ञान का तर्कपूर्ण विचार करना एवं निदिध्यासन अर्थात् ध्यान द्वारा आध्यात्मिक अनुभव का रूप धारण करना है, क्योंकि गुरु से श्रुति निहित ब्रह्मज्ञान का उपदेश श्रवण कर लेना ही पर्याप्त नहीं है। गुरु शब्द–ज्ञान द्वारा केवल शिष्य का पथ प्रदर्शन कर सकता है किन्तु उस पथ पर गमन

साधक को स्वयं करना होता है। अत: शब्द ज्ञान को श्रवण करने और श्रुति के वाक्यों का निरन्तर तर्क समवेत परायण करने से उसका अर्थ मनोगत होता है। निरन्तर मनन से शब्द प्रत्यय का रूप ग्रहण करते हैं तथा बुद्धिनिष्ठ होते हैं और निरन्तर निदिध्यासन (ध्यान) करने से वह बुद्धिनिष्ठ प्रत्यय आध्यात्मिक अनुभवों का रूप धारण करता है। निदिध्यासन के लिए मन को एकाग्र करने की आवश्यकता है जो संयम के बिना सम्भव नहीं है। इसके लिए वेदान्त में तीन नैतिक गुणों प्रमुखता दी गयी है– सन्यास गुण, सामाजिक गुण और मौलिक गुण। शौच, उपशम, त्याग, तप और क्षमा ये पाँच सन्यास के प्रधान गुण हैं। शौच भी दो प्रकार के होते हैं यथा– आन्तरिक और बाह्य। जलादि द्वारा शारीरिक इन्द्रियों की पवित्रता बाह्य शौच है तथा मोह, राग, द्वेष, ईर्ष्या आदि आन्तरिक मलों का निवारण आन्तरिक शौच है। शौच से उपशम की प्राप्ति होती है, यह भी दो प्रकार का होता है, यथा – बाह्य इन्द्रियों का उपशम दम और अन्त:करण का उपशम शान्ति कहलाता है। इस उपशम से ही त्याग, तप, तितिक्षा (क्षमा) आदि गुणों का विकास होता है। ये उपर्युक्त सन्यास गुण सामाजिक पक्ष में स्वत: अभिव्यक्त होते हैं और सामाजिक गुणों में परिवर्तित होकर यह सन्यास गुण मौलिक गुणों के रूप में पर्यवसित होते हैं जो छात्र के श्रेष्ठतम् नैतिक चरित्र का निर्माण करते हैं। वही छात्र के आध्यात्मिक साधना की सुदृढ़ नींव है। पवित्रता, विनयशीलता, अहिंसा, सन्तोष, अभय, सौहार्द, सत्य आदि मौलिक गुण हैं।

पाठ्यक्रम

अद्वैत सिद्धान्त के प्रतिपादन के लिए आचार्य तीन सत्ताएँ स्वीकारते है – प्रतिभासिक सत्ता, व्यावहारिक सत्ता और परमार्थिक सत्ता। प्रतिभासिक सत्ता के अन्तर्गत वे विषय हैं, जो क्षणमात्र के लिए प्रकट होते हैं। प्रतीतिकाल में ये सत्य प्रतिभासित होते हैं, किन्तु वास्तविक जाग्रत अवस्था के अनुभवों से बाधित होते हैं अर्थात् वास्तविक ज्ञान होते ही इनका विरोध हो जाता है। इस दृष्टि से स्वप्न जगत् की अनुभूति, कल्पना, भ्रम आदि महत्वपूर्ण हैं। व्यावहारिक सत्ता के अन्तर्गत वे विषय वस्तु एवं पदार्थ हैं, जो व्यावहारिक जगत में दिखाई देते हैं और परिवर्तनशील हैं। जैसे नित्य प्रति के व्यवहार में आने वाली वस्तुएं, घटनाएं जो सांसारिक व्यवहार के लिए सत्य हैं, आवश्यक हैं और ब्रह्म ज्ञान होने पर वे असत्य हो जाती हैं, अर्थात् समग्र रूप से सत्य नहीं हैं। आचार्य ने परमार्थिक सत्ता उसे माना है, जो तीनों कालों में समान रूप से विद्यमान रहती है। वह एकान्त,

सत्य, शाश्वत, अखण्ड, अद्वितीय, एक रस, सच्चिदानन्द स्वरूप परमब्रह्म है।

आचार्य की दृष्टि से पाठ्यक्रम ऐसा होना चाहिए जिसमें इन तीनों प्रकार की सत्ताओं से सम्बद्ध विषय हो - मनोविज्ञान हमें भ्रम, मतविभ्रम, कल्पना व स्वप्न की बात बताता है जो प्रतिभासिक सत्ता है। भूगोल, इतिहास, नागरिकशास्त्र, विज्ञान, वाणिज्य, गणित, अर्थशास्त्र, समाजशास्त्र, औद्योगिक एवं प्राविधिक विषयों की शिक्षा व्यावहारिक सत्ता से सम्बद्ध है। किन्तु यही अन्तिम शिक्षा नहीं है बल्कि छात्रों के पूर्ण विकास हेतु, परमार्थिक सत्ता-साहित्य, दर्शन, कला, धर्म आदि विषयों से परिचय करना आवश्यक हैं, जो सम्पूर्ण व्यक्तित्व (शरीर, मन, आत्मा) का विकास करें।

शिक्षक

चूँकि शिक्षा प्राप्ति हेतु गुरु का सहयोग अनिवार्य है। अतः आचार्य का विचार है कि गुरु या अध्यापक का व्यक्तित्व एवं चरित्र, भाषा, व्यवहार, रहन-सहन के सन्दर्भ में अनुकरणीय होना चाहिए, क्योंकि शिष्य प्रत्यक्ष या परोक्ष रूप से गुरु का ही अनुकरण करता है। अतः शिक्षक स्वस्थ मन वाला, संयमी, निर्लोभी, निर्व्यसनी, ब्रह्मज्ञानी व पूर्ण काम होना चाहिए। जो बालक के व्यक्तित्व का समादर करते हुए उसे आत्मवत समझे।

बालक

अद्वैत वेदान्त के अनुसार प्रत्येक बालक अनन्त ज्ञान और अनन्त शक्ति का भण्डार है। कर्मजनित फल के कारण उनमें शारीरिक, मानसिक, बौद्धिक एवं ऐन्द्रिक आदि विभिन्नताएँ परिलक्षित होती हैं। ये विभिन्नताएं मुख्य रूप से बालकों के तटस्थ लक्षण हैं, उनके स्वरूप लक्षण नहीं। शिक्षक को ज्ञान की वृद्धि के साथ-साथ विभिन्नताएँ शनैः शनैः अल्प प्रतीत होती हैं। और जब अध्यापक पूर्णता की स्थिति को प्राप्त कर लेता है तो सभी विभिन्नताएँ तिरोहित हो जाती हैं मात्र एकता शेष रह जाती है।

शंकराचार्य ने चेतना की चार अवस्थाएं प्रस्तुत की हैं - जाग्रत, स्वप्न, सुषुप्ति, तुरीयावस्था। जाग्रत अवस्था में व्यक्ति इन्द्रियों एवं मन की सहायता से पदार्थों का अनुभव करता है। 'अहम् अस्मि' मैं हूँ। इस प्रकार अपनी सत्ता की अनुभूति होती है, अर्थात् जाग्रत अवस्था में आत्मा की सत्ता है। स्वप्नावस्था में इन्द्रियाँ निष्क्रिय हो जाती (सोती) हैं तथा केवल मन ही सक्रिय अवस्था में रहता है और अपने संसार की सृष्टि स्वयं कर लेता है, इसमें भी आत्मा का अस्तित्व है। सुषुप्ति या निद्रावस्था में इन्द्रियाँ

सो जाती हैं, मन भी कार्य करना बन्द कर देता है, किन्तु चेतना क्रियाशील हो जाती है। जागने पर यह स्मृति बनी रहती है कि नींद अच्छी तरह आयी। इस अवस्था में भी आत्मा के अस्तित्व में सन्देह नहीं, अत: इसे मुक्तावस्था नहीं माना जा सकता। अन्तिम अवस्था तुरीयावस्था होती है जो समाधि की स्थिति होती है जिसे प्राप्त कर लेने पर व्यक्ति शरीर, मन, बुद्धि आदि से ऊपर उठकर संसार से विरक्त और मोक्ष की ओर उन्मुख होता है।

शिक्षण विधि

उपरोक्त चार अवस्थाओं के आधार पर बालक के व्यक्तित्व को समझते हुए शिक्षा व्यवस्था की जानी चाहिए और बालक के शरीर, मन, बुद्धि आदि के द्वारा अन्तिम अवस्था तक व्यक्तित्व का विकास करना चाहिए। चूँकि वेदान्त के अनुसार रुचि एवं क्षमता के आधार पर छात्र तीन प्रकार के होते हैं - उत्तम, मध्यम और निकृष्ट। उत्तम छात्रों के लिए वेदान्त में ज्ञान का विधान है। मध्यम छात्रों के लिये उपासना एवं निकृष्ट छात्रों के लिए कर्मकाण्ड का विधान है। आवश्यकतानुसार आचार्य ने ज्ञान केन्द्रित, उपासना केन्द्रित, क्रिया केन्द्रित तीन प्रकार की शिक्षण विधियों को महत्व दिया जो कर्मकाण्ड, ज्ञानकाण्ड एवं उपासना काण्ड पर आधारित है।

मनुष्य जन्म से अपूर्ण होता है, ज्ञान के द्वारा ही उसमें पूर्णता आती है। ब्रह्म स्वरूप परमात्मा की सत्ता में आध्यात्मिक, अधिदैविक और अधिभौतिक तीनों शक्तियाँ विद्यमान हैं। इसी क्रम से प्राणी के भी तीन भाव होते हैं – अधिभौतिक शरीर, अधिदैविक मन और आध्यात्मिक बुद्धि इन तीनों के सामंजस्य से ही मनुष्य में पूर्णता आती है। मनुष्य को अधिभौतिक शुद्धि कर्म के द्वारा, अधिदैविक शुद्धि उपासना के द्वारा और आध्यात्मिक शुद्धि ज्ञान के द्वारा प्राप्त होती है। आध्यात्मिक शुद्धि प्राप्त होते ही परमात्मा के स्वरूप की उपलब्धि हो जाती है, मोक्ष मिल जाता है, यही ज्ञान की सर्वश्रेष्ठता का सम्पूर्ण परिचय है।

अनुशासन

अद्वैत वेदान्त में अनुशासन को महत्वपूर्ण माना गया है। अत: शिक्षोपदेश द्वारा बालक की प्रकृति में संस्कार लाकर उसे अनुशासित बनाना प्रमुख ध्येय है। इस दृष्टिकोण से बालक के प्रकृति की चार अवस्थाएँ बताई गयी हैं– क्षिप्ता, मुधा, विक्षिप्ता, एकाग्रता।

क्षिप्ता अवस्था अन्तःकरण की चंचलावस्था है। बालक का ध्यान किसी कार्य अथवा अध्ययन में नहीं लग पाता। विक्षिप्त अवस्था अध्ययन हेतु, सबसे प्रतिकूल और अनुशासन की दृष्टि से निम्नतम स्थिति होती है। इसमें छात्र की इन्द्रियों का ह्रास होता है, वह प्रायः इन्द्रियों को सुखद लगने वाला कार्य करता है, क्योंकि उन पर उसका नियंत्रण नहीं होता। 'स्व' तथा 'अत्व' के मध्य की स्थिति मुधावस्था कहलाती है। जिसमें वह स्वेच्छापूर्वक अध्ययन में रत रहता है किन्तु अल्पकालिक ध्यान होता है, क्योंकि इन्द्रियों की शक्ति उसे बरबस ही अपनी ओर आकर्षित करती रहती है। चौथी अवस्था एकाग्रता की होती है, जिसमें इन्द्रिय मन बुद्धि आदि सब पर आत्मा का नियंत्रण होता है। व्यक्ति अपने आपका नियामक और नियन्ता होता है। अनात्म के तत्व उस पर हावी नहीं होने पाते, वह सहज ही सत्यम्-शिवम्-सुन्दरम् से युक्त हो जाता है, यही स्थिति अनुशासन की उच्चतम स्थिति कहलाती है। वास्तव में आत्मानुशासन ही अनुशासन है। अतः एकाग्रता तक पहुँचने के लिए अनुशासन आवश्यक है जिसकी प्राप्ति योगाभ्यास द्वारा होती है। क्योंकि प्रथमावस्था में बालक इन्द्रियों का दास रहता है, दूसरी अवस्था में सीमित रूप से इन्द्रियों के नियंत्रण में सफल होता है, तीसरी अवस्था में एकाग्रता बढ़ जाती है और चौथी अवस्था में वह स्वयं नियामक व नियन्ता बन जाता है।

वर्तमान शिक्षा में उपादेयता

अद्वैत अर्थ और काम का विरोधी नहीं है, परन्तु इन्हीं को मानव जीवन का चरम लक्ष्य नहीं स्वीकरता, वह इन्हें साध्य नहीं साधन के रूप में महत्व देता है। चूँकि आज मानव जीवन को सर्वांग सम्पन्न बनाने के लिए 'आत्म दर्शन' की आवश्यकता है। अतः दार्शनिक व्यवस्थापन तथा आत्मदर्शन का संदेश अद्वैतवादी शिक्षा व्यवस्था द्वारा ही चरितार्थ किया जा सकता है। मानव ही क्या पशु-पक्षी, कीट-पतंग सभी जीवों में वही आत्मन् अखण्ड रूप से परिव्याप्त है। इस भावना के हृदय में आते ही मनुष्य के जीवन का दृष्टिकोण तथा व्यवहार दोनों बदल जाते हैं, प्राणिमात्र का सुख-दुःख उसका अपना हो जाता है, आज के भौतिकवादी मानव को इसी की आवश्यकता है।

मानवीय दृष्टिकोण तीन प्रकार के होते हैं - भौतिक, आध्यात्मिक एवं निर्गुणी- एक ओर भौतिक दृष्टिकोण लघु है, तुच्छ है, पार्थिव है, हेय है तो दूसरी ओर निर्गुणी दृष्टिकोण ब्रह्मलीन परमसिद्ध महात्माओं का उच्चस्तरीय दृष्टिकोण है, जो सामान्य

जन के लिए दुर्लभ है। अतः व्यावहारिक विचार से आध्यात्मिक दृष्टिकोण समाज में लाना सरल एवं आवश्यक है। इसी के आरोपण से समाज में सुव्यवस्था, सुख एवं शांति आ सकती है। अतः आज देश को लौकिक, विज्ञानपरक तकनीकी प्रगति के साथ आत्मविकास हेतु आध्यात्मिक शिक्षा की भी आवश्यकता है। यदि भौतिक प्रगति आत्म विकास में बाधक है तो वह व्याज्य है, जबकि वर्तमान समाज के पदस्थ कर्णधार शिक्षा में विज्ञान, उद्योग, तकनीक को प्रमुखता देकर रोजगारपरक बनाना चाहते हैं। वे शरीर, इन्द्रिय एवं सहज प्रवृत्तियों के प्रशिक्षण पर बल दे रहे हैं। भौतिक समृद्धि को लक्ष्य बनाकर उसी के प्रकाश में देश के सुधार का दिवास्वप्न देख रहे हैं जबकि अद्वैतवादी पद्धति नैतिक, आध्यात्मिक एवं नवजागरण को प्रमुख लक्ष्य बनाता है दर्शन केन्द्रित तथा दर्शनाभिमुखी शिक्षा का प्रबन्ध करता है। चूँकि भौतिक शिक्षा अविद्यामूलक है और आत्मशिक्षा विद्यामूलक है, अतः आध्यात्म शिक्षा को केन्द्र बनाकर भौतिक शिक्षा देने की व्यवस्था करता है, ताकि जीवन के प्रति आदर्शवादी दृष्टिकोण का उन्मेष हो।

आज शिक्षा के क्षेत्र में आमूल परिवर्तन करते हुए, शिक्षा के बाह्य कलेवर की अपेक्षा उसके अन्तःकरण तथा भावतत्व को प्रभावित करना है। सत्यमेव जयते, योगः कर्म सुकौशलम् आदि आदर्श वाक्यों और सिद्धान्तों को हम अपना आदर्श तो बड़े गौरव से घोषित करते हैं, परन्तु उसकी प्रेरणा और प्रकाश में चलने, उसके अनुरूप अपना तथा छात्रों का जीवन ढालने की चेष्टा नहीं कर रहे हैं। आज जब वैज्ञानिक, भौतिक, आर्थिक वैभव, समृद्धि एवं सम्पन्नता में शिखरस्थ पाश्चात्य देशों की जनता किसी अज्ञात अभाव से अपना जीवन निस्सार एवं खोखला अनुभव कर रही है, वहाँ के बहुतायत संख्या में युवा वर्ग शान्ति प्राप्तार्थ भारत की ओर झुक रहे हैं, ऐसी दशा में यदि भारत स्वयं ही अपनी आत्मसम्पत्ति को विस्मृत कर प्रकृति विजय की दौड़ में शामिल हो जाये तो इससे बड़ी विडम्बना और क्या हो सकती है? अतः देश के नवनिर्माण हेतु शिक्षा के उद्देश्य, शैक्षिक संगठन, पाठ्यक्रम, परीक्षा प्रणाली आदि घटकों में आचार्य शंकर के शिक्षा दर्शन को आधार बनाकर शिक्षा के प्राथमिक, माध यमिक एवं उच्च सभी स्तरों पर परिवर्तन उपादेय है।

प्राथमिक स्तर पर शैक्षिक उद्देश्य के रूप में बालकों को शरीर की महत्ता, उच्च मूल्यों की प्राप्ति में साधनात्मक एकता, ऐहिक पदार्थों, सुखों, समृद्धियों का

परिचय देकर उनके माध्यम से महापुरुषों के जीवन एवं आदर्श गुणों का प्रस्थापन किया जा सकता है। इस स्तर पर लौकिक ज्ञान की चर्चा प्रधान रूप में, आध्यात्मिक चर्चा गौड़ रूप में उनके सम्मुख रखते हुए, समाजोपयोगी आवश्यक योग्यताओं का ज्ञान देना चाहिए।

माध्यमिक स्तर पर लोक संग्रह की भावना, समाज कल्याण तथा लोकमंगल की कामना एवं उनकी उदात्त भावनाओं को उत्प्रेरित करने का प्रयास होना चाहिए। साथ ही अर्थ एवं परमार्थ को समकक्ष समायोजित कर बालकों को जीव एवं जगत के सत्य-असत्य का परिचय कराना आवश्यक है।

उच्च स्तर पर छात्रों को जीवन के परम सत्य की पूर्ण अनुभूति एवं उनका सम्यक ज्ञान प्राप्त कराने की चेष्टा होनी चाहिए। उनमें अध्यात्मपरक व्यवहार की पुष्टि भी इस स्तर तक होनी चाहिए ताकि समाज की भौतिक स्पर्धा, राग, द्वेष, अहंकार, दर्प आदि का उन्मूलन हो सके। उनमें यह दृढ़ भावना विकसित हो कि धनवर्धन की अपेक्षा गुणवर्धन आवश्यक है।

वास्तव में शंकराचार्य का शिक्षा दर्शन भारतीय चिन्तन धारा का चरमोत्कर्ष है। यह मानव को अपने इष्ट ब्रह्म से एकात्म भाव का ज्ञान कराकर आत्मिक शान्ति प्रदान करता है एवं आज के भौतिकवादी युग में जगत की नश्वरता और ब्रह्म की सत्यता का ज्ञान कराता है। समस्त प्राणियों में एक ही ब्रह्म का निवास है, अतः बाह्य रूप से भिन्न होते हुए भी सभी समान हैं, यह भाव मानव एकता का आधार प्रस्तुत करता है।

आचार्य द्वारा इंगित शारीरिक, मानसिक, बौद्धिक, नैतिक, चारित्रिक विकास के माध्यम से मोक्ष की प्राप्ति का लक्ष्य आधुनिक शिक्षा को प्रमुख देन है। यही कारण है कि आचार्य द्वारा प्रतिपादित पाठ्यचर्या में आध्यात्मिक क्रियाओं के महत्व को आधुनिक युग में भी स्वीकारा जा रहा है और देश के प्रतिष्ठित शिक्षण संस्थान अपने पाठ्यक्रमों में योग को स्थान दे रहे हैं, क्योंकि योग साधना ही आधुनिक तनावपूर्ण जीवन में शान्ति प्रदान करने में सक्षम है। श्रवण, मनन, निदिध्यासन जैसी शिक्षण विधियाँ स्व शिक्षा की प्रमुख विधि हैं जो स्वाध्याय पर बल देती हैं। आधुनिक युग में पत्राचार, शिक्षा, दूरस्थ शिक्षा आदि के क्षेत्र में इन विधियों का प्रयोग करके छात्र लाभावित्त हो सकते हैं। अनुशासन के सदंर्भ में आचार्य का आत्मानुशासन सम्बन्धी विचार मनोविज्ञान

की दृष्टि से सर्वश्रेष्ठ है। वास्तव में, मनुष्य को इन्द्रियों के शासन से उठाकर आत्मा के शासन तक ले जाने वाला दर्शन ही मानव की पाशविक प्रवृत्तियों का नाश करके उसे मानव से महामानव बना सकता है।

अत: यदि आचार्य के शिक्षा दर्शन को सार्वभौमिक एवं सर्वकालिक दर्शन कहा जाय तो अनुचित नहीं होगा, क्योंकि वे मानव ही नहीं महामानव थे। आज भी आचार्य का व्यक्तित्व तथा उनके उपदेश भौतिक ताप से संतृप्त एवं आकुल मानव समाज को शान्ति प्रदान करते हैं। इसमें रंचमात्र भी संदेह नहीं कि उनके जीवन, साधना प्रणाली, शिक्षा के आदर्श आदि विविध आयामों का पदानुकरण करके भारत 'श्रेयस और प्रेयस' आध्यात्म पक्ष और व्यवहार पक्ष के बीच सामंजस्य स्थापित कर सकता है। पुन: भारत भूमि नन्दन कानन में परिणत हो सकती है।

सन्दर्भ

पाण्डेय, राजबली; हिन्दू धर्मकोश

श्री शंकराचार्य प्रश्नोत्तरी

श्रीमद् भगवद्गीता, 16/2 शरीरकभाष्य

मिश्र, जयराम; *आदि शंकराचार्य:जीवन और दर्शन*

ओझा, दशरथ; *एकता के देवदूत शंकराचार्य*

पाण्डेय, रामसकल; *विश्व के सर्वश्रेष्ठ शिक्षा शास्त्री*